योगिवर्य—

स्वर्गीय महाराज साहब श्री चतुरसिंहजी

जन्म	साक्षात्कार	मृत्यु
वि स १९३६	वि सं १९७८	वि स० १९८६
माघ कृष्णा १४ सोमवार	पौष शुक्ला २	आषाढ़ कृष्णा ९

॥ श्रीहरिः ॥

निवेदन

श्रीमान् महाराज साहब री तीसरी या पुस्तक भी आपरे सन्मुख हाजिर है। पे'लो भाग परमार्थ-विचार रो छप जावा बाद मालूम पड़ी के महाराज साहब री हाथरो लिखी थकी मूल पुस्तक में और वणीरी नकलां में कुछ गड़बड़ है, तो दूसरा भाग शूं असली पुस्तक रा आधार पर छपावणो आरम्भ कीधो। ईं वास्ते पे'ला भागमें कुछ गड़बडी रे'गई है सो क्षमा करे। दूजी बात या भी है, के पेला भाग री असली पुस्तक पर वरुण देवता री कृपा हे' जावा शूं—भींजजावा शूं, पेंसिल रा अक्षर पढ़वा में भी कठिनता पड़ती ही।

कुछ प्रेमी व्यक्तियाँ रो यो भी विचार व्हियो, के अणीरे साथ 'अनुभव प्रकाश और हृदय-रहस्य' नामक दो पुस्तकां भी छप जावे तो ठीक है। कारण, ई दोई पुस्तकां छोटी है और अलग छपावा में ठीक नी रेवेगा।

अणाँ पुस्तकां में कई विषय है, और कई ढंग है, या बात तो म्हूँ नी के' शकूंगा। कारण, म्हारा जश्या मन्द बुद्धि वाला और नन्याणूँरा फेर में पड्या थका आदमी रे वास्ते तो जाणे भैंस रे सामने तंदूरो बजावणो है। अणाँ पुस्तकां रो सार तो 'काला री गत कालो जाणे' अणी कहावत रे अनुसार महाराज साहबरा परम भक्त तथा श्रद्धालु मनुष्य ही ज जाण शके है। म्हने तो केवल सेवा रो काम सोंप्यो गयो है, सो काली गे'ली चाकरी कर रियो हूं। अणी चाकरी में चूक व्हे' गई व्हे' तो दयालु गण क्षमा करे।

अणां पुस्तकां रो मिलान करवा में और प्रूफ वगेरा देखवा में ख़ास कर परिश्रम बाबू साहब श्री मदनलालजी राठी तथा डाक्टर साहब श्रीबसन्तीलालजी महात्मा रो है। यदि आप दोई जणां परिश्रम नी करावता तो पुस्तकांरा दर्शण अतरा जलदी व्हे' शकता के नी, अणी में संदेह हो। अतः दोई जणां धन्यवाद रा पात्र है।

महाराज साहब री सब पुस्तकां परम दयालु, विद्या-प्रेमी, और कुलरा कीर्तिरक्षक श्री·······जी हुजूर रा प्राइवेट खर्चा शूं छप री' है और एक फण्ड कायम फरमाय दीधो है, सो ज्यूं ज्यूं पुस्तकां छप, ने विकती जावेगा, आगेरी पुस्तकां निकाळवा रो विचार कोधो

जावेगा। ईं वास्ते महाराज साहब रा श्रद्धालु भक्तां शूं म्हारी सविनय प्रार्थना है, के जतरी जल्दी और जादा अणाँ पुस्तकां ने खरीदोगा, वतरी ही जल्दी बाकी पुस्तकां रा भी दर्शण कर शकोगा। अब पुस्तकां छपावणी, नी छपावणी यो आप लोगां रो काम है।

आपरो सेवक—

गिरिधरलाल शास्त्री
सम्पादक

ब्रह्मपोल दरवाजा
उदयपुर
आषाढ़ शुक्ला १ सं० १९९१

॥ श्रीहरिः ॥

परमार्थ विचार

पे'लो भाग

(१)

आकाश शूँ वायु, वायु शूँ अग्नि, अग्नि शूँ जळ, जळ शूँ पृथ्वी उत्पन्न व्हिया, अणी रो प्रत्यक्ष प्रमाण यो है, के वायु आकाश विना नी रेवे, अग्नि वायु विना नी रेवे, जळ अग्नि विना नी रेवे (कड़ा व्हे' जाय पत्थर भी बरफ रा व्हिया शुण्या है) ने पृथ्वी जळ विना नी रेवे ॥

(२)

बड़ा बड़ा पर्वत आदि जणी में दीखे सो ही महादर्पण है, ने जणी में सब प्रति बिम्बित व्हे' रिया है, सो ही श्री परमेश्वर है ।

(३)

इच्छा रो नी ऊठणो मोक्ष है, ने अणी रो विस्तार ही बन्धन है।

(४)

एक वस्तु में भी अनेकता, बुद्धि यूँ व्हे' शके है। यथा रंगपणा में अनेक रंग, फेर वाँरा संयोग रा अनेक नाम के' है। मनुष्याँ में, ने पार्थिव वस्तुवाँ में पृथ्वी एक व्हेवा पे, भी मनुष्य आदि जीव, कपड़ा, तन्तु, वणाँरा भी तन्तु, यूँ असंख्य भेद व्हे' शके है, सो केवल बुद्धि रो हीज भेद है। अनेकता कुछ भी नी है, जतरो विस्तार करो वतरो व्हे' शके है। परन्तु समावेश भी एक रो एक में व्हे' शके है। ज्यूँ-आकाश में सब वस्तु रो।

(५)

अहंकार हीज सब वस्तु रो कारण है। जीव अणी यूँ हीज अविद्या में पड़्यो है। यो हीज सब अनर्थ रो कारण है, परन्तु अणी रो ठीक तरे' यूँ पतो चलायो जाय, तो कठे ई नी लागे, अणी ने मिटावणो चावे।

(६)

जीव में शरीर है, शरीर में जोव री भ्रान्ति है। स्वप्न-शरीर में ज्यूँ जीव रो भ्रान्ति है। वास्तव में स्वप्न शरीर ई शरीर में जीव है, वणी में है ?

(७)

प्र० अहंकार कई वस्तु है ?

उ० अग्नि पे धूँआँ जाँ तरे' कई वस्तु नी है, अग्नि शूँ प्रगट है, विना अग्नि रे रे' नी शके है, ने अग्नि तो धूआँ विना भी रे' है, गीता में—

धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च ।
यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम् ॥ अ. ३ श्लो. ३८

(वासदी ने धुँओ ढाँके, ज्यूँ ढाँके रज आरसी ।
चामड़ो गर्भने ढाँके, यूँ ई ने ढाँकियो अणी)

गीताजी रा ई श्लोक भी याद राखवा योग्य है।

काम एषः क्रोध एषः रजोगुणसमुद्भवः ।
महाशनो महापाप्मा, विध्येनमिह वैरिणम् ॥ अ. ३ श्लो. ३७
यतो यतो निश्चरति मनश्चञ्चलमस्थिरम् ।
ततो ततो नियम्यैद मात्मन्येव वशं नयेत् ॥

(काम यो, क्रोध भी यो ही, यो रजो गुण शूँ व्हियो ।
. महाभूखो महापापी, ई ने वैरी विचार थूँ ।
थिरता छोड़ने जावे, जीं जीं पै मन चञ्चल ।
आपरे माँय ले आवे, वीं वीं में शूँ समेट ने ॥

दोहा—झूठे घर को घर कहे, सांचे घर की गोर ।
म्हें जावा घर आपणे, लोग मचावे शोर ॥

(८)

सब प्रकार शूँ सर्व आन्दकारी सब समय में श्री ईश्वर रा नाम रे समान कोई उत्तम साधन नी है । ईं रा स्मरण करवा में यदि चित्त अठी रो उठी भमतो फिरे, तो घबरावणो नी, बराबर स्मरण कर्याँ जाणो, ने विचार यो करणो के नाम स्मरण कर रियो हूँ । यदि चित्त नी ठे'रे तो पाछो नाम पे धीरे धीरे लावणो, महाआनन्द प्राप्त व्हे' । अणी री महिमाँ में श्री गोस्वामीजी महाराज तुलसीदासजी आज्ञा करे है—

कहहुँ कहाँ लगि नाम बड़ाई ।
राम न सकहिं नाम गुण गाई ॥

(निजकृत दोहा)

सब साधन सों सरल अरु, सब सों उत्तम जान ।
सब हीं सों अति कठिन है, सुमिरण श्री भगवान ॥

प्रथम जिव्हा शूँ, पछे कंठ शूँ, यूँ क्रम क्रम शूँ मानसिक पे आवणो। मनुजी लिख्यो है, के वाचनिक, उपांशु, ने मानसिक, अणां में उत्तरोत्तर विशेष है।

पातञ्जल योग सूत्र में प्रथम पाद रा २३, २८, २६, ३०, ३२, ४४, ४५ वाँ सूत्र अणाँ वाताँरा प्रतिपादक है।*

वेद पुराण सब ही एक मत व्हे' ने या वात केवे है। कोई प्रणव (ओंकार) कोई राम, कोई कृष्ण, कोई शिव, अथवा युगल सीताराम, ने शिवपार्वती आदि रो प्रतिपादन करे है। पण वास्तव में लक्ष्य एक है। घणा खरा ठग होठ हलाचा रो मा'वरो करे, कतराक री माळा पे आँगळ्याँ दोड़वा लाग जावे। परन्तु स्मरण व्हे' णो चावे। स्मरण व्हेवा पे शून्य नाम जपे वाँने भी अनुभव व्हे' है। यदि नाम शूँ अणी जनम

---

*ई रे वास्ते बलवन्त राव ग्वालियर कृत मुक्ति द्वार निदर्शन, श्रीकृष्ण चैतन्यजी महाप्रभु कृत शिक्षामृत, तथा श्री सनातन गोस्वामीजी महाराज कृत श्री भद्भागवतामृत रो द्वितीय खण्ड दर्शनीय है। ..

में अनुभव नी व्हे' या वात कोई विचारे, तो वणी ने या भी विचारणी चावे, के ईश्वर अथवा ईश्वरीय वस्तु केवल तर्क प्रतिपादित नी है, करवा शूँ खवर पड़ेगा। सूर्य पश्चिम में ऊगे तो भी नाम प्रत्यक्ष प्रभाव वतायाँ विना नो रे' है। या वात सब, अधिकारी ने केवा री है, जो करे। दुष्ट वकवादी ने नी के'णी। जन संसर्ग (घणो मिलणो) ने अति भोजन, नाम में विघ्न करवा वाळा है, ने मिताहार (अंदाज रो भोजन) रो साधन करने ईश्वर ने जपणो।

(ऊपरला लेख रे सिवाय अब परमार्थ रो विषय कई नी है, परन्तु तो भी मन ने समझावा रे वास्ते गौण लिख्या जाय है, अथवा अणी रा हीज प्रतिपादक है।)

(९)

संसार मिथ्या है, अणी संसार में, ने स्वप्न में कोई अन्तर नी है, केवल जणी जगा' यो दीखे, तो सपनो दीखे, अणी में सत्य प्रतीति व्हे' गई। णी में असत्य प्रतीति जठे व्ही, वा ईश्वर छुड़ावे, तो सहज छूटे। सब वणी री लीला (माया) है:—

नट कृत विकट कपट खगराया ।
नट सेवक हिं न व्यापे माया ॥
(श्री राम चरित्र मानस)

(१०)

पुस्तक ध्यान शूँ वाँचणी, जो प्रसंग वाँच्यो जाय, मानो आपाँ देखरियाँ हाँ ।

(११)

यदि नाम, श्री सगुण ब्रह्म रो जप्यो जाय, ने चित्त चॅचलता करे, तो वणी ने ईश्वर री लीला री आड़ी (तरफ़) लावणो, सो वो वणी में लाग, पाछो नाम पे आय जावेगा । अथवा ध्यान में लगाय ने स्मरण करणो । ध्यान पूरो नी आवे तो एक अंग रो करणो । तो भी दर्शण नी व्हे', तो चित्त ने जश्यो रूप वणी रे ध्यान में आवे, वणी पे ही ठे'रावा री कोशीश करणी, अथवा चित्र सनमुख पधराय ने एकटक दृष्टि जमावा रो अभ्यास करणो । वणी वगत आँख्याँ तो वठी रेवे ने चित्त दर्शण करवा शूँ हटे, तो या तो पाछो वठे हीज लगावणो या स्मरण में लगावणो । स्मरण

शूँ हटे तो दर्शण में लगावणो, अथवा आपाँ रा उपास्य देवता रो रङ्ग ध्यान में राखणो। यो हठ योग रो उपाय "त्राटक" है, सो सावधानी शूँ करणो चावे। मगज कमजोर व्हे' वणी ने कम करणो चावे। ब्रह्मचारी उत्तम, ईं ने हठ पूर्वक कर शके है। निर्गुण ब्रह्म रो नाम जप्यो जाय, तो वणी रा विशेषण री आड़ी चित्त लगावणो, चञ्चलता करे तो वेदान्त विचारणो। सगुण निर्गुण एक है। पे'ली सगुण उपासना होज ठीक है. पछे स्वतः निर्गुण ने पछाण लेगा। केवल अधिकारी रो भेद है—

अलख अरूप अखिल अज जोई।
भक्त प्रेम बस सगुण सो होई॥
जल हिम उपल बिलग नहिं जैसे।

(राम चरित मानस)

(१२)

स्मरण दृढ़ता पूर्वक करणो, घबरावणो नी ने कम बोलणो।

(१३)

श्री नाम ने हरताँ फिरताँ स्मरण राखणो,

त्राटक रो अधिकारी नी व्हे' वणी ने ध्यान यूँ करणो चावे।

श्री आराध्य प्रभु रो चित्र सन्मुख आँखाँ बराबर कणी रे ई ऊपर थोड़ीक छेटी पधराय, प्रेम शूँ दर्शण करणा, फेर झट आँख बन्द कर ध्यान करणो, ध्यान में शूँ स्वरूप निकळे. ने पाछी आँख खोल झट दर्शण कर, बन्द कर. फेर ध्यान करणो, यूँ वार वार करणो, पछे आँखाँ ने वतरी देर बन्द राख, ध्यान रो अभ्यास करणो, आँखाँ बन्द करवा शूँ एक दाण ध्यान व्हे' झट निकल, पाछो ध्यान आय जाय है। फेर हरताँ फिरताँ हर समय नाम रूप स्मरण करणो।

(१४)

अथवा मुख शूँ कृष्ण नाम रो उच्चारण करणो, वणी रे साथे मन में राम के'णो।

(१५)

स्मरण शूँ मन शूनो व्हे' तो यथारुचि नवधा भक्ति में लगावणो, पण विषय री आड़ो नी जावा देणो।

(१६)

म्हने यो विचार महा कठिन बिमारी व्हीं, जदी लिख्यो। बिमारी कोई कुपेच शूँ व्हे' गई, सो खाँसी रा सबब शूँ ईंरो साधन नीं कर शक्यो। परन्तु जो एक भी उत्तम वार्ता दृढ़ता शूँ अणी री अंगीकार करेगा, उभय लोक सुधरेगा।

(१७)

ब्रह्मचर्य हरेक कार्य में सहायता दे' है अणी रो निर्भाव कुसंगत शूँ बच्याँशूँ व्हे' है।

(१८)

ई साधन मृत्यु समय रोगादिक में कठिनता शूँ व्हे' सो मृत्यु सन्मुख जाण ने तुरन्त आरम्भ कर देणा।

गीत

भज भगवान कूड़ मत भाखे, प्रभु भज्याँ कटे दुख पाप।
बापो साधन हाले बेटा, बेटा साथ न हाले बाप॥
हमलो सोल साथ नहिं हाले, जुदा जुदा व्हे' देह रु जीव।
पीतम साथ न हाले प्यारी, प्यारी साथ न हाले पीव॥

मन थूँ चेत हाथ ले माळा, जाळा जीव तणाँ कट जाय ।
माता साथ न हाले मो भी, मो भी साथ न हाले माय ॥
तज सो काम झाल ई कनरी, राम नाम भज ले दिन रे' न ।
बे'ना साथ न हाले बन्धू, बन्धू साथ न हाले बे'न ॥
पुन्न धरम कियाँ मुगत गत पावे, माठा करम कियाँ जम मार ।
कव कहे दान जगत सो काचो, साँचो राम नाम तँतसार ॥

लक्ष्मी रामजी देशणोक

वेदान्त सिद्धान्त सबको है सार,
मन वस कर हर को भजे, है तन्त सार ।
अन्तरगत न्यारा रहै, धाय खिलावत बाम ।
राम कृपा जब होत है, कब्या जात है राम ॥
भाग बिना भजिये नहीं, भजियाँ आवे भाग ।
तुलसी ऐसे जान के, रहो नाम लव लाग ॥
जींर हते जोहर करे, खावत करे बखाण ।
पाया परतछ देखले, थाळी मॉय मशाण ॥
तीरथ करिया वरत करिया, करि आयो सब धाम ।
दो' रो देख्यो सन्त दास, राम भजन को काम ॥
तीन घड़ी में सन्तदास, सकल विकल व्हे' जाय ।
मानस मरे रोग विपत घन हरे, लोह का ताला टूटे मोह कानी ?

कहा तजे तन को विभौ, मन को विभौ अपार ।
जिन तजियो मन को विभी, त्यागी त्रिभुवान सार ॥

जवारमल कंदोई देशणोक

(१९)

। संसार मिथ्या है, ईश्वर (ब्रह्म) सत्य है, अणी रो प्रत्यक्ष प्रमाण स्वप्न-सृष्टि है। यदि मनुष्य संसार ने सत्य माने और वणी री भावना करे ज्यूँ स्वप्न पदार्थ री भावना सत्य करे तो यो भी संसारवत् सत्य ही दीखेगा, या निर्मल चित्त करवा पर मनुष्य ने निश्चय व्हे' शके है। दीखे भी है, के उन्माद रोगी, नी व्हे' वाँ वाताँ ने भी सत्य माने है। इन्द्रजाळ मेस्मेरीजम में भी यूँ ही है। असत्य सत्य दीखे है। संयम शूँ योगी नवीन अन्तःकरण—विश्वामित्रजी नवीन संसार वणायो यूँ ही—(वणाय शके है?) यो भी है। ईश्वर री इच्छा मात्र है, सो वणी री उपसना शूँ छूट शके ।

(२०)

प्राणायाम भी उत्तम साधन है, वणी में रोगादि व्हे'णो संभव है, परन्तु युक्ति शूँ करे तो सब रोगाँ रो नाश ने परम सुख प्राप्त व्हे'।

(२१)

विषय-सुख आत्मसुख शूँ विशेष नी है। किन्तु आत्मसुख समुद्र ने' विषय-सुख एक कणिका सब संसार में विभाग कर्‌यो है। ज्यूँ—

जो आनन्द सिन्धु सुख रासी।
सीकर तें त्रैलोक्य सुपासी॥

गोस्वामी तुलसीदासजी।

यदि या शंका व्हे', के 'महात्मा लोग भी अणी (विषय) सुख में उलझ्‌या थका हा' या शुणवा में आवे। पाराशर, सौभरि आदि ज्याँने आत्म सुख रो अनुभव हो।

मनुष्य जो काम करे सुख रे निमित्त हीज करे परन्तु ज्यादा करवा शूँ वीं री आदत पड़ जाय, ज्यूँ निद्रा नी आवे जदी नशो करे, फेर आदत पड़ जाय, सो छूटे नी। एक काल (समय) में चित्त दो क्रिया (काम) नी करे। जणी वगत अनेक जन्म रा अभ्यस्त (भोग्या थका) विषय सुख स्वतः (आपो आप) प्रगटे ने आत्मानन्द ने भूल जाय, वणी वगत तुलना (बराबरी) कर-वारी बुद्धि ही नष्ट व्हे' जाय है। ज्यूँ-क्रोध में

भी महात्मा प्रवृत्त व्हिया हा। परन्तु क्रोध में कोई विचारवान् सुख रो अनुभव नी करे। एक तो महात्मा रो कामादि में प्रवृत्त व्हे'णो ईश्वरेच्छा शूँ व्हे' है—

जो सब के रह ज्ञान एक रस ।
ईश्वर जीवहिं भेद कहहु कस ॥
(श्री मानस)

वणा रा प्रारब्ध हीज वणाँ ने प्रवृत्त करे है, परन्तु वी क्षण भर भी अनुभव शूँ नी हटे—

"सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो, यथा कुर्वन्ति भारत ।
कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम् ॥"

(अज्ञानी ज्यूँ करे कर्म, फल में उळझया थका।
लोगांरे वास्ते ज्ञानी, त्यूँ करे उळझ्या विना।)

"हत्वा पि सइमाल्लोकान्नहन्ति न निबध्यते ।"

(वो मारे सबने तो भी, नी मारे नी बँधे कदी।)

फेरजणी समय में नीचा दर्जा रा अनुभवियाँ ने विषय-सुख में आत्म-सुख री स्मृति लुप्त व्हे' जाय, ने पुनः स्मृति व्हेवे जदी वी महा पश्चात्ताप करे है। आशा (इच्छा) री निवृत्ति ही सुख

है, ने सुख में इच्छा थोड़ी देर हळकी पड़े है, परन्तु आत्मसुख में बिलकुल नष्ट व्हे' जाय है, तो आत्मसुख ही ज विशेष व्हियो, या अनुभव सिद्ध है।

(२२)

आत्मा ही आकाश आदि पञ्चमहाभूत व्हे' ने भासे है। वास्तव में पञ्चमहाभूत कई वस्तु नी है। यथा-ज्योति दर्शण रे समय वा हीज ज्योति कणी समय जळ दीखे, पृथ्वी दीखे, मनुष्यादिक भी दीखे, ब्राह्मण भी वणी में दीखे, पण वणी वगत वणी प्रकाश (ज्योति) रा वश्या दर्शण व्हे'णा बन्द व्हे' जाय है। फेर ज्योति रा दर्शण सावधान व्हे' ने करे तो पदार्थ दीखणो बन्द व्हे' जाय है। पदार्थ वीं समय में दीखे, के ज्योति दर्शण करवा में मन गफलत करे। यूँ ही या हीज बात संसार, ने ब्रह्म में पण है। ब्रह्म प्रकाश में जगत दीखे है।

(२३)

जो संसार एक ही नी है, तो मकान रे पड़वा रो आदमी शूँ मिलवा री, वगेरा' प्रथम ज्ञात

किसतरे' व्हे' शके। पुस्तकाँ री पार्सल आवा री प्रथम ही ज्ञात क्यूँ व्हे' है। ❀

(२४)

ब्रह्म यो है, के ज्यूँ निर्मल आदर्श (काच) में सब जगत प्रति बिम्बित दीख रियो है। ब्रह्म एक है, वणी में ही सब चीजाँ रो प्रतिबिम्ब दीखे है। आप ही देखे है, आप ही दीखे है, ने आप पृथक् है।

अनुभव गम्य भजहिं जेहि सन्ता।

(२५)

संसारी प्रेमरो सहज परीक्षा या है, के शास्त्र शूँ अविरुद्ध वणी रो कोई भारो अनिष्ट करताँ व्हाँ' जश्यो वीं ने देखावणो. अथवा एकान्त में बैठ निरन्तर भजन करणो, स्नेही री कोई काम नी करणो, तो भी जो बराबर प्रेम राखे, तो जाणणो के कुछ है। परन्तु मृत्यु रे समय बड़ो

❀ महाराज साहब स्वर्ग वासरे सात आठ दिन पे'लां पुस्तकां मंगावा रे वास्ते एक कागज लिख्यो हो। जणीमें लिख दी दी के, अगर पार्सल फलाणां दिन पे'लां पौंछ शके, तो भेज देवे, वरना नी भेजे। —सम्पादक

भारी प्रेमी भी आपणी कुछ भी सहायता नी कर शकेगा, विशेष तो कई अंगोठा रो दरद भी नी मिटाय शकेगा।

(२६)

हरेक संसार रो काम आसक्ति रहित व्हे'ने करवा शूँ काम नी व्हे'ने व्हे' जाय तो सुख नी व्हे' यो अभ्यास उत्तम है।

"तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर ।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः ॥" गीता ३-१८

(अनासक्त अणो शूँ व्हे' आपणा कर्म थूँ कर ।
ईं'तरे शूँ करे सोही, पावे परम धाम ने ॥)

घणा आदमी अणो ने असम्भव माने, परन्तु—
"अभ्यासेन तु कौन्तेय, वैराग्येण च गृह्यते" गीता ६-३४.

(साधना और वैराग्य, होवे तो मन नी डगे ।)

शुरू में अणी अभ्यास ने भूल तो जाय, फेर याद राख राख, ने करतो जाय। प्रारंभ करतां ही तो सबाँ रे सब ही काम सिद्ध नी व्हे' है। अगर नी छोड़े, तो अवश्य सिद्ध व्हे'शके है। अणी रो माहात्म्य गीताजी में खूब लिख्यो है।

(२७)

ईश्वर ने यूँ याद राखणो, ज्यूँ-कोई भूलवा रा स्वभाव वाळो आदमी जरूरी काम ने याद राखे है। हरेक काम करती वगत भी वणी ने यो हीज ध्यान रेवे के अमुक काम भूल नी जाऊँ, सब शूँ जरूरी बड़ो काम यो हीज है।

हरिःस्मरणम्

जणी तरे' दुश्मण शूँ छळी मनुष्य (ठग) आपणी दुश्मणी मन में राख ऊपर शूँ बड़ी उत्तम वातां करे, ज्यूँ-हीं संसार रो व्यवहार ऊपर शूँ कर अन्तःकरण में स्मरण राखणो, और भी नरा दृष्टान्त केवे है। मुख्य तो यो हीज के दृढ़ता शूँ जो काम कीदो जायगा अवश्य सफल व्हे'गा।

(२८)

शब्द ने अर्थ एक नी है। एक तो मूर्खता शूँ है, सो न्यारा न्यारा जाणणा।

टिप्पणी—२८-शब्द तो ब्यो आपा बोला, थो। ज्यूँ—घड़ो यो शब्द है, ने अर्थ है चीज, ज्यूँ—गारा री बणी थकी चीज—जणी में जळ रेवे है, अर्थात्—'घड़ो' यो शब्द है, ने गारा रो बणयो थको बर्तन यो अर्थ है।

(२९)

"स्वप्ननिद्राज्ञानालम्बनाद्वा" अध्याय १ सूत्र ३८

यो 'पातञ्जल दर्शन' रो सूत्र है। जाग्रत, स्वप्न में चित्तठे'रावणो शूवती समय नाम स्मरण करतां शूवणो, अथवा चित्त री अन्तर्वृत्ति नाम में लगाय पुस्तक शुणणी, वणी समय नाम शूँ चित्त पुस्तक में नीं जावा देणो। अणी शूँ अनेक संकल्प हटने जागृत करे। पुस्तक श्रवण मात्र शूँ संकल्प हटावणो रे'जाय है। वो भी निद्रा शूँ मिट केवल स्मरण हीज-जो अन्तर्वृत्ति में है, रे'जाय। ईं में जो अनुभव व्हेवे, वीं ने जागवा पेली वार वार याद करणो स्वप्न शूँ निद्रा आवे, वणी वगत चित्त ठे'रावणो, दूसरो दर्जो, अर्थात् अणी शूँ कठिन है। परन्तु श्रेष्ठ भी व्हे'गा। क्यूँ के मुनिराज आज्ञा करे है-समाधि प्राप्ति रे वास्ते, जणी शूँ।

(३०)

मनुष्याँ शूँ वाताँ करती समय जो स्मरण कीधो जाय, अथवा सभा में वाताँ व्हे'ती व्हे', जीं समय चित्त स्मरण में लगायो जाय, वो एकान्तरा स्मरण शूँ घणे दर्जे उत्तम है, पण कठिन भी है।

(३१)

एकान्त में संकल्प मिटवा शूँ व्यवहार में संकल्प नी व्हेवा देणा, अर्थात् असंसक्त व्यवहार करणो विशेष है। क्यूँ के संकल्प रो संग्रह, व्यवहार में आसक्ति राख ने करवा शूँ हीज व्हे' है। जतरी आसक्ति शूँ व्यवहार नी व्हे'गा चतरा ही संकल्प प्रबल व्हे'गा।

(३२)

कणी वात रो यूँ नी विचार करणो के 'या, नी व्हे' तो आछो, या व्हे' तो आछो।' कर्त्तव्य कर्म करता रे'णो कठिन है, पण अभ्यास मुख्य है।

(३३)

नर संसारी लगन में, दुख सुख सहे करोर।
नारायण हरि लगन में, जो होवे सो थोर॥

(३४)

"यथा क्रीडोपस्कराणां, संयोगविगमाविह।
इच्छया क्रीडितुः स्यातां, तथैवेशेच्छया नृणाम्॥"

(जणी तरे' शूँ खेलवा वाळा री इन्छा रे अनुसार खेलकणया कदीक मेळा भी व्हे' जाय, ने कदीक न्यारा भी। अणी तरे' शूँ वणी बड़ा खेलवा वाळा (भगवान्) री इन्छा शूँ मनुष्य भी मिलता, ने निछड़ता रेवे है।)

(३५)

"यन्मन्यसे ध्रुवं लोकमध्रुवं वा न चोभयम् ।
सर्वथा हि न शोच्यास्ते स्नेहादन्यत्र मोहजात् ॥"

(अणी संसार ने मनुष्य कोई सत्य समझे, ने कोई असत्य भी समझे। परन्तु ई दोई वातों नी है। मोह शूँ उपज्या थका स्नेह रे सिवाय वणां (महात्मां) रो शोच नी करणो चावे।)

(३६)

"यत्रागतस्तत्र गतं मनुष्यं
स्वयं सधर्मापि शोचत्य पार्थम् ॥"

(जठा शूँ आयो हो, वठे हीज पाछो गया थका मनुष्य ने, खुद भी मरवावाळो व्यर्थ हीं रोवे है। अर्थात् मरवावाला मनख ने लोग व्यर्थ हीज रोवे है। क्यूं के वो तो जठा शूँ आयो हो, वठे हीज गयो, ने आपां ने पण वठे हीज जाणो है। फेर रोवारी कई वात)।

(३७)

"अहो वयं धन्यतमा यदत्र
त्यक्ताः पितृभ्या न विचिन्तयामः ।
अभक्ष्यमाणा अबला वृकादिभिः
स राक्षिता रक्षति यो हि गर्भे ॥"

(अहाहा—म्हां लोग बड़ा ही बड़भागी हां। पिता मावा

म्हांने छोड़ दीधा, तो भी कोई विचार नी है। म्हां, विना सहायता वाळा ने सिंह आदि भी नी खाय शके है। कारण, ऊणी गर्भ में रक्षा की थी, वो हीज अठे भी रक्षा करेगा, ने कर रियो है।)

(३८)

दो बातन को भूल मत, जो चाहे कल्याण।
'नारायण' इक काल को, दूजे श्री भगवान॥

(३९)

चल्यो चल झट जमुना की तीर।
जग के द्वन्द्व मन्द क्यों झेले, ले'ले'लोभ अधीर।
श्याम सुजान विना को हरि हैं, भारी भव की भीर॥
यह आयुष दिन ही दिन छीजे, छिन २ लटत शरीर।
जहाँ रहत राधा महारानी, अरु सब रहत अहीर॥
वंशी वट पे जहाँ विराजे, नटवर श्याम शरीर।
चल्यो चल झट जमुना की तीर।

(४०)

जयति जयति हनूमान, जय, बुद्धिमान गुणवान॥
ऐसो मूरख नृपति कहँ, सो वसि है मतिहीन।
के अपने प्रभु ते विमुख, के अघ ही में लीन॥

दीन हित राम तजि और कौन हेरैं।

सखि अब धाम लीजे जाय ।
रही जो यदुपूरि सुखमा कहीं का पै जाय ।
जनम को फल पाय ।

प्यारे, काहे, गये तुम घर पर ।
वा सोतिन ने कहा पढ़ि राख्यो, दौरि जात ता घरपर।
अपने घर पट बन्द देखि कोउ, खुले जात का घरपर॥

(४१)

मनसा शून्य है, अर्थात् अदृष्ट है। वस्तु दृष्ट है, दोयाँ रो संयोग (एकता) अज्ञान जन्य है।

(४२)

विराट शरीर एक है, हिरण्यगर्भ (चित्त) भी एक है। कारण भी एक है। कारण शूँ हिरण्य गर्भ यूँ है ज्यूँ सुषुप्ति शूँ स्वप्न, हिरण्यगर्भ शूँ विराट, (यूं है, जूं) स्वप्न, शूँ जाग्रत, है वास्तव में एक हीज।

(४३)

"इन्द्रियाणि पराण्याहुरिति"

इन्द्रियाँ विषय शूँ परे है, यानि आगे है, तो इन्द्रियाँ और व्हीं',ने विषय और व्हियो, तो

अणारो सम्बन्ध व्हे' शके नी। यूँ ईं आगे भी इन्द्रियाँ, ने विषय एक ही है, तो हर्ष शोक कई? वी तो वो'ज (विषय ही ज) है, यूँ आगे भी।

(४४)

इच्छा अहङ्कार आदि शूँ बन्धन है, परंन्तु बन्धन अदृष्ट है। ज्यूँ-कींने ईं पुस्तक री इच्छा व्ही'तो पुस्तक और है, ने इच्छा और, पुस्तक फाटजावा शूँ इच्छा रे कई नुकसान व्हियो? इच्छा मिटवा शूँ पुस्तक रो कई विगड़ गयो? यांरी एकता ही नुकसान (दुःख) करे है। सम्पूर्ण जगत इच्छा में है। इच्छादि कुछ भी नी है, शून्य व्हेवा शूँ। शून्य शूँ बन्ध नी व्हे'। ज्यूँ आकाश शूँ कोई नी बंधे।

(४५)

" ब्रह्मार्पणमिति " ब्रह्म ही सब है। "वासुदेवः सर्वमिति" (श्रीकृष्ण हीज सब कुछ है) तो अणीरो विचार यूं करणो के, जो विचार व्हे' वीं विचार ने घटावा वढावा रो जो विचार व्हे' सब श्रीकृष्ण है, तो दूजो कई नी। ईं शूं सबरे साथे यो

विचार करणो के पुस्तक वांचूं यो भी श्रीकृष्ण है। यां दोई इच्छाने छोड़णो, ने करणो सो भी श्रीकृष्ण है, सब श्रीकृष्ण है।

(४६)

अणीरो खुलासो अहंकार ही शूं बन्धन है, अणीरे नाश व्हेवा शूं मोक्ष व्हे' है। अणीरो प्राप्ति ममतादि जगत शूं वढ़े है,यो शरीर में रे'है।

प्रश्न०—यो शरीर है, वा जगत है, या बात किस तरे' सावत व्हे'?

उत्तर०—मनशूं वा बुद्धिशूं।

प्र०—मन कश्यो है?

उ०—"अदृष्ट" (नीं दीखे) है।

प्र०—अणी में कई प्रमाण?

उ०—सुख दुःख रो ज्ञान व्हे'।

प्र०—सुख दुःख कई वस्तु है?

उ०—अनुकूल (चावां सो) सुख, प्रतिकूल (नीचावां ने प्राप्त व्हे' सो) दुःख।

प्र०—चावणो नी चावणो कई है?

उ०—इच्छा।

प्र०—इच्छा कई है ?

उ०—नी दीखे।

प्र०—हां, या वात साबित व्हीं' नी दीखे। जदी अशी चीजरा आधार पे दीखे है, या किसतरें की' जावें। जो आप ही नी है, वा दूसरां ने किसतरें साबित करे।

उ०—खरगोश रा शींग शूँ कुण मरे, यूं ही जगत इच्छा (मन) री कार्य व्हेवा शूँ असत्य है और शरीर यो अहंकार, एक चित्तरी वृत्ति व्हेवा शूँ असत्य है। क्यूं के वृत्ति कुल ही असत्य है।

प्र०—तो एक मनुष्य रे मरवा शूँ सब जगत रो नाश व्हेणो चावे ? क्यूं के वृत्ति में है ?

उ०—मनुष्य रे मर्‌यां विना ही संसार रो नाश है, ने मरवो भी एक वृत्ति है, अणी शूँ ही ज समाधि में संसार नी दीखे वा सुषुप्ति में भी नी दीखे, क्यूं के वृत्तियां री वठे लोप व्हे' जाय है।

प्र०—तो एक आदमीरे सुषुप्ति व्हे' वी वगत नखलो (पासवाळो) आदमी तो मर जाणो

चावे, क्यूं के सुपुप्ति वाळा री वृत्ति में वो नी है ?

उ०—ई प्रश्न व्हे' सो पूर्वोक्त वात रे निश्चय नी व्हेवा शूँ असंख्य व्हे' शके है। सुपुप्तिवाळा नखे जो आदमी जीव रियो है, वो कई वस्तु है, वोई वृत्ति रूप है, ने वृत्ति असत्य है, तो वो भी असत्य व्हियो।

प्र०—तो यदि कोई जीव नी रेवे तो पर्वतादि रेवे के नी ?

उ०—कोई जीव भी नी है, पर्वतादि भी नी है, जीव भी वृत्ति रूप है, पर्वतादि भी वृत्ति रूप है, वृत्ति असत्य रूप है। जो रेवे है, जीव में रेवे है, वृत्ति अनेक है, तो भी वृत्ति में ही ज। जणी रा आश्रय शूँ वृत्ति स्फुरे है, वो ईश्वर भी कृष्ण चिन्ह एक ही ज है। वृत्ति रो अत्यन्ताभाव व्हेवा शूँ ईश्वर में वृत्ति नी है, वृत्ति में हीज वृत्ति है, ज्यूं है। यो ही सिद्धान्त योग रो है, के श्री पातंजळजी महाराज पे'ली वृत्ति निरोध शूँ हीज दृष्टा रो स्वरूप में स्थित

व्हेणो मान्यो है। क्यूं के वो वृत्ति के'वा शूं वृत्ति री सरूपता तो ग्रहण करे है। यो ही वेदान्त रो मत है, के माया (चित्तवृत्ति) असत्य है। यो ही सांख्य रो है, के पुरुष मुक्त है। सब प्रकृति (वृत्ति) ही रो खेल है। यो ही श्री भक्ति महाराणी रो सिद्धान्त है के :—

"मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ।"

प्र०—भक्ति रे ज्यादा विशेषणां री कई आवश्यकता है ?

उ०—जो जो जणी मार्ग शूं वठे पूगे, वो वणी री ही ज प्रशंसा करे, भक्ति में भी यूं हीज है। परन्तु अधिकारी भेद अवश्य है।

भक्ति शूं पे' लो श्री करुणानिधान परमेश्वर में स्नेह वढ़े। स्नेह रो माहात्म्य अठा तक है, के झूंठा संसार में जो स्नेह वढ्यो है, वणी हाल कत ईश्वर सन्मुख व्हेवा नी दीधो है। अनेक जन्म अणी जीचरा वीत गया।

प्र०—अरया स्नेह री फेर तारीफ क्यूं ?

उ०—अगर यो सांचा में व्हेवे, तो फेर पाछा पड़वारी सम्भावना नी रेवे। यो ही ज कारण है के ज्ञानी पड़ शके पर भक्तां री कदापि पतन नी व्हेवे।

" न मे भक्तः प्रणश्यति

पतत्य तो नादत युष्मद्रप्र ? "

फेर भक्ति अनेक प्रकार री व्हेवा शूं सब मनुष्यां रो अधिकार है। स्नेह तो कणी ने कणी में जीव रो व्हेवे हीज है, सो यदि फेर ने परमेश्वर में कर दीधो जाय, तो सहज में व्हे' शके है, और ज्ञान री प्राप्ति भी विना ईश्वर कृपा नी व्हेवे ई शूं वणीरी कृपा रो ही अवलम्बन मुख्य है।

प्र०—भक्ति री प्राप्ति किस तरे' व्हेवे ?

उ०—उराम वस्तु री प्राप्ति श्री करुणानिधान विना कुण कर शके। पण वणी रो नाम भी वश्यो ही दयालु है, सो वैराग्यादि साधन युक्त व्हेणो चावे। अणी रोवर्णन पे' ली व्हे' चुक्यो है।

(४८)

प्र०—माया कई है ?

उ०—चित्त वृत्ति रो सत्य जाणणो।

प्र०—ईश्वर कई है ?

उ०—जणी शूं झूंठी चित्तवृत्ति (माया) सांची जाणी जाय है।

प्र०—जीव कई है ?

उ०—एक चित्त री वृत्ति अहंकार रूप।

प्र०—ब्रह्म कई है ?

उ०—अवाच्य, (वर्णन नी व्हे' शके) अणी शूं ईश्वरोपासना शूं शीघ्र मुक्ति व्हे' है। क्यूं के मायाप्रेरक वो हीज है।

(४९)

प्र०—वृत्ति शून्य है। नी है तो पर्वतादि स्थूल पदार्थ प्रत्यक्ष दीखे सो कई है ?

उ०—वृत्ति नी है, तो भी स्थूल ज्यूं दीखे सो वृत्ति हीज स्वप्न में दीखे है। स्वप्न असत्य, वणीरो वृत्ति असत्य, केवल श्री कृष्णचन्द्र सत्य है। प्रमाण श्री गुसांईजी महाराज रोः—

उमा कहौं मैं अनुभव अपना।
सत हरि भजन जगत सब सपना॥
जेहि माने जग जांहि हिराई।
जागे यथा शयन भ्रम जाई॥

अणां ने विशेष लिखवा शूं विस्तार रो भय है।

प्र०—श्रीकृष्ण ईश्वर है, अणी में कई प्रमाण ?

उ०—श्री गोपाल तापिनी आदि उपनिषद् तथा गीता और वेद आदि सब ही सहमत है, अवतार सिद्धि, वल्लभाचार्यजी श्रीकृष्ण चैतन्यजी आदि रा वैष्णव सम्प्रदाय रा ग्रन्थ देखवा शूं निश्चय व्हे' शके है। ईश्वर रो लक्षण जो वेद में है, वो श्रीकृष्णचन्द्र में पूर्ण मिले है। पातंजळ दर्शन रो सूत्र भी अणी में प्रमाण है। ज्ञानी ने तो सिवाय श्रीकृष्णचन्द्र रे दीखे ही नी, श्रीकृष्णचन्द्र में कई ईश्वरता है, विराटरूप दर्शनादि अनेक कृष्णचन्द्र है।

प्र०—यो तो मेस्मेरिजम योगी भी कर शके है ?

उ०—योगी मेस्मेरिजम वाळा, अद्वितीय पदार्थ नी देखाय शके, जन्म शूं ही चतुर्भुज रूप नी

देखाय शके। पे'ली जो वसुदेव देवकी उपासना कीधी, वरदान सांचो करवाने अवतार लियो, और वणी या ही ज चाही "निजानन्द निरुपाधि अनूपा" वेद प्रतिपाद्य जो ईश्वर म्हाणों पुत्र व्हे' सोई वरदान दे अवतार लीधो।

प्र०—या वात कणी शूं जाणी जाय है ?

उ०—जणी शूं, "श्रीकृष्ण व्हिया," या वात जाणी जाय, वणी शूं ही या भी जाणी जाय।

प्र०—श्रीकृष्ण री जन्म आदि री वात तो मन शके, और या तो नी मन शके है ?

उ०—तो मन मानीं ही मानां हां, यूं के'णो चावे। यदि नशा में आपां रो मन अगम्य ने गमन माने वा अभक्ष्य ने भक्ष्य माने तो वणी ने शस्त्र सिवाय कूण रोक शके। जदी के रे'ल नी ही, तार नी हा, फोनोग्राफ नी हा, मोटर नी हीं, मेस्मेरिजम वा योग रो तुक नी देख्यो हो, जदी अणाँ वाताँ ने भी मन नी मान तो हो, पण अब माने

हीज है। ईं शूँ थांरा ज्ञान शूँ छेटी और भी कई कई चीजाँ है, वी थाँ किसतरे' जाण शको हो।

प्र०—ईश्वर सर्व व्यापक, एक स्थान में आय गयो, तो और स्थानाँ पे कुण हो ?

उ०—वो ईश्वर एक रस है, एक जगा' हीज है, या वात के'णो मिथ्या है। तो कुछ वणी रे विषय में के'णी नी आवे—

मन समेत जेहि जान न बानी।
तर्कि न सकहिं सकल अनुमानी॥

ज्यूँ हवा करवा शूँ पंखो जठे हाले वठे हीज पवन है, और जगा' वणी रो अभाव है, सो तो नी है। यूँ ही वो प्रेम शूँ, भक्ति शूँ प्रकट व्हे' ने दर्शण देवे, तो वीं री एक रसता में तथा सर्व-व्यापकता में फरक नी पड़े, और पे'ली रो अर्थ विचारवा शूँ तो अतरी शंका नी व्हेवे।

निजकृत कुण्डलिया

मेरो मेरो करत है, तेरो कहा विचार।
ज्यों तेरो त्यों और को, या में कहा विकार॥
या में कहा विकार भार सिर यों ही धारे।
निर्मल दिनकर बीच रात को वृथा निहारे॥

कहे मन्दमति चतुर, आपनो सो नहिं हेरो ।
पड़्यो और को दाम, कहे तू मेरो मेरो ॥
झूठी खूँटी रोपि के, मिथ्या रसरी आन ।
तहँ असत्य इक पशु बँध्यो, समुझ्यो नहीं सुजान ॥
समुझ्यो नहीं सुजान, दान आया छिन लीनो ।
फेर भयो परिताप, बिना जाने श्रम कीनो ॥
कहे मन्दमति चतुर, कछू कतहूँ नहिं टूटी ।
टूटे कहा अजान, प्रथम खूँटी हू झूठी ॥

(५०)

सुर नर मुनि सब की यह रीती ।
स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती ॥

रामायण

बीजणवास गाम में एक ढोंगी रे बळद मर गयो सो वो घणो रोयो, जाणे कोई मनख मर गयो व्हे'। एक कुत्ता रे माथा में कीड़ा पड़ गया, वणीरे रोटी नकावा री, ने दवा री हिफ़ाजत चायो सो लोग म्हारा पे पूरा नाराज व्हे' गया और एकान्त में निन्दा करवा लागा। अगर कोई मनख व्हे' ने अणी वात ने विचारे तो मतलब सिवाय कोई कणी रो ई नो है।

(पद)

अरे नर अपने हित को रोवे ॥
अपनो स्वारथ त्यागि जगत में तेरो कोऊ न होवे ।
तिनके हेत हाय मूरख (नर) निज जनम अकारथ खोवे ॥
अपनो हित परमातम दर्शन सो सनेहु नहिं जोवे ।
यातें त्यागी अहंता ममता अन्तर मल किन धोवे ॥

(५१)

दोहा

मैंने बार हजार यह, लीनी खूब विचार ।
कुच्छ काम को है नहीं, तुच्छ प्रेम संसार ॥

हृदय देशमें ध्यान साधन वा जप साधन एकाग्रता भी उत्तम साधन है । ईं शूँ सहज ही प्राण ब्रह्माण्ड में प्राप्त व्हेवे है, ने चित्तएकाग्र व्हे' जाय है, यदि कुछ रोग री संभावना व्हेवे तो मानसिक करणो । गुरु रा उपदिष्ट मार्ग शूँ ब्रह्मचर्य व्हेवे, तो रोग री संभावना नी व्हे' ।

(५२)

चंदेरिया में बिजळी पड़ी छः मनख बळ्या । एक लुगाई तीरे छोटो छोरो हो, दूध पीवे जश्यो, वो बच गयो ने लुगाई बळ गई । अणी शूँ जाणी

जाय है, के आयु पूरी व्हियाँ विना वज्र शूँ भी कोई नी मरे,ने आयुपूर्ण व्हियाँ पे अमृत शूँ भी नी बचे।

(५३)

विराट सब एक है। यूँ ही हिरण्यगर्भ एक है। यूँ हीं अव्यक्त (माया) एक है, यूँ ही ईश्वर एक है, यूँ ही ब्रह्म एक है। स्थूल जगत स्थूल शरीर विराट है। सूक्ष्म जगत सूक्ष्म शरीर (अहंकारादि) है। कारण शरीर जठा शूँ अहंकारादि प्रवृत्त व्हेवे, वो है। ईश्वर, ने कारण शरीर जणी री संनिधि शूँ प्रवृत्त व्हे,' वो ब्रह्म, (उणो याँ सब शूँ भिन्न) है। स्थूल शरीर जड़ है,ने एक ही है। वणी में भूताँ री समता विषमता शूँ कृशता, घोरता, आरोग्यता ही प्रतीत व्हे' है, ज्यूँ पृथ्वी में भाटा, मेर, सींगा, उपर आदि अनेक भेद व्हे' है। जड़ कई काम नी करे, सूक्ष्म शरीर जश्यो जश्यो काम करे वश्यो वश्यो शरीर ने आपणों मान लेवे। रे'ल में जश्यो जश्यो टिकट लेवे वणी वणी क्लास में बैठे। यूँ हीं सूक्ष्म शरीर भी स्वयं संकल्प रूप व्हेवा शूँ, ने पराया (माया) री प्रेरणा वाळो व्हेवा शूँ कई नी करे।

माया भी असत्य है, पर ईश्वररी सन्निधि व्हेवा शूँ सत्य प्रतीत व्हे,' ज्यूँ-काचमें सूर्य रो प्रतिविम्ब पड़े सो काच रे शामो भी नी देखणी आवे।

जदी माया है ही नी, तो माया री समीपता किस तरे' व्हेवे ? ईं शूँ निर्विकार नित्य सच्चिदानन्द अनाम अचिंत्य एक ही है। वणी रो ही भक्ताँ रे वास्ते सगुण रूप व्हेवे है, जो के परमपद है। विराट असत्य है। क्यूँके अहँकार शूँ आकाश व्हियो सो शून्य है, आकाश शूँ वायु। वीं में शब्द आकाश रो, ने स्पर्श निज रो गुण व्हियो। तेजमें शब्द स्पर्श रूप व्हिया यूं ही आगे भी।

(५४)

पृथ्वी जशी आपाँ ने दीखे वशी नी है। क्यूँके गन्ध पृथ्वी रो गुण है, याने गन्ध ही पृथ्वी है, सो गन्ध नासा इन्द्रिय (नाक) शूँ जाणी जाय है, सो पृथ्वी री प्रत्यत्त नासा शूँ व्हे'णो चावे। नेत्राँ शूँ तो रूप रो प्रत्यत्त व्हे' है। यूँ ही सब भूत तन्मात्रा रूप है। तन्मात्रा इन्द्रियाँ में है। क्यूँके इन्द्रियाँ विना गंधादिरी सिद्धि व्हेवे नहीं, इन्द्रियाँ सूक्ष्म शरीर में है। सूक्ष्म शरीर शूँ ही स्थूल में प्रतीत व्हेवे। अगर स्थूल में व्हेवे तो स्वप्न में

नी दीखणो चावे। क्यूँके स्थूल नेत्र बन्द है। मेस्मेरिजम में पेट शूँ देखे, छाती शूँ शुणे आदि इन्द्रियाँ रो परिवर्तन व्हे' जाय है। सूक्ष्म शरीर माया में है। क्यूँके असिद्ध सिद्धवत् प्रतीत व्हे'णो माया रो काम है। माया मायिक शूँ रमे है। मायिक दो तरे' रो व्हे,' माया करतो थको, ने माया नी करतो थको। करे तो भी वो मायिक (ईश्वर) माया शूँ न्यारो है। क्यूँके वो वणी में बंधायमान नी व्हे' शके। माया रा सांप शूँ माया रो ही ज मनख डरे। अरया तमाशा में मायिक रे कोई हर्ष शोक नी है। क्यूँ के डरे सो, ने डरावे सो, दोई वींरा (*मायिकरा–ईश्वररा*) वणाया थका है। जदी वो (ईश्वर) माया नी करे, तो विना माया वाळो (ब्रह्म) बाजे है। यूँ ही सब संसार वीं री माया है। माया झूँठी व्हे' है पण मायिक रा कारण शूँ सांची दीखे है। 'झूँठो हे रे झूठो जग राम री दुहाई। कहो के सांचे ने बनायो, या ते सांचो सो लगत है। समझावाने शास्त्र प्रवृत्त व्हे'। दूज्यूं अवाच्य है, ने जतरा शास्त्र है, सब अनेक प्रकार शूँ समझावे है शूँ जीं अनेकता दीखे है, गम्य एक श्रीकृष्ण है।

(५५)

ईश्वर शूँ कोई विशेष वस्तु नी है, या बात के'वा मात्र है; म्हूँ जाणू नी हूँ। अगर म्हूँ जाणतो तो ईश्वर रो स्मरण छोड़ क्यूँ स्त्री धन शरीर सम्बन्धी भोजन पगरखी वगेरा रो स्मरण कर तो। कई ई वस्तुवाँ ईश्वर शूँ विशेष है ?

(५६)

आपाँ कई नी वणणो, चित्त में वृत्ति प्रवल व्हेवे तो आपणाँ इष्ट या गुरु रो ध्यान करणो। सम्पूर्ण अङ्ग रो नी व्हेवे तो चरणाँ रो ही करणो गोपाल छीपे ई दो वाताँ.वताई सो वास्तव में उत्तम है। पातञ्जल दर्शन में पण (ध्यान हेयास्तद्वृत्तयः) ध्यान शूँ स्थूल वृत्तियाँ रो नाश लिख्यो है।

(५७)

यो संसार ईश्वर री इच्छा मात्र है। ज्यूँ वृत्ति उठी 'म्हूँ हूँ' सो दृढ़ व्है' गई। यद्यपि अनेक वृत्तियाँ चित्त में उठे है, पर वी प्रवल नी व्हेवे। कारण वी दृढ़ता शूँ नी उठे,ने घणी रे'वे, वा हीज मजबूत व्है' जावे, फेर वाँ रो मिटणो सहसा सम्भव नी है। ज्यूँ श्री रामकृष्णजी परमहंसजी महाराज रा उपदेश में है, के 'भयानक स्वप्न शूँ जागे

तो पण छाती रो धड़कणो वा भय वण्यो रेवे। यद्यपि वो या वात जाणे है, के यो स्वप्न है, तो पण कुछ देर अवश्य वींरो असर वीं पे रेवे। क्यूँके, यद्यपि वीं पुरुष, स्वप्न एक दो मिनट हीज देख्यो हो, पर दृढ़ता शूँ सत्य करने जाण्यो, तो संसार ने तो घणा समय शूँ दृढ़ता शूँ सत्य जाण रियाँ हाँ, । शेखशल्ली वा सोमशर्मारी जो वात है, वीं शूँ आपाँ कुछ घटाँ नी हाँ। क्यूँके 'अहं' कठे है, कश्यो है, कई है, या नी जाणाँ, पण तोभी 'अहंअहं' कराँ हाँ। यूँही'मम, त्वं,इदं'इत्यादि केवल चित्त वृतियाँ है और अव्यक्त (माया) शूँ व्हे' है। माया सो ईश्वर सान्निध्य शूँ है। ज्यूँ ("नाहं नत्वं नायं लोकः" श्री शंकर स्वामी) जीव (चित्त री वृत्ति)'अहं' व्ही' है, या दृढ़ व्हेवा पै फेर 'मम' दृढ़ व्ही'। यूँ ही दृढ़ व्हे' ती गई। विचार शूँ पतो नी लागे के, कई है, कठे गी ॥

(५८)

जगदीश वावा कालीदह वृन्दावन वाळा कियो के 'नाम सुमिरण करता रो' और जो मूर्ति प्रिय लागे वीं री याद राखो, नाम शूँ चित्त हटे

जद ध्यान में, ध्यान शूँ हटे तो नाम में; दोयाँ शूँ हटे तो पाछो स्तोत्र में।' या ही वात स्वामीजी महाराज हुकम करी, पे'ली रा लेखमें ई रो वर्णन है।

(५९)

एक परमेश्वर है, वीं री इच्छा माया है। वा यूँ समझणी चावे, के ईश्वर में जो संकल्प, उठ्यो वो हीज संसार है। जतरा जीवाँ ने विचार है सब माया(संसार) जाळ है। जो वीं में वीं (ईश्वर) रो ही संकल्प व्हेवे तो भेद बुद्धि नी व्हेवे। पर अचिन्त्य में चित्त नी ठे'रे तो वीं रो नाम पण वींरो वाचक व्हेवा शूँ नाम नामी (नाम वाळा) में अभेद भावनाकर सुमरण करणो चावे, वा ईश्वर रूपी, आनन्द रूपी समुद्र शूँ जीव रूपी जळ रे निकळवा रो संकल्प (इच्छा) रूपी नाळो है। वठे नाम रूपी मजबूत पुळ बाँधवा शूँ वीं जळ में भेद नी पड़ेगा, वा ईश्वर रूपी एक महासूर्य री संकल्प रूपी एक किरण, घर में जाळी द्वारा सूक्ष्म व्हे'ने दीखे है, सो नाम रूपी कमाड्या लगावा शूँ वीं प्रकाश रो छोटा पणो नी दीखे गा। वा ईश्वर रूपी महाराज री इच्छा रूपी छोटी कन्या खेलवा रे वास्ते घोरणे गांम में जाणो चा'वे, पर वा नाम

रूपी पे'रा वाळा रे दरवाजा पे बेठवा शूँ, वा के'वा शूँ कदापि वा'रणे नी जावेगा। यूँ ही अनेक विषम दृष्टान्त व्हे'शके है।

(६०)

काळरूपी एक महा प्रवाह है, वो निरन्तर वे'वे है। एक लकीर खेंचाँ, वींरा क्रोड़वाँ टुकड़ा पे पण काळ नी ठे'रे। याने रेल बड़ा वेग शूँ दौड़े, तार बड़ा वेग शूँ पहुंचे, मनरो पण बड़ो वेग है, पण समय रो वेग वाँ शूँ पण तेज ही है। या वात सूक्ष्म विचार शूँ समझ में आय शके। वा यूँ समझणो चावे, के ज्यूँ आदमी रेल में बैठ ने दौड़े, यूँ उक्त सब काळ रूपी रेल में बैठ ने दौड़ रिया है। अरया प्रवाह में ज्ञानी लोग सबाँ ने ही वे'ता देख रिया है। बड़ी बड़ी विभूतियाँ ब्रह्माजी रो पण ऐश्वर्य, बड़ा बड़ा दुःख, महा रौरवादिक सब ही, ईं में वे' रिया है, कोई पण स्थिर नी है, मो मनख ने यूँ विचारणो चावे, के म्हाँरा दुःख है, वो पण ईं में वे' जायगा और सुख पण, ईं वास्ते ज्यो नी वे' वे वीं रो आश्रय लेणो उचित है।

(६१)

जठा तक आदमी सन्देह ने अंगीकार नी करे वतरे वीं ने असली वात री खबर नी पड़े, सो ईं संसार में सन्देह करणो चावे, के यो म्हें जाणाँ ज्यूँ ही ज है या और तरे' शूँ। रेल रा वेगशूँ लोगाँ ने यूँ दीखे के म्हें तो वैठा हाँ ने रूँख दौड्या थका जाय रिया है। यूँ ही काळ रा वेग शूँ लोग संसार ने थिर देखे, पण जदी वी वुद्धि शूँ काम लेवे, के ज्यो रूँख दौड़े है, तो रूँख आगला टेशण पे पोंछणा चावे या पाछला पे जाणा चावे, पण म्हें अठे किस तरे' पोंछ गिया। यूँ ही विचारणो चावे, के ज्यो म्हें थिर हाँ तो वाळकपणाँ रो टेशण छोड़ युवा पणाँ रा टेशण पे, ने युवा शूँ वृद्धापणां रा टेशण पे म्हें क्यूँ पूग्या। ईं शूँ काळ रूपी रेल में वैठ, जीव मृत्यु रूपी टेशण पे पोंछेगा, जदी शरीर रूपी गाड़ी चेञ्जकरणी (पलटणी) पड़ेगा और जश्या कर्म रूपी टिकट लेवेगा वश्यो ही ज दर्जो (क्लास) मिलेगा। पर सदा ईं गाड़ी में कोई नी वैठो रे' शकेगा, आराम तो घरपे पहुँचवा शूँ हीज है। सव दर्जा रा लोगाँ ने गाड़ी छोड़णी पड़ेगा—

दुनियां के मानिन्द है यह रेल गाड़ी ।
कोई जाता है आगे कोई जाता है पिछाड़ी ॥
हरगिज़ न हरदम कोई बैठा रहेगा ।
मिल गया इस ही म ऐसी बात कहेगा ॥
सैकड़ों आलिम यों आ के उतर गये ।
जिन के निशाने नाम भी वाकी न रह गये ॥
थोडी सी देर के लिये लड़ने को तैयार ।
इस में तेरा क्या है सो तो वता रे यार ॥

सम्पूर्ण शूँ विस्तार व्हे' जावे, पण यूँ ही सब समझ लेणो ? 'ऊमर जात जैसे रेल' यो प्राचीन पद्य है। परमेश्वर रा सुदर्शन चक्र रा रूपक शूँ पण ई' रो वर्णन व्हे' शके है। क्यूँके यो काळ जगत शूँ सुन्दर दर्शन दीखे है, ने चक्र ज्यूँ फिरे है और जी ईश्वर शूँ विमुख है वाँ ने मारे है इत्यादि—

श्रीगोस्वामीजी महाराज ई' ने धनुष रा रूपक में वर्णन कर्‌यो है—

लव निमेप परमानु जुग वर्ष कल्प शर चण्ड ।
भजसि न मन तेहि राम कह काल जासु को दण्ड

श्रीमानस

(६२)

मानस योग री पुस्तक (मेसमेरीजम) एक दयानन्दजीरा मतवाळा आर्यसमाजी महात्मा वणाई वा बड़ी उत्तम है। वीं में वणा लिख्यो, के म्हाँ एक ने मानस योग शूँ मूर्छित कर आकाश में जावा री आज्ञा दी धी; वीं कियो, अठे (आकाश में) एक वगीचो है, म्हाँ कियो आकाश में वगीचो असम्भव है। वीं कियो, थाँरा अठा रा वगीचा शूँ उत्तम है, वो थें नी देख शको हो, म्हने दीखे है और वीं एक एक फळ दियो ने फूलाँ री माळा म्हने पे'राई। वी महात्मा लिखे, वठे माळा वगेरा कुछ नी ही, वो कठाशूँ लायो। ईं री खबर नी पड़ी, पण याँ री वेदान्त पे श्रद्धा व्हे'ती, तो वाँने खबर पड़ जाती के संसारही इच्छा मात्र है। जश्या आया हाँ वशी ही वा माळा, वश्या ही पाँच भूत है, ईं शूँ पण जाणी जायके इच्छा मात्र संसार है।

(६३)

साक्षी आत्मा, यूँ समझाँ के एक आदमी ने स्वप्न व्हियो, के वो एक दूसरा आदमी शूँ विवाद कर रियो है, एक पर्वत पर बैठ ने। अब वी दो ई

आदम्याँ रा उत्तर प्रति उत्तर व्हे'रिया है। वीं शूँ स्वप्न दृष्टा पुरुप न्यारो है। क्यूँके वो दो ईं पुरुप रा संकल्प है। यूँ ही यो सम्पूर्ण संसार पण करुणा निधान ब्रजराज कुमार रो संकल्प है। आप सब शूँ न्यारो है ने सर्व रूप है, ने एक है, अवाच्य है, ने स्वप्न जाग्रत सुषुप्ति रो दृष्टा एक ही है।

(६४)

जो एक ही 'करुणानिधान' ईश्वर है, और कईं नी है, तो यो कईं है, ईं रो विचार यूँ व्हे' शके है, के भ्रम है। ईं में उन्माद रोग युक्त पुरुप रो पण दृष्टांत मिल शके है, ज्यूँ वेंडो आदमी आपने रोगी जाणे, ने आरोग्य व्हे' ज्यूँ, ब्राह्मण है, ने यूँ जाणे के म्हूँ शूद्र व्हे' गयो, वा यूँ ही विपरीत वाताँ रो निश्चय धारण करले, जदी वीं रो रोग मिटे, तो पाछो वास्तव स्वरूप जाण लेवे, यूँ ही सब जीव स्वरूप शूँ पड़ गया है, याँ ने चित्तरी वृत्ति रूप उन्माद रोग व्हे'रियो है, ईं रे मिटावा शूँ पाछा वास्तव रूप व्हे' जायगा।

प्रश्न—तो कईं ईश्वर वेंडो व्हे' गयो है ?

उत्तर—ईश्वर रो वेंडो व्हे'णो कदापि नी संभव व्हे', नी उन्माद रोग शूँ जीव वेंडो व्हेवे, अगर वीं रोग शूँ जीव वेंड़ो व्हे'तो, तो पाछो कोई मनख श्याणो नी व्हे'णो चावे, पर नरा पागल व्हे'ने पाछा श्याणा व्हे' जावे है। केवल शरीर में वा मनमें विकार व्हेवा शूँ वेंड़ो वाजे है। यूँ ही माया गुणमयी ने वा ही अनेक प्रकार री व्हे' है। ईं रा विकार संकल्प विकल्प मिटे तो वो ईश्वर, तो है जश्यो ही है। जीव ज्यो वेंडो व्हेवे तो प्रति जन्म में जन्म शूँ ही वेंडो जन्मणो चावे। चित्त शुद्ध व्हेवे जदी ई वाताँ समझ में आय शके है, मुख्य उपाय चित्त शुद्धि रो अभ्यास, वैराग्य कियो है। सब वींरा भेद है।

(६५)

प्रश्न—श्रीराधिकाजी व सीताजी पार्वतीजी आदि कई है ?

उत्तर—श्रीकृष्णचन्द्र, श्री रामचन्द्रजी, श्री चन्द्र चूड़ आदि वीं परब्रह्म परमेश्वर रा नाम है। यूँ ही श्रीराधिकाजी आदि वींरी आदिशक्ति

रा नाम है, वा ही परा माया नाम शूँ भी प्रसिद्ध है।

"आदि शक्ति जेहि जग उपजाया।
सोउ अवतरहि मोर यह माया" ॥

श्रीमानस

प्रश्न—तो माया ने तो झूँठी वा असत्य मानी है?

उत्तर—माया ने तो न्यारी मानणो वास्तव में मूर्खता है। कोई पण ज्ञाता उपासक श्रीराधिकाजी और कृष्णचन्द्र ने दो नी माने है।

गिरा अर्थ जल वीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न।
वन्दा सीताराम पद जिनहिं परम प्रिय खिन्न ॥१॥

श्रीमानस

न्यारा मानणो ही असत्यता है, ने वाँ री लीला जो है, वा तो प्रत्यक्ष दीखे ही है।

सो केवल भक्तन हित लागी।

श्रीमानस

जो आपणी लीला शूँ विचित्र संसार रचे है, वो आप भी अनेक रूप धारे तो कई आश्चर्य है।

"सिया राम मय सब जग जानी"

श्री मानस

वी वाँ ने ही दो स्वरूप धारी माने, तो कई असम्भव है। ई' शूँ गोप्याँ शूँ श्रीकृष्ण रो विहार पण समझ लेणो।

(६७)

नाम सुमिरण में चित्त नी लागे तो एक ईश्वर री लीला री पुस्तक नखे राख, पछे नाम सुमरण करणो, फेर मन अठी रो उठी जाय, तो थोड़ी सी पोथी वाँच नाम सुमरण करणो, फेर जाय तो यूँ ही करता रे'णो, ई' शूँ वो भागणो छोड़ देगा। क्यूँ के वीं री रुचि जावा री है, वी ने पोथी याद आवेगा सो पाछो नाम में लाग जायगा। चोर निगा' (नजर) चुकाय चोरी करे है, जतरे निगराणी रेवे वतरे श्याणा मनख री नाईं बैठो रेवे है। अगर चित्त ने खाली देख तो ही रेवे तो पण रुक जावे। यो तो उदाम (बिना लगामरा) घोड़ा ज्यूँ कर देवा शूँ भाग तो फिरे ने दुःख पावे है। वासिष्ठ में चेतोपाख्यान पण यूँ ही है। ई' ने ढीलो नी छोड़णो, नाना बाळक री नाँई ई' री पूरी ओशान राखणी।

(६८)

मन में आवे के फलाणी चीजाँ खावाँ, वा देखाँ वा स्पर्श कराँ, तो महात्मा तो बिलकुल वा बात नी करता हा। क्यूँ के—

मन उपजी जग कर पड़े, उपजी करे न साध।
'राम चरण' उपजे नहीं, वांरो मता अगाध॥

श्री रामचरणदासजी

पर शास्त्र विहित काम पण मन में झट आवे तां ही झट नी करवा लागणो। पर घणी वगत वीं मन रा वेगने रोकने पछे करणो, ज्यूं ले भागवा वाळा घोड़ा रे थोड़ो वागरो मशको देणो, के वीं रो वेग कम पड़ जावे, ने वो यूं जाण जाय के शवार म्हारे पे है, म्हारा मन शूं नी दोड़ूं हूँ। यूं ही निगराणी राखणो के अवे अणी चित नखूं यो काम लेणो। अब यो संकल्प ज्यो स्नान वगेरा रे पे'ली वोल, पछे स्नानादि किया जाय है, वीं रो यो भी मतलब व्हे' शके है। स्त्री ने यज्ञ रूप कियो सो पण मन री पण निगराणी व्हे' शके है, उपनिषदाँ में विषय करवा में यज्ञ रूपता की है।

(६९)

सहस्त्रनाम

जदी कोई काम करणो, नाम ले'ने करणो। पे'लो मुख्य मुख्य काम पे लेणो, ज्यूँ सूवता ऊठ नें नाम ले'ने रोटी खाणी। नाम ले'ने पाणी पीणो फेर नाम मन में ले' हरेक वात करणी, नाम ले' बेठणो नाम ले' ऊठणो। यूँ ही आदि मध्य अन्त हरेक काम रे सुमरण करणो। फेर निरन्तर मन में नाम तन से काम। अगर जतरो सौ रुपया पै मोह व्हे' वतरो पण ईश्वर में व्हे' तो या वात व्हे' शके है। वा वींछू शूँ डरे जतरा पण काळ शूँ डरे तो पण ई वाताँ व्हे' शके है, वा दृढ़ता शूँ करे व्हे' शके है–

त्यों संसार विसार चित, ज्यों अबार करतार।
त्यों करतार सम्भार नित, ज्यों अबार संसार॥

निज कृत दोहा

(७०)

मन रो निगराणी राखवा शूँ लोक में पण बड़ो लाभ है। यकायक काम कर, घणा आदमी पछतावे है।

(७१)

सहज उत्तमयोग

नाम सुमरण निरन्तर करणो, मनने देखता

रे'णो के अबे अठी गयो अबे अठी गियो, यूँ करवा शूँ मन निर्जीव री नाँई दोड़णों छोड़ देगा, वा परकट्या पत्ती री नाई वठे ही उछळ ने पड़ जायगा। कुछ दिन बाद उछळणो छोड़ देगा, चावे हूँश्यारी, ईं में ब्रह्म साक्षात् शीघ्र व्हेवे। क्यूँ के देश शूँ देशांतर जो वृत्ति जाय, वों में ज्यों संवित्त सत्ता है वा ही ब्रह्म है, यो योग वासिष्ठ में कियो है। कुछ दिन में केवल साक्षी रे'जावे, यो सहज उत्तम योग है।

(७२)

व्हे' शके जतरे एकान्त में अभ्यास करणो। फेर थोड़ी देर मनखाँ में पण यो अभ्यास करणो। ज्यूँ तरणों शीखे, वो शुरू में ओछा में तरे, ज्यूँ मनुष्याँ में पण क्रोधादि री वान रे'वे, जठे थोड़ी देर बैठणो। तो पण विषयी री तो व्हे' शके जतरे संगत नी करणी। स्नेह शूँ चाही बात हीज बार बार चित्त में उदय व्हे' है और जो या बात म्हूँ अवश्य कहूँगा, वा यो म्हारो कर्तव्य है, या पण विचारणों ठीक नी है। म्हूँ स्तुति रो काम करूँ, निन्दा रो नी व्हे'णो चावे, या पण ठीक नी, शुरू में ठीक है। विचार देखो।

(७३)

"विचार ६७ में" पुस्तक रो लिख्यो, ५६ में ध्यान रो लिख्यो। यूँ हीं मन चँचळता करे जद पुस्तक नी व्हे' शके तो कोई उत्तम श्लोक प्रकट वा गुप्त बोल मन रा वेग ने कम पटक देणो—

"अथो यथावन्नवितर्कगोचरं,
चेतो मनः कर्म वचोभि रञ्जसा।
यदा श्रयं येन यतः प्रतीयते,
सुदुर्विभाव्य प्रणतोस्मि तत्पदम्॥ १॥
अहं ममासौ पतिरेष मे सुतो
व्रजेश्वरस्याखिल वित्तपा सती।
गोप्यश्च गोपा सह गोधनाश्च मे,
यन्मायेयरथं कुमतिः स मे गतिः॥२॥"

श्री मद्भागवत

यूँ हीं ज्यूँ बाळक डरने पिता वा माता रो नाम लेवे वा वणा नखे दौड़ने चल्यो जाय, ज्यूँ ईश्वर रो पाछो सुमरण करवा लाग जाणो।

जन्म मृत्यु वा कणी प्रिय सम्बन्धी री मृत्यु ने याद करवा शूँ पण मन रो वेग घट जाय है, वा ऊँधी गणती करणी (सौ, नन्याणूँ, अठाणू, सत्ताणू,) एक दम मन रा वेग ने कम करवा री

कोशीश करणी । पण वीं रो कियो करवा शूँ वो प्रबल व्हे' जायगा ।

(७४)

वानप्रस्थ आश्रम शूँ सन्यस्त है, ने सन्यस्त सर्वोपरि आश्रम है, सो वानप्रस्थ शूँ मन री परीक्षा करी जाय, के यो सन्यास रे योग्य व्हियो या नी । केवल स्त्री नखे रेवे, ने वीं शूँ विषय नी करणो या हीज नी, पण हरेक वस्तु नखे रेवे, ने वीं ने काम में नी लावणी, मनरा वेग ने वश करणो, परम वैराग्य है । चित्त ने नी जावा देवे, पर तो भी वैराग्य री परीक्षा करने ही सन्यास उचित है । काय क्लेश शूँ वा आधि शूं पण वैराग्य व्हे' है ।

(७५)

मुसलमानाँ रे पण लिख्यो है, के अल्ला (*ईश्वर*) *चिक डाल कर देखता है । लोग वीं ने* नी देखे पर वो लोगाँ ने देखे, सो ईं रो भी यो ही मतलब दीखे के माया रूपी चिक म्हाकी है, वीं शूँ वो देखे दृष्टा, पण जीव नी देख सके ।

(७६)

विचार संकल्प

मनुष्य ने आपणी शरीर पे ममता है, जी शूँ यो

ई रा सुख दुःख ने आप में माने है और या ममता कर्मानुसार माया शूँ व्हेवे है, ने माया असत्य है, सूर्य किरणाँ में ज्यूँ मृगमरीचिका भासे, यूँ ही ईश्वर में माया है। ममता रो दृष्टान्त, यूँ पण समझाय शके, ज्यूँ जन्म शूँ नाम ने कोई पण आदमी ले'ने नी आवे, पण जदी वीं रो नाम करण कीधो जाय, ने वीं ने वाकब कीधो जाय, तो वो समझे। ज्यूँ २ वीं नाम पे ममता दृढ करे, वीं नाम ले'ने कोई प्रशंसा करे, तो आप प्रसन्न व्हे'वे निन्दा शूँ दुःख पावे वा कोई स्त्री पे ममता करे यूँ ही धनादि वस्तु समझणो। कीं री एक उत्तम घड़ी पे ममता व्हे' जाय, तो ज्यूँ कोई वीं घड़ी रे हाथ लगावे घड़ीवाळो पाका दुखणा री नांई दुःखी व्हे'। धन पे ममता व्हे' जाय, ने वीं री हानि व्हे' जाय, तो घणा लोग बेंड़ा व्हे' गया, घणाँ ने दस्ताँ लागी, घणाँ खरा मर गया, तो यो जीव जीं जीं पे ममता करे वीं रा दुःख में दुःखी सुख में सुखी व्हे' जावे। यद्यपि जीव धन नी, पण वीं में ममता है, यूँ ही जीव शरीर नी, ने नी शरीर में है, पण ई में ममता है। स्वप्न पण यूँ ही है। एक आदमी शूतो है।

वीं ने स्वप्न व्हियो, के वो एक समुद्र नखे दुपे'र समे'एक दूसरा आदमी शूँ कणी वात पर वगड़ गी' सो संग्राम (लड़ाई) कर रियो है। दोई आदमी ताक ताक ने तीर वाय रिया है। अवे वो आदमी जो तीर वावे वांने यो काटे ने वचावे,ने या चावेके कोई तीर म्हारे नी लागे तो ठीक, कदाचित एक वा दो तीर माथा वा छाती में जोर शूँ लागा तो यो दुःख पावे के म्हारे सख्त चोट लागी है, ने वीं रे तीराँ री लागे जदी वड़ो प्रसन्न व्हे' तो दोई आदमी स्वप्न पुरुष है, बिलकुल फरक नी. पर एक में ईं ने ममता है, जो शूँ वींरा दुःख सुख शूँ आप सुखादि रो अनुभव करे है। वास्तव में वीं रे मरवा पे, ने टुकड़ा टुकड़ा व्हेवा पे भी शूता मनख रो कई नुकशाण नी व्हे' है। पण ममता शूँ ही माने है। यूँ ही यो संसार है, ने जीवात्मा तो एक दृष्टा है, सो यो सम्पूर्ण संसार माया रूपी निद्रा में स्वप्न दिखे है। स्वप्न पण विचार मात्र है।

(७७)

७६वाँ विचार रे अनुसार जद ममता पण विचार मात्र संसार शरीर है, ने विचार छूटे नहीं

तो यूँ विचारणो के श्रीयमुना पुलिन (तीर) पे एक सुन्दर कुटी है। वीं में म्हूँ सदा बैठो रेऊँ, ने एक मेखळा पे'रवा ने है, कुछ परिग्रह नी है, श्री ललितादि सख्यों, म्हने श्री युगल स्वरूप रो, ने आपाँणो महाप्रसाद बगशे है। सो खाऊँ हूँ, ने अणी तरे' शूँ जणी लीला रो अधिकारी म्हूँ हूँ, वीं रा दर्शण करवा ने म्हने श्री विशाखाजी याद कर दर्शण करावे सो वीं युगल स्वरूप रा दर्शण करूँ हूँ, ने निरन्तर कुटी में भजन युगल स्वरूप रो करूँ हूँ। यूँ यथारुचि भावना करवा शूँ वो ही स्वरूप व्हे' जावे, ने वीं पे ही ममता पड़ जावे, ने यो शरीर तो अतरा संसार रा मनख है ज्यूँ दीखे, ने आपणो तो वो ही ज व्हे' जावे। शुद्ध चित्त जतरो व्हे' वतरी ही भावना उत्तम व्हे'। भावना करताँ करताँ पण शुद्ध चित्त व्हे' जावे। अहो म्हूँ स्त्री री भावना करने कश्यो विकारवान व्हेऊँ हूँ। धन ईकठो करने भावना मय मकान बणाय वीं में बेठ जाऊँ हूँ। मित्राँ री भावना करवा शूँ वाताँ पण करवा लागूँ हूँ। वियोगी जनाँ शूँ वियोग व्हियो, वाँ री भावना कर महाकष्ट ने पाय रुदन पण करूँ हूँ। परिपूर्ण पण

ब्रह्म सच्चिदानन्द नन्द नन्दन, श्री वृषभानु दुलारो आदि शक्ति री भावना पण कदो' नी करूँ, करूँ तो रोमांच पण नी व्हे' यो कई कारण है, यो कारण यो है, के संसारने जश्यो सत्य जाणूँ वश्यो संसार करवावाळा ने सत्य नी जाणूँ। धिक्कार है, फेर परमार्थ री इच्छा करणो, पर वो दयालु है, केवल मात्र या ही आशा है।

(७८)

स्वप्न में दो दिन व वर्ष अनेकाँ रो अनुभव व्हे' है। पोर (परसाल) म्हे' यूँ की दो हो, काले पण म्हूँ अटे आयो हो, यूँ बाळकपणाँ रो पण मन रा बढ़ता वेग ने रोकवा रा उपाय पे' ली पण लिख्या है, जो विचार व्हे' वो अन्तः करण में बोलतो जाय, ने करे है। ज्यूँ म्हूँ आज शिकार जाऊँ, वठे एक म्होटो ना'र सोनेरी आवे, वो घायल्यो व्हे'ने जणी वगत म्हारा पे झपटे, ने म्हारा हाथ शूँ बन्दूक री, वीं री टोली में (ललाड़) में लागे ने मार लूँ इत्यादि अथवा फलाणो आदमो अयार आवे, ने वो ने यूँ के'वाँ, वो यूँ के'वे, यूँ ही अनेक विचार व्हे' है। स्याणो (समझदार) मन में के' वे, बेन्डो प्रकट पण बोलवा

लाग जाय। ईं शूँ ज्यो विचार उचित व्हे' ने बुद्धिमानां रे करवा योग व्हे' वो ही करणो। विचार री धारा ने रोकवा रो दृढ निश्चय करलेणो, क्यूँ के विचार रोकवा री पण चित्त में आवे तो दृढ़ नी आवा शूँ ने विचार करवा री दृढ व्हेवा शूँ माँयने यूँ प्रेरणा व्हे' यो विचार तो करलाँ, यूँ मन रा अनेक छळ है। २६ वाँ विचार राखवा शूँ मन री वाताँ करणी कम पड़े वा कोई वात शुणवा शूँ वींरा अर्थ री आड़ी वृत्ति नी जावे। वा दूसरो वोले वीं रा शब्दाँ रा अक्षर शुणणाँ वा अक्षर विचारणा के ई ई अक्षर अणी शब्द में वोल्या गिया ज्यूँ अक्षराँ पे ध्यान राखवावाळो वाळक अर्थ नी समझ शके, यद्यपि वीं री समझवा री शक्ति व्हे' वो पण जदी अक्षर शूँ ध्यान हटवा लागे अभ्यस्त व्हे'वा शूँ जद वीं रो चित्त अर्थ पे चल्यो जाय, ज्यूँ पगत्या नाळरा उतरती वगत मावरा वाळो वाताँ करतो विना दीवे झट झट उतर जाय, पण विना अभ्यास वाळो ज्यूँ यूँ करे तो वो पड़ जाय, वा ज्यो ज्यो मन माँय बोले (विचार करे) वा ज्यो भाषा आपाँ कम जाणताँ व्हाँ वीं भाषा में करणो, सो वों शूँ मन

में दृष्टि चली जायगा, ने रोक शकाँगा वा विद्यार्थी सहज में वीं विद्या ने जाण जायगा वा ज्यादा विचार व्हे' तो वैराग्य री कविता वा हरि रूप री वा ज्ञान री कविता वा समस्या पूर्ति—करणी क्यूँ के व्यर्थ विचार शूँ ही मनख मूर्ख व्हे' है, ने ईं शूँ ही आयु व्यर्थ पूरी व्हे' है, ने परमार्थ हाते नी लागे। प्रगट व्यर्थ वाताँ री तो के'णो कई।

(७९)

विचार ६६ में जो कियो शब्द का अक्षर पे विचार राखणो, यूँ ही अक्षर पे विचारनी रे'वे तो अक्षराँ रो ध्यान करणो के यो अक्षर अणी आकार रो है, पे'ला अक्षराँ रो ध्यान कराँ तो पण शब्द रा अर्थ में चित्त नी जावे।

(८०)

नाम सुमरण में पण यो काम दे' शके है। नाम लेवा में चित्त नाम में नी लागे, ध्यान में पण नी लागे तो ईश्वर रा नामाँ रा अक्षराँ रो ध्यान दृढ़ता शूँ करता जाणो. ने मन में बाँचाँ ज्यूँ सुमरण करणो। पट्चक्र में शूँ एक चक्र में ध्यान करणो या वात माधवरामजी शिखाई ही वास्तव में बड़ी उत्तम है। क्यूँ के चित्त एकाग्र व्हे' शके

है। यदि नामाक्षर रो तेजोमय ध्यान व्हे' तो और पण आछो, यूँ कियो है।

(८१)

धैर्य राख बोलणो, फट फट नी बोलणो विचार ने पण बोलणो। क्यूँ के वाक्य दोष पण भारी हानि करे है।

(८२)

श्वास पे अजपा नी व्हे' तो इष्ट नाम जपणो खाली श्वास नी जावा देणो।

"शाशो शास शमाल ले, कब हूं मिलि है आय।
सुमिरण रस्ता सहज का, सद गुरु दिया बताय॥
तन तरकस से जात है, श्वास सरीखो तीर॥"

(८३)

यो पण दृढ़ राखणो के ज्यो व्हियो थको है, वो व्हे'रियो है, वीं में अन्यथा नी व्हे' शके। ईं वास्ते हर्ष शोक नी करणो। भाग्य (ईश्वरेच्छा) काळ नियती आदि में एक सिद्धान्त कर लेवा शूँ शोक नी व्हे' पण विचार संकर ने व्हे' है।

म्हारी समझ में ईश्वर पे दृढ़ राखणो के वो करे सो अवश्य व्हे'गा। आदि आदिनीति ब्रह्माजी

पणनी उलाँघ शके, तो ईं रो हर्ष शोक कई व्हे' शके। जतरे कर्तव्य शूँ विमुख नी व्हे'णो, भविष्य स्वप्न शूँ या वात पुराणाँ शूँ पण दृढ़ व्हे' शके है।

(८४)

मानसिक बल श्रश्यो है के मनख ने सदा प्रसन्न राख शके है। पूर्ण सुख, मन ने वश में करवा शूँ होज व्हे' अन्यथा नी व्हे' शके। मेस्मेरिज वा योगभी मन जीतवा शूँ व्हे'। ईं रो उदाहरण, मानसिंह (आमेर वाळा) री फौज दरबार री फौज शूँ भागवा लागी, क्यूँ के दरबार री फौज (मानसिंह री फौज शूँ) बड़ा जोश शूँ लडी। यद्यपि दरबार री फौज कम ही, पर मानसिकवळ शूँ वा विजयी व्हेवा ने श्रायगई, पण मानसिंह रे श्रशी बात विख्यात करवा शूँ के आँपाँणी फौज पे बादशाही नवी फौज श्रायगी' है। ईं शूँ भागी फौज मे मानसिक वळ श्राय गियो, जीती फौज रो (वळ) घट गयो सो हटगई, केवल मानसिक वळ शूँ जय पराजय व्ही'। वा मनुष्य रे सामान्य बिमारी व्हे' ने या निश्चय व्हे' के असाध्य है, तो वो घबराय जायगा। पण या निश्चय व्हे'

के सामान्य व्याधि है तो प्राणान्त तक भी नी घबरावे,सो ई सब मन शूँ निश्चय व्हे'। वो मन वशमें व्हे' तो कई करे।

(८५)

जो मनुष्य पोथी ज्यादा देखे वीं री आँखाँ में कमजोरी आय जाय ने दीखणो, कम व्हे' जाय। अणी तरे' शूँ सब समझणी। मन सब शरीर में राजावत् है। ईं ने रातदिन काम में लावा शूँ शारीरिक, ने मानसिक दोई शक्तियाँ कम पड़ जाय। घणो विचार करवा शूँ वेंडो व्हे' जाय, घणा काम व्हे' तो कोई-न कोई भूल जाय, पर प्रसन्नता पूर्वक प्रवृत्ति व्हे' ज्यूँ बाग रा वृत्त देखवा शूँ नेत्र। मन भी सङ्गीतादि श्रवण (भी) विशेष खोटो, सिवाय एकाग्रता रे। पण शुरू में चित्त ने घणो दुःख दे' ने एकाग्रता भी नी करणी। असमर्थ ने—

"नात्मानमवसादयेत्"

(आत्मा ने तकलीफ नी देणी।)

"शनैः शनैरुपरमेत्"

गीता

(धीरे धीरे ठिकाणे लावणो।)

ईं रो प्रमाण, रात्रि में नींद काढ़वा शूँ परभाते बुद्धि घड़ी शुद्ध रे'वे।

- *'विपची मारे जाते सकल, जो नाहिं होती रात।'*

नागरीदासजी

परिणाम में सुख व्हे' श्यो काम करणो

'परिणामे मृतोपमम्।'

गीताजी।

(८६)

ईच्छा व्हो'। ईश्वर शूँ विमुख करवा वाळी है। पारसभाग में लिख्यो कि, एक (जणो) कोई, महात्मा रा दर्शण करवा गियो, गेला में एक दाड़म खाय, फेर इच्छा कीधी, के फेर एक मिले तो ठीक। महात्मा रा शरीर पे व्रण (घाव) व्हे' रिया हा। वीं, महात्मा ने दण्डवत् की धी। वणाँ (महात्मा) कियो, आव फलाणा रा वेटा फलाणा आव।

वीं (आदमी) कियो (आप या) किस तरे' जाणी।

वाँ (महात्मा) कियो, ईश्वर ने जाणवा शूँ।

वीं (आदमी) कियो, ईश्वर शूँ प्रार्थना क्यूँ नो करो के, थाँणो रोग मिटावे।

वाँ (महात्मा) कही थूँ, प्रार्थना क्यूँनी करे के म्हारी दाड़म री इच्छा मिटावे।

'भाव' (यो है के) रोग रो दुःख भी, वीं (दुःख) ने मिटावा री वा नी व्हेवा री इच्छा शूँ व्हें सो दुःख रो मूळ मिटावा री प्रार्थना करणी। महाभारत रा शान्ति पर्व में मोक्ष धर्म में युधिष्ठिर पूछ्यो के मोक्ष धर्म कहो। भीष्मजी आज्ञा कीधी ज्यो २ जणी २ धर्म ने निश्चय कर जाणे, वीं ने, ही दृढ़ माने, अर्थात् एक धर्म नी है। वास्तव में धर्म एक होज है। पण साधन अलग अलग व्हेवा शूँ (अलग अलग जणाय है) पर ईं रा उत्तर में पिङ्गळादि री कथा है, के 'कई तृष्णा (इच्छा) ने मिटावो ही धर्म है ?

"या दुस्त्यजा दुर्मतिभिर्या न जीर्यति जीर्यत।
योऽसौ प्राणान्तिको रोगस्तां तृष्णांत्यजतः सुखम्॥

(जींने मूर्ख आदमी नी छोड शके, जा आदमी रे बूढो व्हेवा पर भी बूढी नी व्हे' जो रोग अणी शरीर रे साथ हीज जावे, अशी तृष्णा ने छोड़वा पर हीज सुख मिळे है।

इत्यादि अनेक उत्तम उत्तम श्लोक दृष्टान्त है।
श्री गीताजी में

"काम एष क्रोध एष"

आदि है।

क्यूँ के चाह शूँ चित्त बहिर्मुख व्हे'। सर्व शास्त्र सम्मत या बात है, ईं रा साधन सब है।

(८०)

मन एकहै, पर वेगवान् व्हेवा शूँ अनेक दीखे। बळता टींड़का ने बाळक फेरे सो गोळ लम्बो ज्यूँ फिरे ज्यूँ दीखे (भरणेटी वत्)। नाम लेती वगत जदी चित्त दूसरी आड़ो जावे तो झट पाछो नाम पे ले' आवणो, वा जीं जगा' दूसरी वस्तु आवे, वठे ही नाम जपणो। जठे शूर (सुअर) जाय घोड़ो भी साथे रो साथे, छेटी पड़वा शूँ शूर गुम जायगा। घणाँ दिनाँ री रग्वत शूँ वा घणा दोड़वा शूँ घोड़ो थाक जायगा या खाड़ा में, झाड़ी में पड़ जायगा। ईं शूँ जल्दी ही बरछी लगाय मार लेणो, वा यूँ कल्पना करणी के नाम लेवा वाळो मन दूजो है, ने भूल ने और जगा' जाय सो दूजो मन है, सो' जो और जगा' जाय वीं शूँ ही नाम लेवा लाग जाणो, वीं ने ही नाम लेवा वाळो कर लेणो, फेर दूजो आवे वीं ने भी नाम लेवा वाळो करणो। ज्यूँ साधु व्हे' सो गृहस्थाँ में शूँ हीज व्हे'यूँ ही भागता मन हीज नाम लेवा वाळा व्हे' जावे

वा लोद नजर आवे ने पारश अटकाय देणो, केवा रो फरक है, वात एक है। ईं शूँ चित्त झट वश में व्हे'।

(८८)

धर्म में लोक रो सम्बन्ध नी राखो। ज्यूँ ही धर्म शूँ निन्दा व्हे' गा, ईं शूँ स्तुति, (पण व्हेगा सो) पारलौकिक कार्य स्तुति रा होज करणा। धर्म ईश्वर प्रसन्नता रे वास्ते है, ने व्यवहार लोक युक्त ईश्वर प्रसन्नता रे वास्ते है।

(८९)

अष्ट याम (पेहर) री भावना विचार लेणी, के अणी समय ईश्वर अपोढ़ी व्हेवे इत्यादि। आपाँ भी व्हे' शके तो वीं में उचित कार्य यथाभाव करता रे'णो। या भावना समय समय पे बरोबर ओशान राख, करता रे' णो ईं लोक रा पण कार्य ऊपर रा मन शूँ व्हे' शके है। ईं शूँ निरन्तर ईश्वर सेवा में हीज व्यतीत व्हे' शके है, वा बाह्य-अर्चा में पण मन शूँ नी व्हे'तो रे' णो। घणा खरा सखी भाव राखे सो तो उत्तम है, पण हरे'क री बुद्धि ईं रे योग्य नी व्हे' सो अपात्र में हानि है।

ई' यूँ वात्सल्यादि यथारुचि 'भक्त माल' देख करणा। ज्यूँ परदेश में प्रिय ने याद करे, अबार यो कर तो व्हे'गा, अबार यो करतो व्हे'गा इत्यादि, कथा में पण यूँ भावना करी जाय है। घणा, कथा शुण ने के'वे के काले अठे विश्राम व्हियो हो। क्यूँ के वाँरे मन में रेवे। अब ठाकुरजी काळी नागने नाथ ने सब गाय गोपाँ सहित विश्राम कीधो। यूं भावना अष्टयाम री राखणी। कथा में करुणा पे विश्राम नीं करवा रो पण यो हीज कारण है। धन्य है वीं राजा ने के कथा शुणताँ घोड़ा पे चढ रावण ने मारवा दोड़्यो, ने वीं, सीता, राम, ने लक्ष्मणजी रा प्रत्यक्ष दर्शण पाया।

"प्रल्हाद की जैसी प्रतीति करे।
अब क्यों न कढे प्रभु पाहन तें"

(बोधा कवि)

(९०)

वेदरे वास्ते कोई के'वे के पौरुषेय (आदमी रा वणाया थका) है, कोई के'वे अपौरुषेय (आदमी

रा वणाया थका नी) है । ईं रो विचार यूँ व्हियो, के निश्चल दासजी विचार सागर में लिख्यो है–

"ब्रह्मरूप है ब्रह्मवित् ताकी वानी वेद।"

ईं शूँ जाणी जाय के वेद अपौरुषेय है । क्यूँके वी मनखरी बुद्धि शूँ नी वण्या है । वाँने स्वयं श्री कृष्ण वणाया है । पुरुषाँ ने समझावा ने पौरुषेयता (आदमी वणाया है, या वात) आई है । चपलता है, सो क्षमा करे ।

(९१)

"करणी बिन कथनी कथे, अज्ञानी दिन रात ।
कूँकर ज्यों भूखत मरे, सुनी सुनाई बात ॥

श्री कबीरजी

अणी वास्ते (काम) करवा शूँ (फळ) व्हेवे के'वा, शुणवा, वाँचवाँ, रो फळ करणो, ने करवा रो फळ वो ई है । के'णो घो'त बुरी बात है सामान्य वाताँ शूँ उपदेश नी व्हे' अभिमान ही म्होटो शत्रु है ।

(९२)

प्र०—पदार्थ कई है, जलत्व कई है, पृथ्वीत्व कई है,,

उ०—सब में 'त्व' लागे सो ब्रह्म है। सामान्य सत्ताभिन्नता (ईश्वर वस्तु में भेद) अहंकारादि शूँ व्हे है, नें अहंकारादि जदी कई वस्तु साबत नीव्हिया, तो भिन्नता किस तरे' व्हे' । परमाणु सावयव व्हे' जतरे अनित्य है, निरवयव व्हे' तो संयोग नी व्हे' (वो नित्य है) व्यवहार मात्र ज्यो मान्यो, व्यवहार मन आदि वीं (परमात्मा) शूँ ?

निजकृत दोहा

"कित जनम्यो कित जात है, को तूँ को है तोर ।
यह विचार पल चार ले, तब समझै तू तोर ॥
साँचे सों झूँठो भयो, झूँठ जणायो साँच ।
झूँठ झूँठ सो जरि गयो, साँच हि लगे न आँच ॥
ज्यों अगिनी में धूम है, ज्यों जल माहिं तरंग ।
ज्यों बँध्या के सुभग सुत, त्यों तूँ ताके संग ॥
आपहि को देखे न तूँ, तजि अपनो ही मूल ।
जो सब संकट सहहि शठ, सो सब तेरी भूल ॥

(९३)

व्यवहार दृष्टि शूँ भिन्नता घड़ी घड़ी री दीखे। कारण, प्रबल अभ्यास शूँ ज्यूँ स्वप्न दृष्टान्त। अब ज्यो आपाँ पृथ्वी आदि स्थूल पदार्थ देखाँ, वी आपाँ रा मानसिक है-मनरी वृत्ति है। अब एक आदमी घोड़ा ने देख रियो है, वो नी देखे जणी वगत दृष्टि सृष्टि-वाद शूँ घोड़ा रो भी अभाव व्हे' जावे। अब या शङ्का व्ही के एक आदमी नी देखे, वीं वगत दूसरो आदमी देखे सो के वे थाँ जणी वगत ईं ने नी देख्यो वीं वगत म्हूँ देख रियो हो, सो घोड़ा रो अभाव नी व्हियो, तो वो घोड़ो वीं आदमी रा विचार में रियो। अब देखणो चावे के वी दोई आदमी वा आँपाँ सब कई हाँ जो के देखाँ हाँ। ईं रो उत्तर यो व्हियो के आँपाँ कुछ नी, अहंकार रूपी एक ईश्वर री वृत्ति हाँ, सो सब जो एक ही री वृत्ति व्ही, तो एक ही रियो। माया रो व्यवधान अहंकार, तो ब्रह्म शूँ जों ने न्यारो देखावे पणि देखावा वाळो कई नी व्हियो तो कई दीखवा वाळो रियो यूँ ही ईश्वर री इच्छा माया मात्र सृष्टि है। पर्वतादि आपाँ देखाँ, सो आपाँ नी व्हिया,

तो देखणो पण नी रियो, तो केवल ईश्वर ही रियो। आपाँ नी रिया जदी पर्वतादि कठे रेवे। केवळ देखवा वाळो दूजो व्हे' जदी भ्रम व्हे'। अहंकार जो एक ही वस्तु ने दृढ़ व्हे' तो पलटे नी, पण यो कदी बाळकपणोआदि अवस्था भाई पुत्रादि सम्बन्ध, कर्त्ता पणाँ शूँ रेल में पेसेंजर, घोड़ा पे सवार आदि दुसरा गुणाँ ने घड़ी घड़ी में धारे है। धन हो तो धनी, ने उपड़ जाय तो दरिद्र, उधार ले' तो ऋणी, पर ईंरा शरीर शूँ ई न्यारा है। शूँ ही यो शरीर शूँ न्यारो है। धनरा सम्बन्ध शूँ दरिद्रआदि व्हे' तन रा सम्बन्ध शूँ रोगादि सेवे, आत्मा रा संबंध शूँ हरे फिरे, ज्ञान शूँ परो गळे कड़ा ज्यूँ पाँणी में मिळे यूँ ही वीं में मिळे।

यो संसार ईश्वर री इच्छा मात्र है "इच्छामात्रं प्रभोः सृष्टिः" ईश्वर सत्य संकल्प है, जीं शूँ संसार क्रम में विपरीतता नी आवे। क्यूँ के सामान्य री इच्छा में दोष व्हे' है। ईश्वर पूर्ण व्हेवा शूँ वीं में कुछ भी विपरीतता नी व्हे'। ज्यूँ मनुष्य इच्छा शूँ बँधे, ज्यूँ ही ईश्वर नी बँधे। क्यूँ के वीं में अविद्या रो अभाव है। ईश्वर री इच्छा ही अह-

ङ्कार है। ईश्वर री इच्छा ही मन, बुद्धि, आदि है। यावत् जो चित्त रो वृत्तियाँ है, ईश्वर री इच्छा ही है, ईश्वर री इच्छा ही पञ्चतत्वादि है, ईश्वर री इच्छा ही माया है, वीं में ही सम्पूर्ण आया है। ईश्वर की इच्छा शूँ वेद वण्या। ईश्वर री इच्छा ने घणा खरा असत्य, यूँ माने के वा न्यारी नी है। क्यूँ के न्यारा पणो "अहं, मम" शूँ यानि "अहं मम" दो इच्छा (वृत्ति) दृढ़ व्हेवा शूँ व्हे' है, सो ईश्वर में है नहीं। शतरंज रा रमणा अठीरा उठी मेल आदमी हार जीत हर्ष शोक माने. यूँ समझणोआदमी तो नी माने। कारण, वी तो लकड़ी रा आपाँरा वणाया थका चलाया थका, हार जीत भी आपणी कल्पना कीधी थकी है. फेर आपाँ वीं शूँ हर्ष शोक आदि क्यूँ अंगीकार कराँ। यूँ ही ईश्वर ने ईं में हर्ष शोकादि नी व्हेवे, व्यवहार भी यूँ ही है। शतरञ्ज री नाँई वैदिक कायदा बँध्या है, ज्यों प्यादो वजीर या राजा रा घर पे पोंछ जायगा वो वजीर व्हे' जायगा। फेर वा आपाँणों तो रूप छोड़ देगा पण वजीर तो एक ही व्हेवे सो वो ही मर जाय, पाछो व्हे' जाय। पण राजा तो कदापि नी मरे केवल केदरी भावना व्हे' जाय। रूपक शूँ विस्तार

तो देखणो पण नी रियो, तो केवल ईश्वर ही रियो। आपाँ नी रिया जदी पर्वतादि कठे रेवे। केवळ देखवा वाळो दूजो व्हे' जदी भ्रम व्हे'। अहंकार जो एक ही वस्तु ने दृढ़ व्हे' तो पलटे नी, पण यो कही बाळकपणोआदि अवस्था भाई पुत्रादि सम्बन्ध, कर्त्ता पणाँ शूँ रेल में पेसेञ्जर, घोड़ा पे सवार आदि दुसरा गुणाँ ने घड़ी घड़ी में धारे है। धन हो तो धनी, ने उपड़ जाय तो दरिद्र, उधार ले' तो ऋणी, पर ईंरा शरीर शूँ ई न्यारा है। यूँ ही यो शरीर शूँ न्यारो है। धनरा सम्बन्ध शूँ दरिद्रआदि व्हे' तन रा सम्बन्ध शूँ रोगादि सेवे, आत्मा रा संबंध शूँ हरे फिरे, ज्ञान शूँ परो गळे कड़ा ज्यूँ पाँणी में मिळे यूँ ही वीं में मिळे।

यो संसार ईश्वर री इच्छा मात्र है *"इच्छामात्रं प्रमोः सृष्टिः"* ईश्वर सत्य संकल्प है, जीं शूँ संसार क्रम में विपरीतता नी आवे। क्यूँ के सामान्य री इच्छा में दोष व्हे' है। ईश्वर पूर्ण व्हेवा शूँ वीं में कुछ भी विपरीतता नी व्हे'। ज्यूँ मनुष्य इच्छा शूँ बँधे, ज्यूँ ही ईश्वर नी बँधे। क्यूँ के वीं में अविद्या रो अभाव है। ईश्वर री इच्छा ही अह-

ङ्कार है। ईश्वर री इच्छा ही मन, बुद्धि, आदि है। यावत् जो चित्त री वृत्तियाँ है, ईश्वर री इच्छा ही है, ईश्वर री इच्छा ही पञ्चतत्वादि है, ईश्वर री इच्छा ही माया है, वीं में ही सम्पूर्ण आया है। ईश्वर की इच्छा शूँ वेद वण्या। ईश्वर री इच्छा ने घणा खरा असत्य, यूँ माने के वा न्यारी नी है। क्यूँ के न्यारा पणो "अहं, मम" शूँ यानि "अहं मम" दो इच्छा (वृत्ति) दृढ व्हेवा शूँ व्हे' है, सो ईश्वर में है नहीं। शतरंज रा रमणा अठीरा उठी मेल आदमी हार जीत हर्ष शोक माने यूँ समझणो आदमी तो नी माने। कारण, वी तो लकड़ी रा आपाँरा वणाया थका चलाया थका, हार जीत भी आपणी कल्पना कीधी थकी है, फेर आपाँ वीं शूँ हर्ष शोक आदि क्यूँ अंगीकार कराँ। यूँ ही ईश्वर ने ईं में हर्ष शोकादि नी व्हेवे, व्यवहार भी यूँ ही है। शतरञ्ज री नाँई वैदिक कायदा बँध्या है, ज्यों प्यादो वजीर या राजा रा घर पे पोंछ जायगा वो वजीर व्हे' जायगा। फेर वा आपाँणों तो रूप छोड़ देगा पण वजीर तो एक ही व्हेवे सो वो ही मर जाय, पाछो व्हे' जाय। पण राजा तो कदापि नी मरे केवल केदरी भावना व्हे' जाय। रूपक शूँ विस्तार

मय है। ई तरे ज्याँने निश्चय व्हे गई वाँने यत्न मोकली है। कारण, ईश्वर री इच्छा जो सत्य है, तो ईश्वर पण सत्य है, वीं शूँ न्यारी नी मानणी चावे। अगर असत्य है, तो कई व्हियो हो नहीं, तो मानवारी कई आवश्यकता है। ई शूँ संसार नी सत्य है ने नी असत्य है। ईश्वर सत्य है, ई शूँ संसार सत्य दीखे, पण सत्य नी है, विकार वान व्हेवा शूँ। ने ईश्वर सत्य है, ने संसार वीं शूँ न्यारो नी है, तो सत्य है। ज्यूँ मनुष्य री इच्छा (विचार) सूवती समय एक कंगाल में रही, वीं शूँ वो भी स्वप्न में कंगाल व्हे'गयो, ने दुःख पायो, जाग्यो, तो पूर्ण समृद्धिवान् है। यूँ ईश्वर री इच्छा महत्तत्व (स्वप्न) शूँ अहङ्कार ने उत्पन्न कर'यो ने अहङ्कार शूँ अनेक सुख दुःख पाया, पर अहङ्कार शूँ ईश्वर ने सुख दुःख नी व्हे' पण अहङ्कार ने हीज व्हे'। ज्यूँ मेस्मेरिजम वाळो दूसराँ ने वश में करे आपनी व्हे' ज्यूँ वाजीगर दूसराँ ने मोहित करे, आप नी व्हे' कंगाल री नाँई; पर आप जागता पे वोई है—

> "सपने होइ भिखारि नृप रंक नाकपति होहि ।
> जागे लाभ, न हानि कछु त्यों प्रपंच जिय जाहि"

माय-सम्पूर्ण संसार जदी ईश्वरेच्छा मात्र है,

फेर आपाँरी न्यारी स्वतन्त्र सत्ता मानणो मूर्खता है। जठा तक अँजन शूँ गाड़ी रो आंकड़ो नी जुड़े जतरे नी चाळे। गाड़ी ने यूँ नी विचारणो चावे, के म्हूँ चालूँ हूँ; केवल अंजन रे आधीन गाड़ी है। विना अंजन रे गाड़्याँ (ट्रेन) नी चाळे पण अंजन तो विना गाड़्यांरे पण चाळे है, ईं शूँ विना ईश्वर रे ईच्छा नी व्हे' पण ईश्वर तो विना इच्छा रे भी है। यूँ ही शाखा प्रशाखा शूँ माया रो पार नी। क्यूँ के इच्छा री कई अवधि। वीं री इच्छा में एक राजा व्हे' रियो है, ने एक कंगाल व्हे' रियो है, एक सुखी व्हे' रियो है, ने एक दुःखी व्हे' रियो है, यूँ ही द्वंद व्हे' रिया है वीं री इच्छा में अनेक मन अनेक बुद्धि आदि जतरो दीखे है। अगर वीं री इच्छा ही सब है, तो वचे देखवा वाळो पण कोई नी ने दीखे पण कई नी तो वो ही वच मे वीं री "अहं इच्छा" शूँ वां ही वीं री और इच्छा ने देखे एक इच्छा शूँ अनेक इच्छा देख रियो है।

(९४)

"राग, रोष; इर्षा, मद, मोहू।
जनि सपनेहु इनके वश होउ॥"

श्री मानस,

वर्ताव में लावा रा नियम—

(१) हरे'क काम पूर्ण विचार, आपणा बुद्धिमान शुभचिन्तकाँ ने पूछ, पत्त दुराग्रह (हठ) ने छोड़, शीघ्र ही आरम्भ कर देणो।

(२) लोभ शूँ कार्य रा अवगुण दृष्टि नी आवे है, ईं शूँ जो कार्य आरम्भ करणो, व्हे' शके तो वींरा गुण अवगुण एक पाना पे न्यारा न्यारा लिख तारतम्य देख दृढ़ता शूँ करणो।

(३) जो कोई अन्य प्रबळ कारण शूँ नियम भंग व्हे' जावे तो वीं रो वींज अनुसार प्रायश्चित्त कर काढ़णो।

(४) निषिद्ध कार्य प्राणान्त (मरण) व्हे' तो भी नी करणो।

(५) आपणा अवगुण पारस भाग * शूँ जाण छोड़वा में तत्पर व्हे'णो।

(६) मनुष्य मात्र री भलाई निस्सँकल्प (कामना रहित) भक्तियुक्त ईश्वर स्मरण में है।

(७) जी विशेष अवगुण व्हे' वाँरी याद दाश्त लिख लेणी।

---

* पारस भाग नामरी एक पुस्तक है।

(८) विना विचार वचन उचारण व्हे' सो त्यागणा।

(९) क्रोध री उत्पत्ति सहज में व्हे' सो त्यागणी।

(१०) कणी पण स्त्री रो दर्शण स्मरण सकाम (बुरी भावना राखने) नो करणो।

(११) भजन रा नियम, एकान्त सेवन में आळस्य वा मन छळ में आय, नी छोड़णो दृढ़ता शूँ निर्वाह करणो।

(१२) समय ने द्रव्य रा खर्च रा उचित प्रबन्ध करणो।

(१३) पुस्तक, वाँचवा शूँ भी समझणी ज्यादा।

(१४) मृत्यु शूँ भयनी करणो ईश्वर री इच्छा में प्रसन्न रेणो दुःख मिटावा रो उपाय करणो, परन्तु दुःख मिटवा री इच्छानी करणी, (क्यूँ के इच्छा शूँ दुःख ऊपजे)।

(१५) समय बाँधने वीं समय री वात वणीज समय विचारणी, विचार सँकर नी व्हे'णो (अनेक विचार नी करणा) अवश्य सँसारी व्यवहार में ईश्वरीय विचार राखणो पण, ईश्वरीय विचार में

कदापि संसारी विचार नी आवा देणो। (यो अभ्यास) दृढ़ता शूँ करणो।

(१६) अति भोजन (ज्यादा खावा) शूँ विचार उत्तम नी व्हे' अल्प (थोड़ा) शूँ शरीर ठीक नी रे' सो समान(अंदाजरो) भोजन करणो। आछी चीज व्हे' तो ज्यादा नी खाणी परिमाण शूँ खाणी। फेर पाचन रो भी विचारणो। क्यूँ के नी पचे सोही ज्यादा, ने पच जाय सो ही ठीक है।

(१७) अहङ्कार नी करणो, ज्यादा बोलवो भी अहङ्कार शूँ व्हे' ने नी बोलवो भी अहङ्कार शूँ व्हे'। पुस्तकाँ छपावणो वा बणाय ने शुणावणो आदि सूक्ष्म अहङ्कार अठा तक व्हे' के म्हने अहङ्कार नी है, ईं रो पण अहंकार व्हे' जाय है।

(१८) परमारथ विचार पे'ला भागरा ई लेख यादराखणा ३—७—१८—२७—२८—३१—३२ ३३—३७—४५—४८—५७—५८—६१।

परमार्थ–विचार
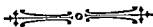
दूजो भाग

(१)

वीजण वास में श्याम भुजंग आय भींत नखे बेठो, सो पाछे आय डीळ रे अटक्यो, जदी विचार व्हियो कोई फड़को दीखे, पण जदी वणी खोळा में आवा री कोशीश की धी, जदी भारी जाण ऊँदरा को वा कोई अन्य जन्तु रो भ्रम व्हियो, सो कुड़ता ने झटका वा लागो, फेर ऊठ ने देख्यो तो साँप है। अस्या समय में मनख री हुँश्यारी कई काम देवे, म्हूँ, म्हारी हुँश्यारी शूँ वींरे नखे (पास) हाथ ले जाय रियो हो, ने ईश्वर हाथाँ ने छेटी रखाय रिया हा। मृत्यु शूँ बचावा पै भी जो वींरो भजन नी करां, ने मिथ्या में उळझां तो फेर दुःख व्हें जदी पछतावो नी करणो, ने नी प्रार्थना करणी चावे।

"विपरीतधारी बोय कर लुनतां क्यों पछताय"

वीं वगत म्हूँ विचार रियो हो के काले उदे-

पुर जावाँगा। रोट्याँरी त्यारी रो रसोड़दार ने कियो, सो त्यार व्हे' ही गी, है। अगर वो वाँ समय काटतो तो कई पएनीं व्हे' तो ईं शूँ पे'ली विचार ने पण मनण्व अनर्थ ही ज करे है। मनुष्य अनेक प्रकार शूँ मर शके है, फेर तुच्छ जीवन रो कई विश्वास।

प्राप्तंप्राप्तमुपासीत हृदयेन व्यरूपता।

भारवे

(सामने आई थकी बातने करणी, आगली नो विचारणी यो भाव है)

(२)

शरीर में अहंकार री अनेक शीश्याँ है। वणां में साफ़ जळ भर्यो है अब न्यार रंग री डळ्याँ एक एक में ळाळ, पीळी, हरी, काळीं, वगेरा न्हाकवा शूँ शीश्यां वीं वीं रंग री दीखे। वा, दो आदमी देवदत्त यज्ञदत्त बैठा है। वां में देवदत्त ने गाळ देवे, तो जीं देवदत्त नाम पे ममता जमाई है, वो क्रोध करेगा दूसरोनो। क्यूँ के वीं यज्ञदत्त पे ममता जमाई है। कुछ दिन वांरा नाम पलट जाय, तो विपरीत व्हे' जाय। यूँ ही शरीर पै भी है। पण

शरीर पै ममता कमी शूँ व्ही' जीं शूँ सहसा वीं पै शूँ नी हट शके, ज्यूँ नाम पै शूँ भी हटावा पै वीं नाम लेवा शूँ चित्त सहसा वठी चल्यो जाय ।

(३)

"अहं" माने है के (म्हूँ), दृष्ट (दीखवा वाळी) वस्तु नी हूँ (पण द्रष्टा हूँ) तो यूँ क्यूँ विचारणो के 'म्हारे लागी, म्हूँ रुपाळो हूँ, म्हारी स्तुति व्ही' म्हूँ वठे गियो, ने यो कीदो । शरीर तो रेल ज्यूँ है जीं ने कुछ भी ज्ञान नो है । अंजन चाले सो जळ, अग्नि वगेरा शूँ चाले, पण ड्राईवर कळ फेरे जदी चाले ड्राइवर विना वो नी चाले, ने खाली ड्राइवर शूँ पण नी चाले, जळ आदि शूँ पण चाले । पण छेटी वेठो वेठो मास्टर तार खटकावे सो घहुत छेटी रा टेशण पे भी खटके, यूँ ही मास्टर ईश्वर है, ड्राइवर जीव है, अंजन शरीर है, ने तार वृत्ति है ।

(४)

अहंकार सब में है, शरीर पे सब रो प्रेम है, स्त्री पुत्र आदि सब ने प्रिय है, यूँ ही सब प्रकृत सब (दीखती दुनियां) है । ईं शूँ "अहं" पण जड़

व्हियो। क्यूँ के आपांमें ही विशेष नी है। सब सामान्य में पण है, *या सब एक रूप है।*

" मैं मेरो तेरो तुही, तेरो मेरो हीन।
श्री राधा घनश्याम की लीला नित्य नवीन॥"
—निजकृत

(५)

गाड़ा री धुर (नाभि) आरा आदि फिरवा शूँ सब फिरे, पण बचे खीलो नी फिरतो भी फिरतो दीखे, यूँ माया शूँ ईश्वर में भ्रम व्हे' (ईश्वर खीलारे समान ने माया पेड़ो है।

(६)

द्रष्टा, (देखवा वाळो) दर्शन, (देखणो) दृश्य, (दीखवा वाळो) कारण, करण, कार्य सब में है। प्रत्यक्ष प्रमाण में करण इन्द्रियाँ, कार्य घट, कारण मन, ई मरे, शूँ सब रो कारण ईश्वर है, याने दर्शन कई वस्तु है ? दर्शन री सिद्धि जीं शूँ व्हे' वो ईश्वर। दर्शन कणी प्रमाण शूँ सिद्ध व्हे'। क्यूँ के दर्शन शूँ दृश्य सिद्ध व्हे' वो कीं शूँ सिद्ध व्हे' वींरो (दर्शन) कई रूप व्हियो ?

दर्शन ६ है। बस दर्शन रो दर्शन करवा शूँ सब दर्शन रो तत्त्व समझ में आवेगा, वा द्रष्टा रो

ने दृश्य रो मतलब भी विचार में आवेगा। ईं शूँ दर्शन ही विचारणो चावे।

(७)

इच्छा मात्रं प्रभो सृष्टिः

(भगवान री इच्छा ही सृष्टि है)

सब ईश्वर री इच्छा है। ईश्वर री इच्छा बुद्धि, ईश्वर री इच्छा 'अहं,' ईश्वर री इच्छा मन, यूँ ही पञ्च भूत आदि, सब सत्वादि कारण कार्य ईश्वर री इच्छा है। सो इच्छा, इच्छावान् शूँ न्यारी पण है। ज्यूँ मनुष्य री कोई इच्छा नाश व्हेवा शूँ मनुष्य रो नाश नी व्हे,' ने इच्छा विना इच्छावान् रे इच्छा रेवे पण नी। वास्तव में इच्छा रो कई भी रूप नी, ने इच्छा शूँ ही ज इच्छावान रो अस्तित्व सिद्ध व्हे'।

प्र० इच्छा दीखे क्यूँ है ?

उ० ईश्वर सत्य संकल्प है, जी शूँ। मनुष्य पण जदी मेसमेरिजम शूँ बाग तालाव आदि विना व्हियाँ देखाय देवे। हरेक स्वप्न में अनेक पदार्थ दीखे। वास्तव में वो ही निज इच्छा ने देख रियो है और वाँ री इच्छा शूँ ही जड़ 'अहं' जाणे देख

रियो है। यो 'अहं' ही मुख्य कपाट ईश्वर जीव रे वचे है। अणी न्यारा न्यारा कीधा है। स्वप्न जाग्रतादि सब यो ही देखे। यो मूर्ख (अहंकार) वचे ही आय देखवा रो अभिमान करे।

अहङ्कारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ।
नैव किञ्चित्करोमीति युक्तं मन्येत तत्त्ववित् ॥

—श्री गीता

बड़ा राजा रे मूँड़ा आगे सेवक केवे 'तावेदार हाजर व्हियो, तावेदार फलाणी जगा' गियो। पण म्हूँ (अहं) नी आवा दे।' क्यूँ के राजा रे आगे म्हूँ (अहं) कई चीज है। यो सेवक आपने पराधीन जाणे, ई शूँ तावेदार गियो आदि अस्या प्रयोग करे के आपणी सत्ता जणा में कुछ नी व्हे'। पण यो जड़ जीव परमेश्वर रे मूँडा आगे अहङ्कार करे, ने आपरी न्यारी ही सत्ता माने, तो ई ने दुःख मिलणो उचित ही है, भारी गलती या ही है। जदी यो के' वे, के 'अहं' जदी ईश्वर रे मूँड़ा आगे ई नालायकी रा कसूर शूँ यो बँधावा री सजा पावे। जदी के' वे 'नाऽहं' (म्हूँ तो कई ना हूँ) जदी छोड़वा रो इनाम पावे।

(८)

आत्म समर्पण रो विचार ही भक्ति है। क्यूँके विना भक्ति ईश्वर प्राप्ति कठिन है। सख्यादि सब भक्ति में आत्म समर्पण करणो पड़े। वात्सल्य में ज्यूँ दशरथ जी महाराज आत्म समर्पण कर्‌यो, यूँ ही आत्मा ने अलग राख, प्रेम करे, वो संसारी प्रेमवत् व्हे' जाय। ज्यूँ संसारी आपणी आत्मा रे वास्ते पुत्रादि पै प्रेम करे, पण अठे ईश्वर रे वास्ते आत्मा है, वो आपणे वास्ते कुछ भी नी चावे। ज्यूँ श्री व्रज गोपिका "आपरे वन में कोमल चरण में कण्टक लागता व्हे'गा, यो दुःख है" इत्यादि भक्ताँ रा अनेक वचन है।

(९)

वासना रहित व्हे' णो मोक्ष है। वासना युक्त मनख जंगल में एकान्त में भी बंध्यो है, ने ईं शूँ रहित सभा में भी मुक्त है। वासना है, के नी, ईं रो परीक्षा या है, के झट झट नाम स्मरण अन्तः करण में करणो, जदी नाम रे बचे बचे विचार पैदा व्हे' वो वासना रो ही ज कारण है। पण नाम में बड़ी सामर्थ्य है, यो वासना पिशाचिनी ने नाश कर देवे है।

"सहज उपाय पाय वे केरे
नर हत भाग देइ भट भेरे"
—मानस

वर्षाणे एक पण्डितजी मिल्या, वी जप करता हा, वणा कियो के अबे ईं शूँ (जपशूँ) म्हारी वासना नष्ट व्हे' उदासीन वृत्ति व्हे' गई है।

(१०)

परमारथ विचार रो सार यो है, के नाम स्मरण जस्यो तो कोई सरल उत्तम साधन नी, ने भक्ति समान सिद्धि नी। ईं रो ज्यादा लिखवा में विस्तार रो भय है, ने जगा' जगा' लिख्यो पण है, तो भी मन ने समझावा तावे जस्यो कुछ विचार व्हियो, फेर कुछ लिखूँ हूँ। साधन रो यो नियम है, स्थूल शूँ सूक्ष्म देश ने प्राप्त करणो कारण, स्थूल में स्वाभाविक ही प्रवृत्ति है। ईं शूँ एका एक सूक्ष्म री प्राप्ति नी व्हे' शके। पूर्व संस्कार वा जन्म सिद्ध री वात न्यारी है। यो दो प्रकार रो व्हे' है—एक में पूर्व साधन रो त्याग, ने पर रो (दूजारो) ग्रहण। ज्यूँ हठ योग शूँ मन्त्र लय, लय शूँ राजयोग, एक अस्यो के ज्यूँ वेदान्त रो विचार। या प्रारम्भ ही में राज

योग। पर नाम स्मरण अश्यो है, के ईं में जो प्रारम्भ कर्‌यो जाय, वो ही ठेठ तक पहुँचाय देवे याने वाही परा अवस्था है। ज्यूँ सड़क, एक अशी व्हे', जठे पलट पलट, ने मुकाम पे पौंछे ज्यूँ रेल ने चेञ्ज करणो (बदलणो) पड़े। एक शूदी थ्रू ट्रेन व्हे' जीं में वीं ने छोड़वा री आवश्यकता नी पड़े। हाँ, मुख शूँ, जिव्हा शूँ, कण्ठादि देश शूँ, वा मन बुद्धि शूँ जरूर भेद दीखे है, पण मन ही मुख्य कारण है। जणी मणख री बोलवा में मन लागे, वो बोल ने करे तो स्मरण व्हे' ही रियो है। जीं री बोलवा सिवाय मन और जगा, जाय, वीं ने मन में करणो चावे। बुद्धि शूँ स्मरण व्हे' रियो है, वो ने ब्रह्म साक्षात्कार में कोई भेद नी है। केवल सविकल्प निर्विकल्प री भेद दीखे है, सो भी स्वतः निर्विकल्पता ने प्राप्त व्हे' जाय है, याने स्मरण शूँ मतलब यो है, के सुरति नाम में लागी रेवे। ब्रह्मसाक्षात्कार पण यो ही हे। ब्रह्माकार चित्त री वृत्ति व्हेवे, ईं में विशेषता या है, के चित्त री चञ्चलता शक्ति, जो कणी भी साधन शूँ नाश नी व्हे,' ईं शूँ सहज में वा नष्ट व्हे' जाय, ने दूसरा साधन में जो वार वार प्रयत्न

उठे, वीं ईं शूँ नी व्हेवे। किन्तु निश्चय व्हे' जावे। श्री करूणा निधान आज्ञा करे है, के—

"अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः॥"

—श्री गीता

याने नाम ही ने सर्वस्व समझ निरन्तर स्मरण करे, वीं ने ब्रह्म ज्ञान री आवश्यकता नी। क्यूँ के ज्ञान शूँ ईश्वर दुर्लभ है। कारण, स्थूल वृत्ति चित्त री व्हेवा शूँ ब्रह्म री साक्षात्कार वृत्ति नीं कर शके। क्यूँ के वशी (ब्रह्म जशी) कोई वस्तु हाल ईं नी देखी सो वीं ने यो किस तरे' जाण शके, तो यो विपरीत निश्चय कर बैठेगा। या तो शून्य ने ही ब्रह्म मान लेगा, या ब्रह्म ने विचारताँ विचारताँ खुद शून्य व्हे' जाय इत्यादि अनेक विघ्न ईं ने प्राप्त व्हेगा, पर नाम शूँ सहज ही यथार्थ ब्रह्म ज्ञान ईं ने व्हे' जायगा, सो ही योग सूत्र में लिख्यो है व्याधि आदि विघ्न नाम स्मरण शूँ मिटे, ने समाधि री प्राप्ति व्हे'। ज्यूँ कोई नाद ने ही ब्रह्म मान ले,' कोई ज्योति ने ही मान बैठे, सो वास्तविक ज्ञान उपरोक्त श्लोकानुसार स्मरण शूँ सहज में व्हे,'।

ई ओ मुखरा वचन है और साधन कष्ट मय है, ने अल्प फल है। पण अश्यो और नी है। श्री भक्ति शूँ भी यो ही तात्पर्य है। भक्ति, नाम री चरमावस्था रो नाम है।

प्र० भक्ति वा ज्ञान में कोई अन्तर है?

उ० ज्ञान, भक्ति में कुछ भी अन्तर नी है।

मेरे प्रौढ़ तनय सम ज्ञानी

बालक सुत सम दास अमानी

दुहु दुहु काम क्रोध रिपु आहीं

—श्री मानस

काम, क्रोध ने छोड़णो मुख्य है। भक्ति अशी है, जीं में धीरे धीरे काम, क्रोध छोड़्या जाय, वा आप ही ईश्वर छुड़ाय देवे। कारण अहङ्कार प्रबल शत्रु है, ईं शूँ ही काम क्रोध व्हे है। भक्ताँ ने सर्वदा यो विचार व्हे "ज्यो व्हे ईश्वरेच्छा शूँ व्हे" अबे वणारो अहङ्कार कई करे, फेर मनुष्य शुरू में अश्यो फश्यो व्हे, के वो वैराग्य रा नाम शूँ ही नाराज व्हे वो वणीज अनुराग ने ईश्वर में करवा शूँ परम पद ने प्राप्त व्हे जावे। कन ही आदमी ज्ञान रा अधिकारी नी व्हे है।

चार साधन (मैत्री, करुणा, मुदिता, उपेक्षा) अवश्य अधिकारी में चावे, पण ईं में "मीठी दवा रोग ने मिटावे" जशी बात है, के ईश्वर या लोला कीधी, यूँ बाताँ करी, श्रस्यो ईश्वर, (*जगतो यो जगच्चय:*) इत्यादि साथे साथे ही सहज में लौकिक प्रेम जो झूठ है असत्त (सत्य) व्हे' जावे। मेघनाद ईश्वर ने नाग पाश में बांध्या वो मनुष्य भाव में ईश्वर भाव है—

भव बन्धन ते छूट हीं, नर जपि जाकर नाम।
सर्व निशाचर बाँधेउ, नाग पाश सोइ राम॥

—श्री मानस

खाली ज्ञान, अज्ञान शूँ भी ज्यादा है। भक्ति शूँ ईश्वर रो सच्चिदानन्द, पण सहज में ज्ञात व्हे'। खाली ज्ञानी, आकाशादि वत् ईश्वर ने भी मान ले, क्यूँ के शून्य रो मनन करवा लाग

रो वर्णन करवा शूँ गौरव व्हे'गा, पण पुराण ने विचारवा शूँ या वात समझ में आय शके है। जठे युगल स्वरूप रो वर्णन है, वठे प्रकृति पुरुष। एक ईश्वर री विशेषता है, वठे वेदान्त। यूँ ही सब समझणा।

(११)

एक व्यक्ति ने स्वप्न अणावा री युक्ति याद ही। वो दश दिन, पन्द्रा'दिन चावे जतरे, चावे जश्यो, स्वप्न राख शकतो हो। बस, ईश्वर ही वो व्यक्ति है, संसार ही वो स्वप्न है, वो चावे जतरे ही (संसार) रेवे। यदि मनुष्य या विचार ले' के अबे स्वप्न आवेगा ने वो असत्य है, वीं में हर्ष शोक नी करणो चावे, यूँ विचार ने शूवे, ने स्वप्न आवे, जदी वीं रा वी हर्ष, शोक, वीं ने व्हेवा लाग जाय। यूँ ही ज्यो दृढ़ कर स्वप्न देखे वीं ने नी पण व्हे' परन्तु बुद्धि या रेवे, के यो स्वप्न है, जदी है।

(१२)

थूँ ज्यूँ म्हूँ, ने म्हूँ ज्यूँ म्हूँ, मतलब, ज्यूँ ई वृत्यॉं है, ज्यूँ म्हूँ पण चित्त री वृत्ति है।

(१३)

चित्त में अहं री अञ्जली पड़गी सो वार वार आय जाय ओशान राखने छोड़णी।

(१४)

एक आदमी चायो, सब चीजां म्हने मिल जाय, एक बुद्धिमान लम्प (दीवो) जोय आगे मे'ल, कियो ईं में सब है, अव्यवधान पण याँ पाँच री ही पाँच में पड़े है, वा शरीर में है, अर्थात् ईं में पांच ही तत्त्व शामिल व्हे' गया।

(१५)

एक जिज्ञासु ने एक महात्मा पूछ्यो थूँ कई चावे ? वों कही, ईश्वर ने चाऊँ हूँ। वाँ कही, ईश्वर ने चावा री इच्छा एकली ही रे' है। अर्थात् और कई पण चाह नी रे'णी चावे। ईश्वर ने चावताँ ही ईश्वर मिले, पण चाह री ही ज अभाव है। क्यूँ के ओर पण संकल्प वचे वच्चे व्हे' सो ओर चाह री ही ज कारण है।

(१६)

स्थूल शरीर एक ही है। क्यूँ के पाँच भूतरो व्हेवा शूँ आकाश शूँ पृथक्ता (न्यारा) नी व्हे'। आकाश शूँ न्यारा मानवा शूँ पेट में भी वो सर्वत्र

व्यापक व्हेवा शूँ सब ही न्यारा न्यारा व्हे' जायगा सो शरीर व्यक्ति ने हो न्यारा क्यूँ मानणा। यूँ ही सूक्ष्म शरीर एक है, ज्यूँ स्थूल में सिवाय आकाश न्यारो व्यवहार कई नी है, यूँ ही सूक्ष्म एक व्हेवा पर भी विचार ही पृथक् है। विचार पण सूक्ष्म शरीर शूँ न्यारो नी, यूँ ही कारण ईश्वर ब्रह्म। पेली पण या ही ज बात और तरे' शूँ कुछ फर्क शूँ लिखी।

(१७)

नाम स्मरण मानसिक करणो, वणी वगत प्रतीक उपासना करणी। प्रतीक वीं ने के'वे जीं में नाम ही ने साक्षात् उपास्य मानणो। याने नाम नामी में अभेद भावना करणी, यो विचार दृढ़ता शूँ राखणो के और म्हारे कोई भी कर्तव्य नी है। सिवाय इँ रे। वा स्मरण करती वगत जो चित्त अठी रो उठी, जावे, तो यो विचारणो के कुल तमाम नाम सिवाय प्रलोभन है, बाँधवा री पाशाँ है, नाम शूँ हट्या के बन्धन व्हियो। अगर कोई सांसारिक कार्य व्हे' तो वीं रो चिन्तवन नी करणो, याद आवे ने कर्तव्य व्हे' तो नाम में सुरता राख, कर काड़णो। वा एक पानां पे याद लिख लेणी, ने एक टेम राखणी वीं वगत कर काड़णो।

(१३)

चित्त में अहं री अञ्जली पड़गी सो वार वार आय जाय ओशान राखने छोड़णी।

(१४)

एक आदमी चायो, सब चीजां म्हने मिल जाय, एक बुद्धिमान लम्प (दीवो) जोय आगे मे'ल, कियो ईं में सब है, अव्यवधान पण याँ पाँच री ही पाँच में पड़े है, वा शरीर में है, अर्थात् ईं में पाँच ही तत्त्व शामिल व्हे' गया।

(१५)

एक जिज्ञासु ने एक महात्मा पूछ्यो थूँ कई चावे ? वाँ कही, ईश्वर ने चाऊँ हूँ। वाँ कही, ईश्वर ने चावा री इच्छा एकली ही रे' है। अर्थात् और कई पण चाह नी रे'णी चावे। ईश्वर ने चावताँ ही ईश्वर मिले, पण चाह रो ही ज अभाव है। क्यूँ के ओर पण संकल्प वचे वच्चे व्हे' सो और चाह रो ही ज कारण है।

(१६)

स्थूल शरीर एक ही है। क्यूँ के पाँच भूतरो व्हेवा शूँ आकाश शूँ पृथक्ता (न्यारा) नी व्हे'। आकाश शूँ न्यारा मानवा शूँ पेट में भी वो सर्वत्र

व्यापक व्हेवा शूँ सब ही न्यारा न्यारा व्हे' जायगा सो शरीर व्यक्ति ने हो न्यारा क्यूँ मानणा। यूँ ही सूक्ष्म शरीर एक है, ज्यूँ स्थूल में सिवाय आकाश न्यारो व्यवहार कई नी है, यूँ ही सूक्ष्म एक व्हेवा पर भी विचार ही पृथक् है। विचार पण सूक्ष्म शरीर शूँ न्यारो नी, यूँ ही कारण ईश्वर ब्रह्म। पेली पण या ही ज बात और तरे' शूँ कुछ फर्क शूँ लिखी।

(१७)

नाम स्मरण मानसिक करणो, वणी वगत प्रतीक उपासना करणी। प्रतीक वीं ने के'वे जीं में नाम ही ने साक्षात् उपास्य मानणो। याने नाम नामी में अभेद भावना करणी, यो विचार दृढ़ता शूँ राखणो के और म्हारे कोई भी कर्तव्य नी है। सिवाय इँ रे। वा स्मरण करती वगत जो चित्त अठी रो उठी, जावे, तो यो विचारणो के कुल तमाम नाम सिवाय प्रलोभन है, बाँधवा री पाशाँ है. नाम शूँ हट्या के बन्धन व्हियो। अगर कोई सांसारिक कार्य व्हे' तो वीं रो चिन्तवन नी करणो, याद आवे ने कर्तव्य व्हे' तो नाम में सुरता राख, कर काड़णो। वा एक पानां पे याद लिख लेणी, ने एक टेम राखणी वीं वगत कर काड़णो।

प्र० विना विचार यूँ कठिन कठिन वातां किस तरे व्हे ? क्यूँ के अर्थ शास्त्र में केये के—

"बिना विचारे जो करे सो पाछे पछताय"

उ० विचार शूँ व्हे सो ठीक, पण बुद्धि री, विचार साथे भी आवश्यकता विना बुद्धि रो विचार ऊँधो पड़े। ईं शूँ नाम उपासी रे जश्यो थोड़ी देर में विचार व्हे वश्यो दूज्यूँ घणा समय में भी नी व्हे।

(१८)

उदार हृदय व्हेणो। मतलब यो के जदी मनख शोक, भ्रम, लोभ आदि रे वश व्हेवे, जदी स्थूल हृदय भी संकुचित व्हे, क्यूँ के चैतन्य हृदय रे ईंरो पक्को समबन्ध व्हे ज्यूँ है। ईश्वर चैतन्य हृदय भी उदार रेवे तो यो भी, रेवे याने खुल्यो रेवे। ईं शूँ उदार हृदय री प्रशंसा है, के वी कणी दुःख ने प्राप्त नी व्हे।

(१९)

वासनाद्वासुदेवस्य वासितं भुवनत्रयम्।
सर्वभूतनिवासोऽसि वासुदेव नमोस्तुते ॥१॥

३७-३८ वों विचार ही ज, ईं रो अर्थ है।

सम्पूर्ण वासनामय संसार जणी शूँ है, ने वासना रूप ही शूँ जो सर्वव्यापक ने सब शूँ प्रथक् है।

रवि आतम भिन्न न भिन्न जथा।

मानसे,

जो ईश्वर है वीं रा वासुदेव, शंकर्षण प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, जीव, ईश्वर अहङ्कारादि भक्ति मत शूँ भेद है "सब एक ही"।

(२०)

नाम प्राणायाम भस्त्रा!

प्राणायाम किस तरे' करणो, ने सहज में प्राणरो जय किस तरे' व्हे'? इत्यादि जिज्ञासा करवा री कोई आवश्यकता नी है। केवल नाम स्मरण शूँ प्राण वश में व्हे' जायगा। भस्त्रा प्राणायाम री विधि शूँ नाम स्मरण व्हेवा शूँ भी जल्दी ही प्राणायाम व्हे' शके है। ईं री विधि या है। के श्वास लेती वगत वणी श्वास पे जतरा व्हे' शके नाम लेणा, निकळताँ भी यूँ ही। ईं में उच्चारण व्हे' ज्यूँ जणावे। ईं शूँ चित्त चञ्चलता भी करे, तो पण कुछ भय नी, स्वयं चञ्चलता मिट जायगा, ने एकाग्रता ने अनेक उत्तम अनुभव व्हे'गा। सिर्फ संकल्प मिटावा री विचार राखणो, फेर

सब मिट जायगा। सिर्फ गरमी जणावेगा, कफ-क्षय व्हे'गा, उत्तम साधन है।

(२१)

भूगत भोग व्हे' रियो है।

ज्यूँ कणी नखे ही पट्टा वा पक्की सबूत व्हे' के या वस्तु ई री है। ज्यूँ शास्त्र, सन्त केवे के जीवादि में पृथक् सत्ता कुछ नी है। ईश्वर ही री है, पर घणां दिनाँ शूँ ई पे अज्ञान रो भुगत भोग व्हे' गयो, ने झूठा गवाह भी मूर्ख थोड़ा लालच में आय के' या लाग गिया, ने नवा परवाना नास्तिक दर्शन भी वणाय लीधा। इँ वास्ते यो न्याय फोज-दारी रे विना तैं' नी व्हे' गा। ई वास्ते प्रबोध चन्द्रोदय अनुसार देवी सम्पद (देवी फौज) शूँ आसुरी (फौज) ने मारणी चावे।

(२२)

अनुभव—

डेसणोक श्री वन्दावन, चित्तौड़, बीजण वास रा विचार अवश्य याद राखणा चावे।

(२३)

तृष्णा—

ईश्वर में मन क्यूँ नी लागे ? जदी तुच्छ विषय में कुछ भी सुख नी है, प्रत्यक्ष में नाश व्हे'ता

देखरियाँ हाँ, फेर याँ शूँ वैराग्य क्यूँ नीव्हे' ? श्री व्यासादि महात्मा रा उत्तम २ उपदेशाँ रो नित्य पाठ कराँ फेर क्यूँ याँ रो असर नी पड़े ईं रो, वा परमारथ शूँ मनुष्य विमुख क्यूँ व्हें' है ? ईं रो उत्तर अतरोई है के—"कामना,चाह, वासना।

'चाह कोटि की अरु कौड़ी की दोनों देख बराबर हैं।
राज रंक तृष्णा के मारे व्याकुल दीन सरासर हैं॥'

श्री बलवन्तराव,

किंचित् भी वासना व्हीं' के ज्ञान नाश व्हे' जायगा। क्यूँ के इच्छा—वासना शूँ ही बन्धन है। ईं वास्ते यूँ विचारणों के यूँ म्हारे प्रबन्ध कर भजन करूँगा, पूरी मूर्खता है, के पे' ली ही भजन रो शत्रु वासना ने उत्पन्न कर दीधी। हाँ, दूसरी वासना शूँ या ठीक है, पण भजन में या ही भारी विघ्नकारी है। ईं शूँ भजन रो समय भी मनख चूक जाय है। ज्यादा कई, सौ साठ वर्ष ईं में ही बीत जाय है, ईं वास्ते श्री गीताजी में आज्ञा है के—

"अनित्यमसुखं लोक इमं प्राप्य भजस्व माम्"।

श्रीगीताजी

समयो हेरत भजन करन को, समयो कबहु न पावेगो।
दिन समयो जगदुंद में बीतत, निशि मन जाग अपावेगो॥

कृष्ण कुंवर सुमिरन को आछो, समयो कबहु न आवेगो।
नागरिदास समय हेरत ही, अन्त समय व्है' जावेगो ॥१॥

श्री नागरीदासजी,

जो उत्तम निर्दुःख समय चावो, सो वासना त्याग शूँ ही व्हे'गा, दुज्यूँ नी व्हियो, नी व्हे'गा। आपां संसारी काम रो तो अतरो आळश नी करां, कणी कणी दिन रोटी भी नी खावां, कदी कदी राते नींद भी नी काढां, कदी आखोदिन धूप, शीत, वर्षा, शरीर पे सहन करां, पण ईश्वर स्मरण ईं तरे' चित्तलगाय कदी नी कीधो। अहा ईं रा संकल्प राते भी सपना में प्रत्यक्ष दीखे। ने जो काम बगड़गयो, वीं री चिन्ता छाती ने दग्ध कर्‌याँ करे। पण भारी काम ईश्वर रो स्मरण नी व्हियो। ईं विचार शूँ कदी किश्चित् भी घृणा नी व्ही'। जदी महाकष्ट उठाय लौकिक सुधारवा वार, लोग कई के'गा, यूँ विचार, यीमार लोक रंजन (राजी) करवा री ... यूँ नी विचार्‌यो के झूठा

लोगाँ रो अतरो विचार, पण व्यास आदि महात्मा जदी आपां मनुष्य जन्म हार गियाँ हाँ, कई के'वेगा।

जदी लोक वासना, शास्त्र वासना, देह वासना, कणी शूँ पूरी नी व्ही' तो आपां तुच्छां शूँ पूरी किस तरे' व्हे'गा, श्री करुणानिधान मर्यादा पुरुषोत्तम रघुकुल तिलक आदि शक्ति, जगन्माता रो त्याग कीधो, राज रो त्याग कीधो, तो भी ईं ने पूरी नी कीधी, सुरगुरु (बृहस्पति) भी विद्या नी जाणता सो कच (बृहस्पत्ति जी रो पुत्र) शुक्रजी शूँ शीखवा गयो।

शक्रादयोऽपि यस्यान्तं न ययुः शब्दवारिधेः।
(इन्द्र भी पार नी पाया जणी शब्द समुद्र रो ॥)

सारस्वत,

फेर ईं ने कुण पूर्ण कर पावेगा। देवता अमर-वाज ने भी जदी पढ़े, तो मर्त्य (मनुष्य) ने ईं अभिलाषा रो त्याग करवा में कई ऊजर है। चन्द्रमा रे क्षय है, दो वैद्य स्वर्ग में विद्यमान है। और जदी शोक रे वास्ते भी अनेक दुःख ने सुख रूप मानाँ हाँ ने यन्त्रणा सहाँ हाँ। फेर भी शोक ही बाकी रे' ने तुच्छ सुख वीं में मान्यों थको है।

समयो हेरत भजन करन को, समयो कबहु न पावेगो।
दिन समयो जगदुँद में बीतत, निशि मन जाग भ्रमावेगो॥

कृष्ण कुंवर सुमिरन को आछो, समयो कबहु न आवेगो।
नागरिदास समय हेरत ही, अन्त समय व्है' जावेगो॥१॥

श्री नागरीदासजी,

जो उत्तम निर्दुःख समय चावो, सो वासना त्याग शूँ ही व्हे'गा, दुज्यूँ नी व्हियो, नी व्हे'गा। आपां संसारी काम रो तो अतरो आळश नी करां, कणी कणी दिन रोटो भी नी खावां, कदी कदी रातै नींद भी नी काढां, कदी आखोदिन धूप, शीत, वर्षा, शरीर पे सहन करां, पण ईश्वर स्मरण ईं तरे' चित्तलगाय कदी नी कीधो। अश्या ईं रा संकल्प राते भी सपना में प्रत्यक्ष दीखे। ने जो काम वगड़गयो, वीं री चिन्ता छाती ने दग्ध कर्‌याँ करे। पण भारी काम ईश्वर रो स्मरण नी व्हियो। ईं विचार शूँ कदी किञ्चित् भी घृणा नी व्हीं'। जदी महाकष्ट उठाय लौकिक सुधारवा वास्ते याने लोग कई के'गा, यूँ विचार, बीमार पड़ गया, पण लोक रंजन (राजी) करवा री कोशीश कीधी। पण यूँ नी विचार्‌यो के झूठा

लोगाँ रो अतरो विचार, पण व्यास आदि महात्मा जदी आपां मनुष्य जन्म हार गियाँ हाँ, कई के'वेगा।

जदी लोक वासना, शास्त्र वासना, देह वासना, कणी शूँ पूरी नी व्ही' तो आपां तुच्छां शूँ पूरी किस तरे' व्हे'गा, श्री करुणानिधान मर्यादा पुरुषोत्तम रघुकुल तिलक आदि शक्ति, जगन्माता रो त्याग कीधो, राज रो त्याग कीधो, तो भी ई ने पूरी नी कीधी, सुरगुरु (बृहस्पति) भी विद्या नी जाणता सो कच (बृहस्पति जी रो पुत्र) शुक्रजी शूँ शीखवा गयो।

शक्रादयोऽपि यस्यान्तं न ययुः शब्दवारिधेः।
(इन्द्र भी पार नी पाया जणी शब्द समुद्र रो॥)

सारस्वत,

फेर ई ने कुण पूर्ण कर पावेगा। देवता अमर-वाज ने भी जदी पढ़े, तो मर्त्य (मनुष्य) ने ई अभिलाषा रो त्याग करवा में कई ऊजर है। चन्द्रमा रे क्षय है, दो वैद्य स्वर्ग में विद्यमान है। और जदी शोक रे वास्ते भी अनेक दुःख ने सुख रूप मानाँ हाँ ने यन्त्रणा सहाँ हाँ। फेर भी शोक ही बाकी रे' ने तुच्छ सुख वीं में मान्यां थको है।

तो फेर परमानन्द सुख अखण्ड नित्य है। सचिदानन्द रा भजन रो शोक क्यूँ नी करॉं।

> *"नर संसारी लगन में, सुख दुख सहे शरीर।*
> *नारायण हरि नेह में, जो हांवे सो थोर॥*
>
> श्री नारायणदासजी,

> *'चाह बिना ही जो करे, कहे नरन के काज।*
> *दियो ताहि साँचेन को सुमिरण श्री वृजराज॥'*
>
> निज-कृत (म० चतुरसिंहजी)

सब रो मतलब वासना त्याग शूँ है।

(२४)

विचार मात्र है !

घणा खरा मनख कोई काम करणो विचारे, कोई दूजो पूछे यो काम आप करोगा ? जदी वो के' वे हाल तो विचार मात्र है। पण जदी कर काढ़े, वीं काम रे वास्ते के' वे, यो तो म्हें कर काड्यो। पण कर कई काड्यो विचार काड्यो, यो भी विचार मात्र है। केवल विचार मात्र रो ही विचार मात्र में फरक दीखे। दूज्यूँ विभाग करवा री चीज न्यारी, अन्य व्हे' णी चावे। पण आश्चर्य

है, विचार मात्र नी करवा शूँ विचार मात्र में वंध रियाँ हां।

(२५)

म्हाँ शूँ तो कई नी व्हे'।

"नैव किञ्चित्करोमीति युक्तं मन्येत तत्ववित्।"

श्री गीताजी

महात्मा शूँ कई नी व्हे' वी करता दीखे पण कई नी करे। क्यूँके "अहं" जदी कई नी है, और विचार भी कई नी है, वृत्त्याँ कई नी है, जदी किसतरे' कई है। जदी याँ विचाराँ (दृढ़-वृत्त्याँ) शूँ व्हे', तो भी ज्या चीज कई नी है, वींरा भेद दृढ़ अदृढ़ भी कई नी व्हिया। "वात की वात करामात की करामात" रो भी यो ही मतलव है। सव शूँ वड़ी करामात या ही है के म्हूँ नी, जदी म्हाँ शूँ कई व्हे'।

(२६)

स्वप्न में अशी वरोवर श्रोशान रे'वे के यो स्वप्न है। तो भी हर्ष शोक व्हे'। पण जदी जाग्रत री याद आवे, जदी स्वप्न री याद भूल

जाय। ईश्वर री याद शूँ संसार भूलणी आवे, संसार भूलवा शूँ ईश्वर याद आवे, केवल ज्ञान शूँ कई नी व्हे'। दृढ़ता चावे, ज्ञान में श्रवण मनन निदिध्यासन चावे, भक्ति में प्रेम चावे।

(२७)

भाटो वघे, तो के' हाँ वघे।

बुद्धि निश्चय दृढ़ करवा रो नाम है। मन के'वे यूँ व्हियो, बुद्धि केवे ठीक यूँ ही व्हियो। वारवास में मनख व्हे', कोई के'वे, वो तो मर गियो, बुद्धि वीं ने ही मान ले। आँखाँ फूटे कोई के' ऊँट आयो, वस या ही सही। यूँ ही बुद्धि शूँ संसार रो निश्चय है। बुद्धि याने दृढ़ चित्त री वृत्तिः।

(२८)

सहस्रार्जुनीय न्याय।

वासना मेटाँ के अहङ्कार?

सहस्रार्जुन रा हाथ कटवा शूँ भी सहस्रार्जुन पणो नाश व्हे'गयो ने शरीर शूँ भी। मतलब विना शरीर केवल हाथ सहस्रार्जुन नी है, विना हाथ

केवल शरीर सहस्त्रार्जुन नी है। चाहे जो ही पूर्ण मिटवा शूँ जीव पणो मिट जायगा। वासना अनेक है 'अहं' एक है। सो एक ने जीतवा में सुगमता व्हे'गा, फेर ज्यूँ सुगम पड़े। एक पराक्रमी दीखे तो क्रम क्रम शूँ छोटी वासना काट पछे म्होटी काटणी, पण शीघ्रता ईं में उचित है।

(२९)

हाल तो नाचेगा।

वासनादि विलकुल परमारथ री आड़ी नी जाय तो यूँ जाणणो, नाचणी हाल नाचेगा। क्यूँ के थाकी नी है। नाचवाने जगा' चावे वीं शूँ बेठवा ने तो थोड़ी'ज चावे, पण हाल ईंरो नाचवा रो विचार है, पण जणी पृथ्वी पे नाच री' है वणी जगा' बेठवा शूँ आराम मिलेगा। या शो'गीन नचाय रिया है, सो या भी थाक ने भी लोभ शूँ नाचे है। जतरे लोभ है जतरे नाचणो हो पड़ेगा। असी वृत्ति वाळा ने उपदेश नी करणो। महात्मा कर शके है।

(३०)

सब प्रत्यक्ष है।

माया, ब्रह्म, ईश्वर–श्रीरामचन्द्रजी, सीताजी-

(३५)

रां के भक्ति ?

रो वर्णन पे'ली आयगियो। भक्ति रा विघ्न
ं ने ज्ञान रा भक्ति में देखाया, सो दोषाँ
रा छोड़, बाकी रे' ज्यो करणो। ज्यूँ भक्ति
मनन जागरणादि ईश्वर सम्बन्धी नाम
नर्थ करे, ज्ञान वाळा जीव ने ब्रह्म के',
करे। पण अवार रा पे'लो नवधा भक्ति, ने
ज्ञान री भूमिका, आत्म समर्पण, ने तुरीया
अवस्था) एक ही है। निर्विकल्प वा
मुक्ति, ने पराभक्ति एक ही रो ज्ञान रो
केवल के'वा शूँ काम नी चाले शून्यता आवे

कवि हिं अगम जिमि ब्रह्म सुख अह मम मलिन जनेषु।

०—जैसे बिनु विराग सन्यासी।

ा—काम क्रोध लोभादि रत महासक्त दुख रूप।
ते किमि जानहिं रघुपतिहिं मूढ़ परे तम कूप॥

श्रीमानस

स्था एक है, झूठा जंजाळ छोड़वा रा उपाय
में पाछो माया रो लेश नी आवणो चावे।

माया ई प्रत्यच्च यूँ है, के 'सीताराम' यूँ अन्तःकरण में स्मरण करणो, सो नाम तो सीताजी जठा यूँ उच्चारण व्हे' सो श्रीरामचन्द्रजी, ईं सिवाय जो स्फुरणा व्हे' सो माया, ब्रह्म जठे, याने जींरा आश्रय यूँ नाम स्फुरण व्हे' ईश्वर नाम, माया अन्य वृत्ति, दोयाँ ने भूलणो।

(३१)

दुःख कई है ?

"अन्तर बहिः पुरुषकाल रूपः" (श्रीमद्भागवते)

वृत्ति रो अन्तर्मुख व्हे'णो ही पुरुष, बहिर्मुख ही काल है। श्री शङ्करावतार दुःख विपत्ति रो लक्षण हुकम करे है—

"कह हनुमान विपति प्रभु सोई।
जब तव सुमिरण भजन न होई॥"

श्रीमानस

ईश्वर री'ज सत्ता यूँ ज्या सत्य दीखे ने समर्थ व्हीं', फेर ईश्वर ही यूँ विमुख व्हे' आप स्वतन्त्र व्हे'जाय, तो वींने नाना प्रकार रा कष्ट व्हे'णा ही चावे, पर पाछी जदी आपणा स्वामी रे

शरणागत व्हे' तो करुणानिधान ईं रा सब अपराध क्षमा करे।

"कोटि विप्र वध लागहिं जाहू ।
आये शरण तजौं नहिं ताहू ॥"

श्रीमानस

(३२)

मदरसा में तो बैठे है ?

बाळक जतरे नी भणे वींने विद्या रा नाम शूँ भी अबखाई आवे, पण अश्यो नियम व्हे'जाय, के अतरी देर मदरसे जाणो, ने बेठा रे'णो तो भी वो चावे के मदरसा में नी और जगा' भले ही खेलूँ भी नी पण अठे बेठणां तो नी शूँवावे। यूँ ही नाम ठाम सत्संगत रो हाल है। पण जदी बेठवा लागे, ने गुरु घर रो डर व्हे' खबर पड़े, तो पछे तनखा दे, सेवा कर भणावा वाळा ने हेरतो फिरे।

(३३)

पराक्रम तो ईं रो ही नाम है।

माया शूँ बन्ध्यो थको, मन दुस्सह यन्त्रणा पावतो थको, अनेक प्रलोभन देख तो थको भी

शरणागत व्हे' तो करुणानिधान ईं रा सब अपराध क्षमा करे।

> "कोटि विप्र वध लागहिं जाहू।
> आये शरण तजों नहिं ताहू॥"

श्रीमानस

(३२)

मदरसा में तो बैठे है ?

बाळक जतरे नी भणे वींने विद्या रा नाम शूँ भी अबखाई आवे, पण अश्यो नियम व्हे'जाय, के अतरी देर मदरसे जाणो, ने बेठा रे'णो तो भी वो चावे के मदरसा में नी और जगा' भले ही खेलूँ भी नी पण अठे बेठणों तो नी शूँवावे। यूँ ही नाम ठाम सत्संगत रो हाल है। पण जदी बेठवा लागे, ने गुरु घर रो डर व्हे' खबर पड़े, तो पछे तनखा दे, सेवा कर भणावा वाळा ने हेरतो फिरे।

(३३)

पराक्रम तो ईं रो ही नाम है।

माया शूँ बन्ध्यो थको, मन दुस्सह यन्त्रणा पावतो थको, अनेक प्रलोभन देख तो थको

माया ई प्रत्यच्च यूँ है, के 'सीताराम' यूँ अन्तःकरण में स्मरण करणो, सो नाम तो सीताजी जठा यूँ उचारण व्हे' सो श्रीरामचन्द्रजी, ईं सिवाय जो स्फुरणा व्हे' सो माया, ब्रह्म जठे, याने जींरा आश्रय यूँ नाम स्फुरण व्हे' ईश्वर नाम, माया अन्य वृत्ति, दोयाँ ने भूलणो।

(३१)

दुःख कई है ?

"अन्तर बहिः पुरुषकाल रूपः" (श्रीमद्‌भागवते)

वृत्ति रो अन्तर्मुख व्हे'णो ही पुरुष, बहिर्मुख ही काल है। श्री शङ्करावतार दुःख विपत्ति रो लक्षण हुकम करे है—

"कह हनुमान विपति प्रभु सोई।
जब तब सुमिरण भजन न होई॥"

श्रीमानस

ईश्वर री'ज सत्ता यूँ ज्या सत्य दीखे ने समर्थ व्हीं', फेर ईश्वर ही यूँ विमुख व्हे' आप स्वतन्त्र व्हे'जाय, तो वींने नाना प्रकार रा कष्ट व्हे'णा ही चावे, पर पाछी जदी आपणा स्वामी रे

शरणागत व्हें तो करुणानिधान ईं रा सब अपराध क्षमा करे।

"कोटि विप्र वध लागहिं जाहू ।
आये शरण तजौं नहिं ताहू ॥"

मीनानाथ

(३२)

मदरसा में तो वैठे है ?

बाळक जतरे नी भणे वींने विद्या रा नाम शूँ भी अवखाई आवे, पण अश्यो नियम व्हें जाय, के अतरी देर मदरसे जाणो, ने वेठा रें'णो तो भी वो चावे के मदरसा में नी और जगा' भले ही खेलूँ भी नी पण अठे वेठणों तो नी शूँवावे। शूँ ही नाम ठाम सत्संगत रो हाल है। पण जदी वेठवा लागे, ने गुरु घर रो डर व्हें खवर पड़े, तो पछे तनखा दे, सेवा कर भणावा वाळा ने हेरतो फिरे।

(३३)

पराक्रम तो ईं रो ही नाम है।

माया शूँ घन्ध्यो थको, मन दुस्सह यन्त्रणा पावतो थको, अनेक प्रलोभन देख तो...

छूट परमेश्वर रा चरणां ने गाढ़ा पकड़ ले'। बस, पछे कई चावे सब भाग जावे।

(३४)

बचा ने बांधोगा जदी दूध मिलेगा।

गायरा बोवा में शूँ दूध काढ़ती वगत बचो हाथ छोड़ाय दे', रपटाय दे', ढोळाय दे' पण बचा ने बाँध पछे गाय ने दू'वे जदी दूध ठीक तरे' हाथे लागे। यूँ ही मनने रोक भजन करे जदी आनन्द आवे दूज्यूँ मन बचे-बचे हटतो जाय। दूयो थको भी ढुळ जाय। वा विद्या रूपी बचा ने छोड़, गाय रूपी प्रकृति सात्विकी ने पवमाय ले'णी। फेर विद्या ने भी बाँध परम पुरुष रूपी दूध दूय ले'णो। पछे वींरा बोवा में दूध कई नी व्हे', वा, पे'ली नी व्हियो, गाय तो दूध देती ही रे'गा। आपणो मतलब व्हे' जाणो चावे।

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत् ॥१॥

(गायां उपनिषद् सारी, दूहे गोपाल कृष्णजी।
गीता दूध पिये ज्ञानी, बण्यो अर्जुन बाछरू ॥)

गीता महात्म्य

(३५)

ज्ञान करां के भक्ति ?

ईरो वर्णन पे'ली आयगियो। भक्ति रा विघ्न ज्ञान में ने ज्ञान रा भक्ति में देखाया, सो दोयाँ रा दोष छोड़, वाकी रे' ज्यो करणो। ज्यूँ भक्ति वाळा मनख जागरणादि ईश्वर सम्बन्धी नाम ले', अनर्थ करे, ज्ञान वाळा जीव ने ब्रह्म के', अधर्म करे। पण अबार रा पे'लो नवधा भक्ति, ने सात ज्ञान री भूमिका, आत्म समर्पण, ने तुरीया (चौथी अवस्था) एक ही है। निर्विकल्प वा विदेह मुक्ति, ने पराभक्ति एक ही रो ज्ञान रो विघ्न केवल के'वा शूँ काम नी चाले शून्यता आवे

दोहा—*कवि हिं अगम जिमि ब्रह्म सुख अह मम मालिन जनेषु।*

चौ०—*जैसे बिनु बिराग सन्यासी।*

दोहा—*काम क्रोध लोभादि रत महासक्त दुख रूप।*
ते किमि जानहिं रघुपतिहिं मूढ़ परे तम कूप॥

श्रीमानस

अवस्था एक है, झूठा जंजाळ छोड़वा रा उपाय है। वाँ में पाछो माया रो लेश नी आवणो चावे।

दूज्यूँ ई साधन भी झूठ मिश्रित मायिक व्हे जायगा।

"काचे तन नाचे वृथा, साचे राचे राम।"

"अपने अपने मत लगे वादि मचावत शोर।
ज्यौं त्यौं सब को सेयबो एके नन्दकिशोर॥"

बिहारी सतसई

(३६)

संग आसक्ति नी चावे।

संगः सर्वात्मना त्याज्यो स चेत्यक्तुं न शक्यते।
सज्जनैः सह कर्तव्यो सतां संगो हि भेषजम्॥

(संगति करणी ठीक नी चावे। अगर करयां विना नी रे' वाय तो सज्जनां रे साथ करणी। क्यूँ के सज्जनां री संगति ओखद है।)

भेषज शूँ भेषज छूट जाय, यूँ ही जदी सत्संग ने भी भेषज कियो, जदी ओर री तो बिलकुल नी चावे।

(३७)

बुद्धि कई है ?

घड़ी-घड़ी रा विचार शूँ जो विचार आप शूँ आय पेदा व्हेवा लाग जाय सो बुद्धि है।

(३८)

संसार ने सत्य नी जाणणो ।

स्वप्न में, ने संसार में कुछ फर्क नी है। केवल विचार रे' जतरे ईश्वर याद रेवे, संसार नी रेवे। संसार याद रे' जतरे ईश्वर नी रेवे सो याँ री भावना राखणी। संसार कुछ नी है, ईश्वर ही है। प्रकृति अव्यक्त शूँ बुद्धि अहङ्कार व्हिया, अहं शूँ पञ्चतन्मात्रादि। बस कारण जीं रो अव्यक्त है, सो व्यंक्त किस तरे' व्हे' शके है।

(३९)

वासना ।

ब्यणी रो मतलब यो है। ईं शूँ जीव रो ईश्वर में वासना (ठे'राव) नी व्हे'वे। ईश्वर में स्थित समाधिस्थ भी ईं शूँ पाछा संसार में उळझे। या नी व्हे'तो सब जीव समाधि में प्राप्त व्हे' जाय— एक रूप व्हे' जाय। और समाधि प्राप्ति रा बहि-रंग साधन या अन्तरंग 'ना' (जो पुरुष) ईं रो वास व्हे' करवा शूँ। संसार में 'ना' निषेध रो भी वाचक है, सो नी करवा शूँ ईश्वर में विकल्प वाचक 'ना' है सो मनुष्य विकल्प शूँ एक पक्ष में

वो है वा नो है, ईं शूँ ही व्हेवा शूँ वो नी है, नी व्हेवा शूँ वो है।

ज्यूँ पुष्प एक है वा अंतरश्यादि सवास द्रव्य एक है, ने वीं री वासना छेटी छेटी नराई व्यक्त्यां ने प्राप्त व्हे' है। यूँ ही वासुदेव एक ही है। वींरी ही वासना सम्पूर्ण जीव है।

> "वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः।"
>
> श्रीगीताजी

'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' जठी शूँ वासना आय री है, वठी जावा शूँ वो सुगन्धि द्रव्य अवश्य प्राप्त व्हे'गा।

प्र० एक वासना शूँ भी जदी जीवत्व है, फेर ईश्वर में सम्पूर्ण वासना व्हेवा शूँ वो भी बंध व्हे'गा?

उ० आग ने आग नी बाळे, ईश्वर वासना रो कारण है। जीव वासना रो कार्य है। प्रकृति जो है, सो जड़ है। वीं ने प्रेरणा ईश्वर शूँ स्वतः व्हे', चुम्बक लोहवत्।

> "मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम्।
> न च मां तानि कर्माणि निबध्नाति धनञ्जय॥"
>
> श्रीगीताजी

जणी तरे' शूँ पाळ पे जाय पछे तलाव में स्नान करणो, याने पृथ्वी तत्व छोड़ जल तत्त्व में प्रवेश करणो। यूँ ही वासना त्याग शूँ वा वासना रा मूल आदिप्रकृति ने प्राप्त व्हे' ईश्वर में प्राप्त व्हे'णो। वासना प्रकृति में है पण वा नी व्हे' ज्यूँ है, जदी ईश्वरी सत्ता शूँ चेष्टा करे तो मनख प्रकृति रा अन्त ने वासना रा अन्त ने पाय जाणे, ईं में तो कुछ नी है। वास्तविक ईं में सत्ता ईं री ईश्वर री है, जदी वो आपणा असली स्वरूप ने प्राप्त व्हे' जाय सांख्य शूँ या वात देखणी चावे। फेर जो आदमी ज्ञानी व्हे'जाय या जाण जाय, वासनामय ही संसार है, वासना कुछ भी वस्तु नी है, तो वाँ ने भी बन्ध नी व्हे'। फेर वो चावे सो करे तो ईश्वर ने वासना किस तरे बाँधे—

"को तोहि बांधन छोरन हारा।
तुम बाधत छोरत संसारा॥"

व्रज विलास

(४०)

बाळक ही राजा है।

बाळक खेले वीं में बाळक ही ने दूजा बाळक

राजा मान ले । फेर वीं रा हुकम माफिक काम करे । यूँ ही चित्तवृत्ति ही अहं जोव व्हे गई । वा ही बुद्धि मन आदि व्हो' ने वीं ज वीं ने मानी । जदी म्होटो आदमी ज्ञान देखे, तो वीं रे भावे तो तमाशो ही है, असली ईश्वर राजा ने तो वो ही जाणे है ।

(४१)

स्वप्न भी आवे है, स्वप्न में को ने ही दीखे, म्हने यो स्वप्न दीख रियो है । अवे म्हूँ जागूँ, फेर वीं ने अनुमान व्हियो, अवे म्हूँ जाग गयो । एक साधु काशीजी में देख्या, ज्याँ ने वर्ष पे'ली बीमार देख्या, फेर नक्की व्हीं'यो तो स्वप्न नी है, फेर जाग गयो, एक प्रेतणी आई पर मन री वृत्त्याँ रोकवा शूँ वीं रो नाश व्हे'गयो । यूँ जदी वृत्ति फिरे तो फेर प्रेत आदि दीखे । एकाग्र व्हेवा शूं सब नाश व्हे' जाय, फेर जाग गयो, बस वीं ने नक्की व्हीं'यो भी यूँ ही व्हे'गा ।

(४२)

"म्हूँ" तो केवल बन्धन ही है ।"

पञ्च ज्ञान-इन्द्रियाँ पाँच विषयाँ रो ग्रहण करे,

कर्मेन्द्रियाँ कर्म करे, मन याँ ने सत्ता दे'। बुद्धि निश्चय करे। ईं में 'म्हूँ' कई करे? गेले चालताँ बन्धन करे। जो व्हे' सो तो विना 'म्हूँ' रे भी व्हे' है। फेर शून्य रूप आप शूँ कई प्रयोजन सिवाय बंधवा रे।

जीं रो कार्य नी दीखे वीं रा कारण रो निश्चय कर लेणो, बुद्धि री भूल है। अहंकार रो कोई कार्य नीं है और नी स्वयं प्रत्यक्ष है, फेर ईं ने मानणो केवल दुराग्रह, हठ अभ्यास अज्ञान है और रो काम वचे ही आपणो करे, तो जन्म मरण व्हे'।

(४३)

सब "म्हूँ" है, ने "म्हारो" है।

दो आदमी एक गाम जाय रिया हा। एक ने पूछ्यो कठे जाय है। जदी वणी कियो म्हूँ' गाम जाऊँ हूँ, फेर दूजे कियो 'म्हूँ' भी गाम जाऊँ हूँ। वणी पूछ्यो कुण पूछावे है, वीं कियो 'म्हूँ' पूछूँ हूँ। एक कियो 'म्हूँ पाणी पियूँ, एक कियो 'म्हूँ' ठंड्या मरूँ। 'म्हूँ' 'म्हूँ' में तो कई फरक नी पड्यो फेर भेद क्यूँ? एक केवे 'म्हारो' मन राजी है, एक केवे 'म्हारो' मन बेराजी है, एक केवे 'म्हारे' हाथी

है, एक केवे 'म्हारे' घोड़ो है, एक केवे 'म्हारे' कई नी है। कोई के' 'म्हारे' सब कुछ है। सब 'म्हारे' ही 'म्हारे' व्हियो फेर एक हो ज बात 'म्हारे' क्यूँ है सब 'म्हारे' है।

(४४)

अहं आँकड़ो है।

ज्यूँ गाड़ी शूँ अञ्जन अलग है, पण वच्चे एक आँकड़ो व्हे' जीं शूँ दोई जुड जाय। यूँ ही जड़ शरीर ने चेतन ब्रह्म विलक्षण व्हेवा पे भी अहं जोड़ दीधा है।

(४५)

"अहं" पिचकारी रो मोगरो है।

ज्यूँ पिचकारी में मोगरो व्हे' वीं शूँ पिचकारी में जळ भराय, पण वीं ने दबावा शूँ सामला मनख पे वो रंग पड़ पिचकारी खाली व्हे' जाय या 'अहं' द्वारा संस्कार भेळा व्हे' त्याग शूँ खाली। वा छापा री कळ नीचे आवे जीं पाना पे अक्षर छप जाय, यूँ 'अहं' युक्त चैतन्य पे संस्कार जम जाय। गोळी बणावा री कल शूँ गोळ्यां बणती जाय, ज्यूँ 'अहं' युक्त कार्य शूँ शरीर बणता जाय, याने कर्माशय

चणे। संस्कार रूप शूँ कार्य व्हे' जाय, दूज्यूँ है, जश्या कार्य रेवे, याने वाँ रो रूपान्तर नी व्हे'।

(४६)

"भूत" तो नी है, पण भय है।

कोई मनख भूत ने नी मानतो हो, एक दाण-वीं ने एकलो ऊपर रा मकान में कणी जावा रे वास्ते कियो। जदी वणी कियो भूत तो नी है, पण भय है। यूं ही संसार तो नी है, पण ईं री सत्यता जम री है। नी व्हे' जीं रो भय भी नी चावे, यूं व्हीं जाणणो।

(४७)

वृत्त्यां काळा मूँडारी सळाई (सेफ्टी माचिस) है।

काळा मूंडारी सलाई ने रेजोज पेटी पे रगड़वा शूँ सुलगे। यूँ ही वृत्तो ने जठे उत्थान व्हे' वठे ही स्थित करवा शूँ प्रकाश व्हे' है, विधि युक्त।

(४८)

भंगी री गेणे मेली हवेली।

भंगी हवेली ने गेणे मेले, ने वळाई गाँम ने, सो वाँरी मेल्यो गेणे थोड़ो ई रेवे। केवल वाँ री

लागत उचिष्ट वगेरा ही गेणे मेल शके। यूँ ही 'अहँ' ब्रह्म ने आवरण थोड़ो ही कर शके, केवल वृत्त्याँ पे ही अधिकार करे।

(४९)

एक पे नराँ रो अधिकार है।

जमीन ने कमावा वाळो हाळी के' म्हारी, करशो के' म्हारी, भोम्यो ठाकर के' म्हारी, वीं रो ठाकर के' म्हारी, रईश के' म्हारी, अंग्रेज के' म्हारी, काळ के' म्हारी, बश, पछे कोई नी के' म्हारी। वा जमीन (शरीर) भोम्या वगेरा सम्बन्धी (जीव वृकादि)।

"देह किमुन दातैः," इत्यादि

श्री भागवते

(५०)

थारणे जायगा, तो वागड़ चूँची कान काट लेगा।

हे वृत्ति थूँ बहिर्मुख व्हे'गा तो अविद्या कान "श्रुति" काट लेगा। जो थे वेदानुसार निर्णय की घो वो छेटी कर देगा।

(५१)

गोटा बाळक लड़ावे।

बाळक डोरो पकड़ हाथ हिलावे जदी गोटका लड़े। आप केवे मींडा लड़े ने राजी व्हे'। यूँ मन आपही संकल्प करे, आप ही सुख माने। लकड़ी ने घोड़ा री भावना कर, टचकार, लकड़ी री दे'। वृत्ति में हो वृत्ति री भावना कर वृत्ति ही दुःख पावे।

(५२)

गोपालदास आवेंगे तो हम नहीं आवेंगे।

एक भंगी साधु व्हे' गयो, सो एक साधू वीं ने ओळखे सो एक जगा' सब साधुवां ने जीमवा बुलाया। जदी वणी कियो गोपालदास आवेंगे तो हम नहीं आवेंगे। क्यूं के वो म्हने ओळख लेगा। यूँ अहँकार कियो के ज्ञान आवेगा, तो म्हूँ नी आऊँगा। ओरॉं में तो अहँ रे' गयो गोपालदास रे शामिल नी रियो, ने जबर्दस्ती जीमावा वाळो राखेगा, तो छोटा गोपालदास, ज्ञान, चल्यो जायगा। गोपालदासजी रा चेला ने भी वाँ रा गुरु वाकय कर दीधा। अर्द्ध प्रबुद्ध के' अस्यो

साधु देखे, तो पाछा उरा आवज्यो। क्यूँ के वाँ में वाँ ने निकाळवा री सामर्थ्य नी है, ने वो के' देवे, वो तो वठे ही है, तो आप गोपालदासजी भी नी जावे, ने जो खुद आय गया, तो यो पड़ता हाथाँ भागे। चेलारी वात थोड़ा साधु माने।

(५३)

दो आँटा हाथा शूँ ही लीदा।

अहङ्कार ने, इन्द्रियाँ बुद्धि री मन री पटेलात कणी भळाई, पाग कणी बंधाई दो आँटा हाथ शूँ ही लीधा। राज में शूँ तो मँजूरी ही नी व्ही'।

(५४)

सिवाय विचार ओर कराँई कई ?

आपाँ सिवाय विचार ओर कराँ ही कई ज है। केवल विचार कराँ हाँ, हाथ हाले है, ई में कई प्रमाण, हाथ रो हालणो कई व्हियो ? केवल विचार किधो हाथ हाले। यूँ ही यो म्हारे, यो थारे, इत्यादि सम्पूर्ण विचार है, गिया, आया, खाया, पिया, सम्पूर्ण विचार है, 'गेब का घोड़ा दोड़े है।' 'अन्ध परम्परा' न्याय शूँ नक्की कर लीवी,

चैतन्य आकाश में उपन्यास रा पाना है, संसार नी है, वॅंडा रा अनुमान है, अशक्त रा मनोरथ है। शशक रा शृङ्ग (खरगोश रा शींग) है, आकाश रो अंग है। दीखे सो प्रमाण, नेत्र, नेत्र रो, मन, मन रो, बुद्धि, बुद्धि रो, ईश्वर प्रमाण है। बस, वो ही है।

'यो बुद्धे परतस्तु सः'

श्री गीताजी

(५५)

दो दिन में दोली बाई रो करयो मूँडो व्हे' गयो।

एक काच में शळ हा, वीं काच में देख दोली बाई कह्यो। दो दिन रा ताव शूँ म्हारो चे'रो करयो व्हे' गयो। यूँ माया रूपी काच में ब्रह्म रो प्रतिबिम्ब पड़वा शूँ विपरीत निश्चय व्हे' रियो है। वास्तव में काच में फरक है मूँड़ा में नी।

(५६)

कुण के'वे।

जो जो आँपाँ रा विचार है, वी वश्या ही है, या ने यो यूँ व्हियो, यो यूँ व्हियो या कुण के' वे

गवाह विना गवाही मान लेणी। के'वा वाळा ने विना देख्याँ आश्चर्य री वात किस तरे' मानणी।

(५७)

"चारों वर्ण चमार" (श्री तुलसीदासजी)

परमेश्वर री भक्ति विना शरीर पे ममता रे' वे सो चमार री वृत्ति चर्म पे ही रे'। अष्टावक्र ऋषि री कथा शुणवा योग्य है, भारतान्तर्गत।

(५८)

माता शूँ विषय नी करणो।

ईश्वर री माया सम्पूर्ण है, जो दीखे सब है, सो ही ईश्वर री स्त्री व्हीं'। जोव अहं माया जन्य है। ई शूँ ई (जीव) ने ई शूँ (माया शूँ) विषय नी करणो चावे, सार अहङ्कार युक्त काम नी करणो।

विजयसिंहजी रामजी हुकम कीधो।

(५९)

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विता॥

श्रीगीताजी

सब ईश्वर शूँ प्रवर्त व्हेवे वा अहङ्कार शूँ।

(६०)

"यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि"

श्री गीताजी

प्रारम्भ में कर्मयोग कीधो जाय, सो भी यज्ञ मुख्य है। वाँ में भी जप यज्ञ ही विशेष है। उपसना में भी नाम स्मरण ही मुख्य व्हियो। क्यूँ के नाम शूँ ही ईश्वर प्रसन्न व्हे'। प्रेमादिक भी प्राप्त व्हे'। ज्ञान भी उपासना कर्म विना नी व्हे'। महावाक्य शूँ भी ज्ञान नी व्हे'। वाँ ने प्रणव रो जप उपनिषदाँ में लिख्यो, सो विघ्न भी नाश व्हे' ब्रह्म भी प्रत्यक्ष व्हे'। यो ही मन्त्र योग, यो ही शरीर ने भस्त्रादि री विधि शूँ हठ योग भी यो ही, ने लय योग भी यो ही, के मन री वासना लय व्हे' जाय। राज योग भी यो ही प्रतीक उपासना शूँ यो ही प्रकट व्हे' ब्रह्म रूप व्हे'।

(६१)

झट मुक्ति ने झट भक्ति।

झट छूटवा रो उपाय यो ही है, के झट वासना छोड़ देणी, ने छोड़ दीधी अशीवृत्ति भी छोड़ ने शेष कई वृत्ति नी रे'। यूँ समझणो, के जदी ईश्वर

में मन लगायो जाय सो तो म्होटो मन व्है जाय। और वीं रे नीचे एक छोटो। सो मन यूँ केवे अबार नी, ज्यूँ कोई नींद काढ़णो छोड़े जदी एक मन केवे थोड़ा शा शूय जावाँ पस, यो ही अनर्थ है। मन रा छळ पारस भाग में लिख्या है. दृढ़ व्हे' मन रो नाश करणो। जो दृढ़ व्हे'गा वीं री विजय व्हे'गा। नाम री खटको राखणो।

(६२)

पुराणाँ रो अर्थ समझणो।

पुराण घणाँ गम्भीर विचार रा है। केवल ब्रह्म उपदेश ही याँ में भर्‍यो है। लोग लौकिक दृष्टि शूँ ने हृदय री तुच्छता शूँ अनेक कुतर्क करे। जो समझ गया है, वी जाणेगा के पुराण कशी उत्तम वस्तु है।

(६३)

तीर ने चमठी में शूँ छोड़ दो।

खेंच ने ठाम्याँ रेवा शूँ तीर निशाणा पे नी लागेगा, छोड़वा शूँ लागेगा। यूँ हीं कर्म करवा शूँ ईश्वर नी मिले छोड़वा शूँ मिलेगा। याने वृत्ति

रो अभाव ही मुक्ति है। फेर कर्म करणो नष्ट व्हे' गयो. वीं रो कर्म दूजा ने दीखे वीं ने कणी रो हीनी दीखे।

(६४)

ज्ञान-भक्ति-वैराग्य।

भक्ति युवा (जवान) ही, श्री वृंदावन में ज्ञान वैराग्य वृद्ध दुःखी हा, सो भक्ति भी बड़ी दुःखी व्ही'। ईं शूँ या जाणी जाय, के विना वैराग्य ज्ञान भक्ति दुःखी रे' है, ने ई भक्ति रा पुत्र है, मतलब तीन ही एक है। भक्ति प्रेम व्हियो ने या नी जाणो, के ई ईश्वर है, तो ईं ज्ञान विना भक्ति में पूर्णता नी व्हीं'। दृज्यूँ सतीजी रे श्री व्रज गोपिकां रे दृज्यूँ "अन्यथा जाराणामिव" नारद सूत्र। फेर जदी भक्ति व्ही' ज्ञान व्हियो ने संसारी वासना क्रोधादि नी मिट्या तो भी जाणणी पूर्णता नी व्ही'।

क्यूँके—"मोर दास कहाय नर आशा।"

मानस

निष्कर्ष—ज्ञान वैराग्य भक्ति ई तीन ही समुच्चय सूँ एक ही है। याँ तीनाँ री एक ही बात व्ही'।

व्यर्थ वाद कर नी झगड़णो। एक ही मार्ग मुक्ति रो है, नाम तीन है, वास्तव में अश्यो ज्ञान व्हे' जीं में इ दोई व्हे'। अशी भक्ति व्हे' जीं में ई दोई व्हे'। अश्यो वैराग्य व्हे' जी में ई दोई व्हे'।

(६५)

वणावोगा तो विगड़ जायगा।

हरे'क वात मकान आदि वणावोगा तो कदीक विगड़ जावेगा, सो कई भी नी वणावणो। वस पछे कई विगड़े।

(६६)

अतरा दिन गिया ज्यूँ ही अतरा दिन जायगा।

(६७)

तीनां रे केवा शूँ वकरा ने कुत्तो जाण्यो।*

(६८)

एक चित्त री वृत्ति निरन्तर वीं में राख, पंछे भले ही संसार में उचित कार्य कर।

(६९)

इन्द्रियाँ रो पेट, मन, म्होटो अगाध है।

---

* एक दिन एक ब्राह्मण गामड़ा में शूँ वकराने लाय रियो हो, रस्ता में तीन ठग वणी ने देख, ब्राह्मण ने कियो—अरे, अरे, राम, राम, ब्राह्मण व्हे' ने कुत्ता ने ले' जावे। वार वार केवा शूँ विचारे ब्राह्मण, वकरा ने कुत्तो मान लीधो।

(७०)

साँचो, साधु केवे, के श्रृंगारी ।

(७१)

माकड़ी रा तार पे माकडी'ज चढ़ शके है। अनुभव री वात अनुभवी समझ शके। चित्तरी एक वृत्ति रे' है, वा वड़ी सूक्ष्म व्हे' है। वीं ने यूँ जाणणो के आपांरा मन में अधार कई है, तो भी वा नजर नी आवेगा। पण ठीक विचार शूँ कुछ कुछ प्रगटेगा। वा यूँ विचारां के अबे कई नी विचारां नाम लां जदी, वा मगर पाणी पे कणी कणी वगत तर आवे ज्यूँ दीखेगा। अबे वीं रो परिकर विचारणो, के या किस तरे' पैदा व्ही'। बस वी मिटावणा। स्थूल वृत्तियां जी लाई थकी है, वी तो मिट जायगा, पण भाटा पे तेल री चीकटाई ज्यूँ वाँ री जड़ रे' जाय। घणी मक्की रा दाणा री नाँईं भाटा शूँ उठ जाय। वा सूक्ष्म वृत्ति ही स्वप्न में प्रकट व्हे'। घणा समय री भी वा सूक्ष्म वृत्ति ईश्वर में रे णी चावे, जो महाकष्ट में भी साथ नी छोडे। ज्यूं श्री व्रज गोपिका री प्रेम शूं या वृत्ति खूब ठे'रे, ने अभ्यास करतां करतां व्हे' भी जाय, वस, यो ही प्रबल उपाय ईश्वर

प्राप्ति रो है। चाहे योग व्हो', चाहे भक्ति, चाहे ज्ञान। ईं ज साधन री कबीरजी वा गोस्वामीजी महाराज आज्ञा कीधी है।

"कामिहिं नारि पियारि जिमि, लोभी के प्रिय दाम।"

श्रीमानस

"छल छन्द भरयो न तजे छलता।
दरसावत ऊपर ते ममता॥
तिमि अन्त समैं हरि ध्यान धरे।
जग जाहिर बाहिर काज करे॥"

यो साधन व्हेवा शूँ फेर वीं रे सर्वदा स्मरण ही है।

"जुग लोचन पैं जस काच रहे।
सित हू तेहि दीस तरग बहे॥"

यो ही कारण है, के स्त्री वा प्रिय वस्तु देख्याँ बाद अनेक वाताँ व्हे' तो भी स्वप्न, और वाताँ रो नी आवे। वीं ज संस्कार रो आवे, जो पे' ली जम्यो, सो जीं जगा' वो संस्कार रे'वे वठे ईश्वर रो राखणो। चीकटाई पे पाणी रपट जाय। यूँ ही ईं पे और रपट जाय, वा और कोई संस्कार थरया व्हे' गया व्हे' वीं रो तो नाश कर देणो। वीं जगा' नाम वा ध्यान आदि संस्कार बैठाय

देणा। पलट देणो रूप बदल देणो। संस्कार बहु रूप्या है, भट वो पलट भावना शूँ दूजो व्हे' जायगा। प्रार्थनादि मन रोकवारा उपाय शूँ भी।

(७२)

पाणी ही जमीन खोद गेलो कर लीघो। सो जमीन खोद रोक देवा शूँ ले' जावो जठी जांयगा, पाणी वे' वे, सो वीं रे वे' वा शूँ वीं रे गेलो व्हे' जाय, जदी वठी ने ही ज वि'याँ करे। यूँ ही विशेष अभ्यास शूँ घृत्तियाँ में ज्यो ज्यो निश्चय व्हे' यो वठी ज वृत्याँ स्वतः जावे। क्यूं के वा ही निश्चय व्हे'गी।

पे'ली तो वीं री व्हेवा रो स्वभाव है, सो व्हे' फेर गेलो व्हे' ताँ व्हे' ताँ व्हे' गयो। जदी या इच्छा व्हे' अठी पाणी शूं यो नुकशाण व्हे' वे, तो वठी आपाँ जमीन खोद न्हाक देणी, फेर ओर आडी वे'वेगा। यूं अभीष्ट स्थान पे पोंछ जायगा। वा वर्षा (काम) बन्द व्हे'गी' ने ज्ञान (सूर्य) उदय व्हे' गयो, तो है, जोई पाणी सूख जायगा, फेर बाँध री भी ज़रूरत नी है।

(७३)

अधिकारी भेद।

घणा शास्त्र उपदेश (तरे तरे रा उपदेश) अधिकारी भेद शूं ही है, वास्तव में गम्य (साधवा योग्य) एक ही है।

त्वमेकः संगम्यः प्रबल पयसामर्णव इव

शिव महिम्न

पगत्या पगत्या चढ़वा में कोई झट झट चढ़ जाय, कोई पे' ली रा चढ़ चुक्यो सो आगेरा तै करे।

(७४)

धाळक खणवा शूं टरे, चेचक शूं नी।
मनख थोड़ा दुःख शूं डरे, मृत्यु शूं नी॥

(७५)

ऊंदरा रोटी जाणे, पींजरो नी।
मनख तुच्छ सुख, जाणे बन्धन नी॥

(७६)

या ही प्लेग या ही महामारी है, जीं ने तृष्णा केवे वा वासना। ईं शूं अनेक जीव मरे जनमे है।

(७७)

ईश्वर भजन अन्त समय रे वास्ते है, ने अंत समय में महा कष्ट व्हे' जदी अणी थोड़ा दुःख में ईश्वर ने भूलाँ तो जदी (वश्या मोत रा दुःख में) किस तरे याद आवेगा।

(७८)

ईश्वर प्राप्ति व्हे' जदो अनेक सुख व्हे'।

जदी ईं थोड़ा सुख में ईश्वर ने भूलाँ जदी चठे किस तरे याद रे'गा।

(७९)

जीं माया ने प्राप्त करणो चावो वा तो भजन में छूटेगा। वासना त्याग शूं जदी मुक्ति है, तो वासना क्यूं राखणो। जे'र थूंकवा शूं वचाँ जदी वीं ने गळे क्यूं उतारणो। ने मूंडा में क्यूँ राखणो।

(८०)

पछे करणो सो पे' ली करो। क्यूँके यो मन पछे पछे करतां पाछे न्हाक देगा।

(८१)

नर री चींती वात हुए नह, हर री चींती वात हुए।

प्राचीन

वासना समय शूँ पूरी व्हे' जदी पे' ली शूँ वीं ने मन में वास नी करावणो।

'*ग्रास ग्रास मुपासीत हृदयेन व्यरूपता।*'

भारते

(८२)

पेट में तो पड्यो ही नी ने काका रो वएयारो आयो।

कर्म आरम्भ कीधाँ पे' ली ही फल चावणो। प्राय: कर्म आज काले अरया ही व्हे' के फल री इच्छा व्हे' पछे आरम्भ व्हे' उचित या है, के कर्म पूर्ण व्हेवा पे भी फल नी चावणो। एक में बन्ध एक में मोक्ष पाय जीव इच्छा पूर्वक कर्म करे है।

(८३)

आपणो विचार कदी पूरो व्हियो।

'आपाँ विचाराँ, यूँ व्हेवा पे भजन कराँगा, यूँ व्हेवा पे भजन कराँगा, पण आपणी अतरी ऊमर व्ही' अणी यूँ करणे कदी एक घड़ी भी छुटी नी दीधी। कदी भी अशी एक घड़ी नी निकली के जीं में कृतकृत्य या ने "अबे कई नी करणो" अरयो

व्हियो है। ईं शूँ यो मृत्यु समय भी छुट्टी नी देगा। लिख्यो है—

कामानुसारी पुरुषः कामानन्‌ विनश्यति।

श्री महाभारत

(८४)

मनने बोलवा शूँ मौन करावणो। क्यूँके यो बोले जदी जीभ हाले मौन शूँ संसार छूटे।

(८५)

ब्रह्म में चैतन्य व्हियो, वीं में मन सो ब्रह्म चैतन्य एक ही। मन असत् सब मन कृत।

(८६)

विचार पूर्वक कार्य करणो हरे'क कामरे पे' ली म्हूँ करूँ वा कर्‌यो,आवे जदी यूँ विचारणो म्हूँ तो कईं नी इन्द्रियादि कर्‌याँ करे। या भी विचार में विचार, चैतन्य में चैतन्य ब्रह्म है, यूँ वृत्ति फेरणी।

(८७)

विषय में प्रवृत्ति सुखानुस्मरण पूर्वक (वीं रासुखाँ ने याद करवा शूँ) व्हे' सो सुख निकाल अगर विषय करे तो कदाचित् कीरी भी प्रवृत्ति नी

व्हे' प्रत्युत ग्लानि व्हे' ने सुख आत्मा में है, सो विचारणो चावे।

(८८)

स्वप्न में स्त्री सम्भोग में जो निश्चय व्हे' वीं अनुभव ने याद राख जागृत री तुलना करणी के कतरो फरक पड़े। केवल बुद्धि में या आवे स्वप्न मिथ्या है। यूँ ही निश्चय में या आई के संसार मिथ्या है, के मिथ्या व्हियो।

(८९)

यो विचार राखणो के एक चिदाकाश है। वीं रे आश्रय चित्ताकाश है। वीं रे आश्रय भूताकाश है। ईं शूँ जो जो विचार आँपाँ ने फुरे वृत्तियाँ उठे वी चिदाकाश में उठे है, ने वी वृत्तियाँ चिदाकाश रूप है सो वाँने नीची नी आवा देणी, किन्तु चिदाकाश में स्थिर करणी। मतलब देह में वृत्तियाँ उठे यूँ नी विचारणो, किन्तु वृत्तियाँ में यो देह है सो वृत्ति री देह पे नी आवणो ही मोक्ष है। ज्यूँ रावण रा माथा। श्री करुणानिधान ऊँचा रा ऊँचा राख्या। यूँ ही शरीर रूपी भूमि पे वृत्ति रूपी रावण रा शिर नी आवणा चावे, पण वठे रा वठे ही नाश कर देणा यो ही मोक्ष है।

(९०)

'करणो छूटे जदी तरणो व्हे' ।'

(९१)

मरणो ज्यूँ ही जीवणो । विचार में तो मरणो जीवणो कई कोय नी विचार कई वस्तु है सो विचार शूँ ही समझ में आवे, मतलब यो विचार ज्यूँ ही चो ।

(९२)

लोही माँस आदिक ही म्हूँ है, तो घोड़ो गधो म्हूँ क्यूँ नी ? दूजो मनख क्यूँ नी ? अगर जाति, आदि री मानी जाय तो कल्पित है । कृशतादि शूँ मानी जाय, तो याँ में भी परिवर्तन व्हे है, जदी म्हूँ कुण हूँ, कई नी ।

(९३)

कृतघ्न दगाबाज रो साथ मत करो, (शरीर) ।

(९४)

विष्टा, मूत, थूँक, लोही, माँस आदि मत अवेरो शरीर प्राचीन कृतघ्न (ने ?) विनाशी (है ?)।

(९५)

प्रः—ईश्वर रे आड़ो कई है ?

उः—अहङ्कार ।

(९६)

उपदेश दूजाँ ने नी करणो पण, मनने समझावणो । दूसरा ने के' वा में हानि मनने के' वा में फायदो ।

(९७)

सब ईश्वर री माया है और म्हें भी मायां में हाँ । अविद्या है यस, या अविद्या है, अतरी याद ही घणी ।

(९८)

या वात तो उठी जठा शूँ ही झूठी ।

संसार में या वृत्ति में व्हे' वृत्ति शूँ या सावित व्हे' के यो यूँ है, ने वृत्ति जो है ही नी ।

परमार्थ-विचार

तीजो भाग

(१)

प्राचीन दोहा

नैनों की कर कोठरी, पुतली पलंग बिछाय ।
पलकों की चिक डारके, प्रियको लेहु रिझाय ॥

कोठरी शूँ एकान्त सूचित व्हे' के वठे दूसरो कोई संकल्प नी आवे। पलङ्ग शूँ कोठरी में भी मुख्य सुख स्थान और चिक शूँ अर्धोन्मीलित पणो सूचित व्हे'। "प्रिय" के' वा शूँ पति तो प्रिय है, परन्तु रिझावणो हीज बाकी है।

"राम परम प्रिय तुम सब ही के"

अर्थात् अतरो साधन व्हे' तो भी रिझावा वाळो तो खुद (अहन्ता) है, सो जदो हूँ न्यारी शूँ अर्थात् विवेक शूँ आत्म निवेदन करे,

जदी प्रिय (ईश्वर) रीझे। वणी रे रीझवा शूँ वींने भी (रिझवार ने भी) आनन्द व्हे' ने रिझावे जीं ने भी आनन्द व्हे' अर्थात् दोयाँ रे मिलवा शूँ एक आनन्द री प्राप्ति व्हे' सो ही फल है। अणी में राजेश्वर योग है।

राजविद्या राजगुह्यम् ।

—गीताजी

अणी श्लोक रा विशेषण सब ईं में मिले है।

(२)

आपणी हट कुण छोड़े ?

प्रसव वेदना पाय स्त्री, लोक हास्य पाय कुञ्चुकी, अनेक वेदना पाय लोभी लोभ, मद्यपी मद्य शूँ ही जदी व्यसनी व्यसन में ही आपणाँ प्राण दे' दे', पण हट नी छोड़े। संसार रो उपहास भी सहन करले', ने शरीर रो मन रो दुःख भी, तो भी नी छोड़े। ज्यूँ संसारी अविद्या ने अनेक उपद्रव व्हेवा पे भी नी छोड़े, शूँ ही महात्मा आपणी हठ नी छोड़े जदी ही परमार्थ प्राप्त व्हे'।

हठ न छूट छूटे बरु देहा ।

—मानस

(३)

एक महात्मा ने एक दुष्ट मारयो, खूब हँसी कीधी। फेर पूछ्यो आप वीं वगत कईं करता हा, जदी म्हूँ आपने मारतो हो। महात्मा 'कियो म्हूँ भी म्हारा शत्रु ने मार रियो हो। मतलब, क्रोध ने म्हें भी वीं वगत खूब मारयो। महात्मा अणी वृत्ति (क्रोध) ने ही शत्रु समझे है और ने नी।

(४)

अविद्या रो लक्षण अशुचि, अनित्य, अनात्म, । दुख में ईं री उलटी भावना रो नाम है, तो या आप में है, के नी है तो अविद्या है; वास्तविक नी है। सो झूठी बात क्यूँ विचारणी।

(५)

प्रकृति ही अनेक तरह री दीखे।

एक भूँगळी में काचरा टुकड़ा पड़्या रे'। वीं ने फेरे ज्यूँ ज्यूं अनेक तरे' रा फूल दीखे। यूँ ही गुण रा तारतम्य शूँ अनेक शरीरादि दीखे।

(६)

कणी मन शूँ स्मरण कराँ।

जणी मन शूँ दोड़ता खरगोश रे गोळी दाँ।

जणी मन शूँ स्त्री सुख रो अनुभव कराँ, जणी मन शूँ स्मरण कराँ तो एक दिन ही में ईश्वर प्राप्ति व्हे'।

(७).

ममता रो प्रत्यक्ष दृष्टान्त ।

स्त्री एक जाति 'री कन्या व्हे' है। वीं शूँ आपणो कोई सम्बन्ध नी हो, पण विवाह व्हियाँ उपरान्त वींरा दुःख में दुःख, सुख में सुख व्हे'। पे'ली वीं ने दुःख सुख व्हिया' वाँ रो विचार तो नी व्हियो। एक राजा एक आदमी ने १००) रु० बगस्या। दूसरो आदमी आयो वीं ने कियो, थूँ वीं वगत व्हे' तो तो थने पण रुपैया मिलता। वो आदमी उदास व्हे' गयो। एक आदमी ने रुपैया दे' पाछा लीधा, वो लड़वा ने त्यार व्हियो। ममता अतरी झट लिपट जाय है। यूँ हीं शरीर पे समझणी कुछ दिन ताबे यो शरीर ईश्वर आपाँ ने बगस्यो है, सो कल्याण करलो, ने ईं में दुःख वा हानि व्हे' तो मत सोचो। वीं रो है वो जाणे।

(८)

सततोत्थित (विष्णु सहस्र नाम)।

सर्व काल में सावधान रे'णो। चित्त री वृत्ति

जाय तो पण गफलत शूँ ईश्वर ने (द्दष्टा ने) नी भूलणो। पानो हवा शूँ हाले तो कई डरनी, पण टूटयाँ केड़े छेटी जाय पड़ेगा।

(९)

चोराँ ने पछाणणो।

ईश्वर रा स्मरण में जो विकल्प व्हे' वो सब चोर है, ई' शूँ याँने रोकणा चावे। जणी वगत आदमी उत्थित नी व्हे' वणी वगत ई चोरी करे सो सावधान रे' णो।

(१०)

लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन् कर्तुमर्हसि।

—श्री गीताजी

काम करवा में केवल स्वार्थ पर व्हेवा शूँ बन्धन व्हेवे, निष्काम कर्म ही विशेष है, सो ईश्वर री आज्ञानुसार करूँ हूँ। वा यो व्हे' वा नी व्हे'। ई' में कुछ विचार नी, केवल लोक संग्रह वास्ते ई' काम में प्रवृत्त व्हियो हूँ, इत्यादि विचार राख करवा में चित्त शुद्ध व्हे'।

(११)

शरीर पे ममता किसतरे' व्ही' ?

ज्यूँ आपणा विचार पे ममता व्ही,' बाद में स्वपक्ष पे ममता व्हे' ही जाय है, ने वो ही पक्ष दूजाँ रो व्हे' जदी फेर खण्डन भी करे।

(१२)

मन को मौन कराय के मुख सों बोलो बात ।
मुख मौनी मन में बके, यही जीव की घात ॥

निजकृत

(१३)

स्मरण करती समय जदी दूसरो संकल्प आवे जदी नाम ने प्लुत (जोरशूँ) उचारण कर, वीं संकल्प ने नाश कर देणो। ज्यूँ सिंह गरज, ने हाथी ने नाश कर दे। म्हारा में कई विशेषता है, जो म्हूँ अस्यो ही हूँ (भावना शूँ।)

(१४)

नाम रे अन्त रो वा आदि रो अक्षर खूब प्लुत (जोर शूँ) करणो। प्लुत अक्षर रा उचारण रो मन में विचार व्हे'। यूँ प्लुत रा अन्तरा अक्षर ने ध्यान शूँ बोलणो।

(१५)

मुक्त तो स्वतः है ही, बन्ध तो व्हियो ही नी; जदी मुक्त कई व्हे'।

(१६)

ईश्वर रो विचार।

कोई केवे ईश्वर अश्या है। कोई केवे अश्या है। फेर आपस में लड़े। हिन्दू, मुसळमान, ईशाई आपणी आपणी ढोलकी ओपणाँ आपणाँ राग री केणावत् कर रिया है। पण,ईश्वर रो विचार यूँ करणो चावे, के वो बुद्धि शूँ परे है, ने जतरा मत है, बुद्धि में है। ईश्वर छोटो है, तो या विचारणी, यो तो बुद्धि रो कार्य है, फेर वो तो ईं शूँ अलग है। फेर म्होटो है, तो यो भी ऊली आड़ी रो विचार है। जदी शून्य है, तो यो भी ऊलो अनुमान है। कई है वा नी, है। जतरी वाताँ है, सब ऊलो आड़ी री है। ईं शूँ आप ने भूलो याँ विचाराँ ने भी छोड़ो। बस, पछे रेवे सो ईश्वर है। वेद भी प्रत्यत्त वी ने नी के' शके वा जो है, नी है, सब ईश्वर ही है।

(१७)

या तो सब 'म्हूँ' हूँ या 'म्हूँ' कई नी हूँ। ईं रो

निश्चय वासिष्ट में है। सब 'म्हूँ हूँ, ज्यूँ पृथ्वी पृथ्वी सब एक है गन्धत्व यूँ। यूँ 'अहं' 'त्वं' शूँ सब 'अहं' है। कई नो 'यूँ के' ई रो कोई कार्य नी दीखे, वा जड़ है, सो कई नी व्हियो।

(१८)

शास्त्र पे'ली के' वे मरोगा, पछे के, वे नी मरोगा। याने अज्ञान में रो' गा तो मरोगा। ज्ञान व्हे'गा तो नी मरोगा। वा यो स्वतः ही यो जाणे' म्हूँ कदापि नी मरूँ हूँ।

(१९)

वैराग्य।

आँपाँ कराँ और री वाताँ, आपाँ री करशी कोइ और।

प्राचीन

ज्यूँ आपाँ विचाराँ वो दुखी है, मर जायगा। यूँ यो पण कणी रे वास्ते एक दिन विचार तो हो ने आपणे वास्ते पण कोई यूँ विचारेगा।

नाम कुल कल्पित नाम विना रूप नी सर्व कल्पित है।

(२०)

मोक्ष प्राप्त पुरुष करयो व्हे' ? कई वीं रे माथे शींग उगे, कई वो कई नी खाय ? कई वो मौनी व्हे' ? कुछ नी। केवल वो नी रेवे। ज्यूँ कणी नोकर रो नाम काट दे, जठा केड़े वो नोकर कई काम नी करे ? वो तो जीवे जतरे नोकरी ही करेगा, पण आपणाँ अठा शूँ वीं री नोकरी माफ व्हे'गई। यूँही शरीर तो काम करतो ही रे' गा, पण 'अहं' रो नामो कट गियो, पछे प्रकृति माफक वो शरीर करो वा मत करो। जो भावना करवा वाळो नकली जीव हो, वो आपणो चार्ज पाछो असली ने दे' देगा। वा एक आदमी वीं रे नीचे आदमी कुछ नी समझतो, वीं रा नाम शूँ छापवा रो कार्य करतो हो, ने वो वे समझ यूँ जाण तो हो, म्हारो मालिक कई करे, सब म्हूँ ही करूँ हूँ। पर वो यूँ विचारे तो भी मालिक ही करे, नी विचारे तो भी मालिक ही करे, वो तो केवल अभिमान करे।

फोयो पग ऊँचा करे मत गिर पड़े अकाश।

ज्यूँ कपट पुरुष विचारे म्हूँ खेत राखूँ कूकड़ो बोले जठे ही प्रभात व्हे' या वात तो नी है। अणो

(२७)

गोखाड़िया खड़िया रह्या कड़िया झाकण हार ।
खड़ खड़िया पडिया रह्या खड़िया हाकण हार ॥१॥

स्वरचित

(२८)

कुत्तो रोटी रा लालच शूँ घर में आवे, लकड़ी रा डर सूँ पाछो भागे, पण अहङ्कार दुःख भुगतवा ने भी शरीर में आवे । ईं शूँ जाणी जाय के यो आपणाँ कर्म भुगते, छोड़े तो कुण भुगते । आछा बुरा आपणाँ पे ममता रेवे हीज, चाहे मार न्हाको ।

(२९)

दुःख दाइ सहाय करे नरतो जिहि के दु स औरहु झेलनो है ।

स्वरचित

मानसिक सेवा यूँ व्हे'णी चावे, के ज्यूँ विना बोल्याँ आपाँ कणी वस्तु ने देखाँ, यूँ ही मन में विना बोल्याँ सेवा करणी ।

(३०)

ईश्वर री समझ ।

दीवाळी रा दिनाँ में एक लालटेन रे बच्चे एक सुई में एक चक्कर बेटावे, ने वीं पे वींरे हाथी

घोड़ा चैंठावे। वो हवा शूँ फिरे। बा'र का लोगाँ ने वाँरी छाया दीखे। फेर देखवा शूँ मण्डल दीखे। फेर ध्यान शूँ दीवो हो दीखे ने सुई भी दीखे। अगर दीवो नी व्हे' तो कई' नी दीखे। मेजिक लालटेन ज्यूँ वणी प्रकाश शूँ जड़ माया में अनेक भ्रम पैदा व्हे'।

(३१)

ममतादि रोकवा रो साधन।

शतरञ्जआदि खेल प्रत्यक्ष है। वाँ में ममतादि रोकवारो साधन कर पछे वाँरा दृष्टान्त शूँ यो भी समझणो।

(३२)

एक शतरञ्ज शूँ नराई खेल गया। यूँ ही घर, स्त्री पुत्र धन पृथ्वी आदि में नराई मनुष्याँ ऊमर वीताय दीधी, ने मर गया, पर यो खेल हाल पूरो नी व्हियो। हाल तक नवो नवो ही दीखे। खायो थको फेर खावा रो मन करे है। देख्यो देखवारो, परख्यो परखवारो, यूँ ही कीधो नत कराँ पर वैराग्य नी व्हे'। ई शूँ कई मूर्खता ज्यादा व्हे'।

(३३)

जींरो काम जींने छाजे और करे तो डण्डा बाजे।

माया ईश्वर री है, वो अनेक तरे' शूँ ईं री समेटणो फेलावणो करे। बच्चे ही जो केवे, यो म्हूँ करूँ, ने सजा पावे। नाहरी नखे नाहर रो बच्चो देख मूरख भी गयो सो खायगो'।

(३४)

संकर्षण सों जीव है, वासुदेव विभु शुद्ध ।
मन प्रद्युम्न जानिये, अहङ्कार अनिरुद्ध ॥

नारद मत शूँ यो निश्चय व्हेवा शूँ मुक्ति व्हे' जाय।.

(३५)

पैसा कोड़ी वासते, बेचत फिरयो बजार ।
मूरख मोल न जाणियो, हीरा तणो हजार ॥ १ ॥

हीरा = मनुष्य-जन्म, पैसा + कोड़ी = संसारी ने स्वर्ग सुख, हजार-मोल = ईश्वर ।

—स्वरचित

(३६)

श्री प्रह्लाद जी री कथा शूँ उपदेश ।

संसार, हिरण्य कश्यप । ईं शूँ अनेक दुःख

सुख जोवाँने व्हे' पण प्रह्लादजी री नाँईं जीव रो विचार चलित नी व्हे'णो चावे। केवल नाम में ही विचार रे'णो चावे। चाहे शरीर ने दुःख व्हो' चा सुख, तो ईश्वर अवश्य दर्शन दे'। भाटा जश्या हृदय में शूँ भी प्रकट व्हे'।

(३७)

अहं ने ईश्वरार्पण करो।

हे मन थूँ अत्यन्त दुखी व्हियो व्हे' अगर थने दुःख शूँ जो नराई समय तक देख्यो सो कुछ अरुचि व्हो' व्हे' ने अपार पाप थारे नखे व्हे' ओर वाँ शूँ छूटणो सहज में चावे तो कुछ श्री व्रजराज रे भेट कर। अगर थाँ शूँ व्हे' शके, तो एक अन्या मन्या री चीज वताऊँ हूँ। ने वीं ने अर्पण करवा शूँ श्री व्रजराज अश्या प्रसन्न व्हे' के जश्या भक्ति शूँ व्हे' ने वीं ने जतरे थूँ राखेगा वतरे ईश्वर कदी थारे पे पूर्ण प्रसन्न नी व्हे'गा ने वीं शूँ थारो कई काम अटके भी नो, वशी थारे तीरे असंख्य वस्तु है, सो वीं मेली एक ईश्वर रे अर्पण करवा में क्या संशय करे है। वींरो नाम है, एक चित्त री वृत्ति।

जदी के चित में असंख्य वृतियाँ है, तो एक वृत्ति ने काम में नी लावे, तो कई अण सरियो जाय है। घणा मनुष्य तम्बाखू छोड़, कोई आदमी एक गेले आव तो जावतो हो। वठारा लोगाँ वीं पे मिथ्या व्यभिचार रो सन्देह कीधो, तो वींरे कणी शुभचिन्तक कियो अठो जावा में नुकसाण है। घणो वो गेलो छोड़ दीधो। दूसरो आड़ो जाणो आवणो शुरू की धो। अबे वींरा मन में वीं गेलारी याद अभ्यास शूँ आय जाय तो भी झट रोक दे' ने दूसरे ही गेले जाय। क्यूँ के वठी कई फायदो नी, अठो कई नुकसाण नी। यूँ ही एक चित्त री वृति ने ईश्वर रे अर्पण करणी है। या थने पे'लो विचार लेणी चावे, के वृत्याँ मात्र ही कुछ नी! वों में शूँ भी एक अहं वृत्ति ने ईश्वर रे अर्पण कर दे', भेट कर पाछी ले'मती। जो भूल शूँ आय जाय, तो झट पाछी ईश्वर री वस्तु जाण त्याग दे'। देख थारे वाग देखवा री इच्छा व्ही' ने नी गयो जदी तो थने कुछ दुःख नी व्हियो। यूँ ही अनेक वृत्याँ में शूँ कतरी नाश व्हे' जाय जदी थने दुःख नी व्हे' ने एक अहं वृत्ति रे वास्ते व्यर्थ अतरो कष्ट उठावणो सिवाय

मूर्खता रे और कई है। ईं रो विचार सांख्य योग में है। श्री करुणामय स्वयं आज्ञा करे है :—

> सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
> अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥
>
> —श्री गीताजी

रोगरी वृत्ति नष्ट व्हेवा पे हर्ष करे, ने अहं वृत्ति पे शोक क्यूँ करे।

(३८)

स्वप्न विचार।

ईं संसार में जो पदार्थ दीखे, सो है, के नी, स्वप्न में जो दीखे, सो है, के नी, स्वप्न में हाथी दीखे, वीं वृत्ति ने रोक्याँ केड़े हाथी पर्वतादि नी दीखे। फेर वा वृत्ति फुरे ने पाछा दीखे। यूँ ही संसार रा पदार्थ है। कुछ भी अन्तर नी है। केवल दो ही वृत्तिमय है।

(३९)

माळा रो एक मणयो पकड़्यो ने १०८ ही मणयाँ वंडे लारे आय जायगा। एक वृत्ति साँची मानी ने सब साँची व्हेवेगा। ईं यूँ वृत्ति मात्र

ही मिथ्या, ने मिथ्या, या भी मिथ्या, ने सत्य या भी मिथ्या।

"उभे सत्यां नृते त्यक्त्का"

—महाभारत

(४०)

पे'रा वाळा शूँ जाणी जाय धन है, ने चोर है, वृत्याँ शूँ जाणी जाय ईश्वर है, ने संसार है।

(४१)

भ्रम।

एक ने हेलो पाड़े दूसरो बोल जाय वो जाणे म्हने हेलो पाड्यो। यूँ हीं ईश्वर री माया ने कोई कई कोई कई समझ लीधी है।

(४२)

अहं ने लेवा कुण जाय!

जदी यूँ विचार कीधो के यो जो "अहं" है, ईं ने श्री कृष्णार्पण करूँ हूँ। म्हूँ भेट व्हे' गयो, पाछो कुण लेवे। क्यूँ के पाछो लेवे देवे सो तो खुद ही भेट व्हे' गयो।

(४३)

अहं रो कई लत्तण है ?

जो लोही मांस युक्त शरीर ही "अहं" है, तो बकरा कुत्ता में भी अति व्याप्ति व्हे'गा। जो नराई विशेषणाँ शूँ युक्त करने एक शरीर ने हीज "अहं" सायत करां, तो वीं मायला विशेषण कम पड़वा पे, वा (अव्याप्ति) 'अहं' व्याप्ति आय जायगा। ज्यूँ पचीस वर्ष रो अश्यो अश्यो म्हूँ हूँ तो चोईश वर्ष रो ने छाईश वर्ष रो म्हूँ नी व्हियो। ईं शूँ लत्तण रहित व्हेवा शूँ अहं कुछ वस्तु नी व्हीं'। वन्ध्या पुत्रवत् यूँ ही 'मम' भी भ्रम मात्र है।

(४४)

बाँदरी रो बचो अणजाण में भोंकी (टोळा रा बड़ा बाँदरा) नखे चल्यो गयो, वो मारवा लागो। बचो वीं ने गाड़ो-गाड़ो पकड़वा लागो। बाँदरी छुड़ावे, तो भी वो नी छोड़े। अगर वीं ने छोड़, बाँदरी नखे चल्यो आवे, तो बच जाय, दूज्यूँ भोंकी मार न्हाके। यूँ ही भोंकी-शरीर, बचो-मन, ने बाँदरी-ईश्वर है।

(४५)

पाणी री बूँद समुद्र में शूँ पाछो काढ़े, तो खबर नी पड़े के या वा ही ज है, सो सुषुप्ति शूँ जाग यूँ भे'म करणो। पे'ली वाळो अहंकार गम गयो, यो तो दूजो है। वा ज्ञान शूँ नष्ट व्हेवा पे यो 'अहं' दूजो है, वो 'म्हूँ' तो मुक्त व्हे' गयो, ने दूजा तो नराई जनमे-मरे है।

(४६)

श्रद्धा

तमोगुणी जीवाँ शूँ रजोगुणी विशेष, रजोगुणी शूँ सतोगुणी, पशुआँ पे मनुष्याँ रो अधिकार है ; याँ मनुष्याँ पे भी सतोगुणी देवाँ, ऋषियाँ रो अधिकार है, परभाते सतोगुण रेवे वीं वगत विचार उत्तम व्हे वे। नशा में तमोगुण ज्यादा वढ़े। वीं वगत री वात कोई नी माने। तो ईं वास्ते जो जो सतोगुणी ऋषियाँ परमार्थ विचार री आज्ञा करी है, सर्वथा मान्य है। आपणा विचार नशा रा व्हे' ज्यूँ है, सो त्याज्य है। ईं वास्ते आपाँ भी जदी ज्या वात सतोगुण व्हेवा पे विचारांगा वा वात शास्त्र सम्मत ही व्हे' गा।

(४७)

अहंकार ने देखता रे'णो, यो काम अहंकार कीधो, यो मन, या बुद्धि, और देखे तो वो ही, विना बोल्याँ कणी चीज ने देखवाँ, यूँ मन में भी विना बोल्याँ रे' णो बस, या बोले सो ही माया, ने देखे सो ईश्वर।

(४८)

सर्वनाम

व्याकरण में सर्वनाम संज्ञक शब्द व्हे' है। वो वास्तव में सर्वनाम है—सबाँरा नाम है, तो आँपणो कई व्हियो। 'अहं' भी सर्वनाम है, 'इदं' भी सर्वनाम है, 'त्वं' भी सर्वनाम है। यूँ ही 'मम,' 'त्वं,' 'तस्य,' 'विश्व' आदि सब समझणा। आपाँ भी सर्वनाम है।

सर्व नाम जो सर्व तो, गर्व कौन को होय।
सर्व नाम ते रहित अरु सर्व लखे सो सोय॥

मनुष्य दुःख वा सुख रो अनुभव करे। जदी वो विचारे 'म्हूँ' सुखी हूँ, वा दुःखी हूँ। वीं वगत यूँ विचारणो चावे 'अहं' दुःखी वा सुखी है। या मनने अनुभव व्हे', वा अहं ने व्हे', सो

'अहं' ने तो सर्वदा व्हियो, ने व्हे' तो ही रे' गा। या ने 'अहं' भी जड़ ईश्वर शूँ अलग व्यापक है। मन री वृत्ति व्हेवा शूँ।

शंका० अहं जो व्यापक है, तो एक समय में सर्वत्र एक दम सुख दुःख व्हे'णो चावे ?

ऊ० अज्ञान शूँ सर्वत्र सुख दुःख नी दीखे। ज्यूँ एक राजा रा राज्य में करशा आपणाँ-आपणाँ खेतरा सुख दुःख में हर्ष शोक माने। राजा पृथ्वी रा एक हिस्सा पे ममता करने वीं पे ही हर्ष शोक माने। वा चक्रवर्ती व्हे' तो वीं पे ही माने। एक आदमी बाळक हो, वीं वगत कियो बाळक नीच व्हे' जदी चरड्यो, फेर जवान नीच व्हे', कियो तो नी चरड्यो जदी वो जवान व्हियो, ने कियो के जवान नीच व्हे' तो चरड्यो, के बाळक नीच व्हे' ई पे क्रोध नो कीधो। यूँ ही ममता शूँ एक देशिक दुःख सुख दीखे है, वास्तव में विचार मात्र है। जस्यो नक्की (दृढ़) कर लीधो वस्यो ही दीखे। दुकानदार रे घर में, ने वड़ा मनखाँ रा घर में, नराई सुन्दर विभूषण आदि पड्यारे', ने वाँने टील पै पटक ने गर्व करे है। सुन्दर तो कपड़ा है, आप

क्यूँ घमण्ड करो, आप तो वी रा वी, गू मूँत री कोथली ही जरया रा जरया गट्टूरा भी हो। ज्यूँ थाँणे काटवा शूँ लोही निकळे, ज्यूँ सारा ही रे' जो थाने सुख दुःख व्हे' वो सारां ने ही व्हे'। ई में आपरी कई विशेषता है, के या वात तो ओरां में नी है, ने म्हांणे में हीज है। बस, ई शूँ ही सर्व नाम 'अहङ्कार' रो है। मतलब अहङ्कार ने भी एक पदार्थ समझणो चावे। ज्यूँ अतरा है, ने जीं शूँ अहं दीखे वो ईश्वर।

सब कर परम प्रकाशक जोही।
राम अनादि अवध पति सोही॥

श्रीमानस

(४९)

या यूँ विचारणो चावे ज्यूँ अतरा 'अहं' है, यूँ यो भी 'अहं' है। ज्यूँ ई 'अहं' पे म्हारी मजबूती है, यूँ शारा पे ही है। ज्यूँ देवदत्त मानवा वाळा 'अहं' रो सुख-दुःख है। यज्ञदत्त माँदो पड्यो असह्य वेदना व्ही' सो वीं ने यूँ नी विचाचावे, के यूँ ही अगर देवदत्त माँदो पड़े तो वीं ने भी व्हे'। ज्यूँ यज्ञदत्त 'अहं' ई ने नी चावे,

यूँ ही देवदत्त भी ईं ने नी चावे, ने प्रमाद-दत्त भी नो चायो। ईं शूँ यो एक लक्षण सर्वत्र व्हेवा शूँ जाणी जाय, के 'अहं' एक ही है। लक्षण एक मिलवा शूँ दूसराँ रो दुःख देख आपणो भूलवा रो यो ही अर्थ है, के यो सर्व व्यापी नियम है। मतलब, ज्यूँ अतरा 'अहं' है, यूँ ही यो भी एक 'अहं' है। पूर्ण ज्ञानी वो है, के आपणाँ शरीर रे वास्ते केवे वो शरीर है। क्यूँ के यो शरीर, के' णो भी कुछ निकटता सूचित करे है। ज्ञानी रे भावे सब शरीर समान है, तो एक ने यो, ने एक ने वो, क्यूँ के' वे, यो ही बन्धन है। एक शूँ नजी'क रे' णो, औराँ शूँ छेटी रे' णो यो तो अज्ञान ही है। ज्ञान में या ही ज बात है, के सर्व समान दीखे।

ज्ञान मान जहं एकौ नाहीं।
दीख ब्रह्म समान सब मांहीं॥

श्री मानस

मतलब, सर्वनाम है। ईं में न्यारापणो नी व्हे' सर्वनाम है, सब री समान सत्ता पाँपे है।

(५०)

यूँ विचारणो चावे, के अतरा विशेषण वाळो 'अहं' यो कार्य कर रियो है।

(५१)

सघ संसार रो सम्पूर्ण व्यवहार नाम शूँ व्हे'। नाम सो निस्सन्देह कल्पित है।

(५२)

सर्व सर्व गत सर्व उरालय

श्री मानस

२२९ रो विचार देखो। (सर्वनाम) विचार

(५३)

नाम रूप दुइ ईश उपाधी

श्री मानस

रूप आधार, ने विचार सार, याँ दोयाँ रो ही प्रकाशक ब्रह्म है।

(५४)

नाम स्मरण शूँ ई वाताँ समझ में आवे, एकाग्र चित्त शूँ। विचार भी विचार योग्य है।

(५५)

आपाँ या विचाराँ, के म्हने अतरा सकल्प क्यूँ व्हे' तो या विचारणी चावे, के जदी 'अहं' ही

संकल्प मात्र है, तो ई ने फेर कई संकल्प व्हे। विचार तो असंख्य है, याँ ने कुण रोक शके। ई तो प्रकृति पुरुष रो खेल है, केवल 'अहं' ही अनाशुरती आयो थको अनर्थ मूळ है। विचार युक्त तो कई नी है। विचार सब में है विचार शरीर में नी है।

(५६)

अथवा यूँ विचार राखणो जो कुछ व्हे'रियो है—ईश्वरेच्छा शूँ है। अहं स्वतन्त्र नी है। जो पराधीन है, वीं ने सुख दुःख रो कई विचार। विचार ने सत्ता देवा वाळो वो ही है। ज्यूँ सूर्य प्रकाशक है।

(५७)

मद्य माँस रो त्याग।

मद्य शूँ अविचार पैदा व्हे,' सो अविचार नी व्हेवा देणो अविद्या शूँ बचणो। माँस (शरीर) शूँ ई ने अंगीकार नी करणो। स्थूल मद्य माँस त्याग शूँ भी यो मतलब व्हे' शके है। यदि उपरोक्त त्याग नी व्हियो, ने यो ही त्याग व्हियो', तो वात मामूली ही है। स्थूल शूँ सूक्ष्म प्राप्त व्हे' है।

(५८)

एक श्लोक, कणी चाणक्य नीति में देख्यो। कणी पञ्चतन्त्र में देख्यो। एक केवे यो पञ्चतन्त्र रो है, ने एक चाणक्य रो केवे। वास्तव में जणी जीं ग्रन्थ ने पे'ली देख्यो वींरो ही मान लीधो, परन्तु है वो श्लोक भारत रो। यूँ ही नरा समय शूँ अभ्यास पे'ली संसार रो व्हेवा शूँ संसार ही दीखे, ने ईश्वर ने भी संसारी बुद्धि शूँ समझवा री कोशीश करे। वीं में भी कोई कणी दर्शन शूँ, कोई कणी दर्शन शूँ। पर वास्तव में चित्त स्थिर व्हेवा शूँ मतलब है। हरि भारतीजी आज्ञा कीधी, के एक पग मन पे दो, दूजो ईश्वर नखे ही पड़ेगा। कोई जुगाव केवे कोई गुजाव केवे। वो वीं ने, ने वो वीं ने हँशे। जो बुद्धि में प्रथम दृढ़ व्हे' गयो, वीं ने ही सत्य मान लीधो, ने दूसरो सब असत्य। पर बुद्धि युक्त पक्षपात छोड़ घड़ी-घड़ी रो अभ्यास करवा शूँ सही बात मन में जमेगा।

(५९)

एक आदमी गेला में टोपली पड़ी देख माथा पे उठाय लीधी। वो जाणतो, के या माथा पे उठावे है। फेर ईं में कईक पड्यो भी रें' है। सो

गेला में काँकरा देखे, वणा ने ही माँयने भरे। यूँ बोझ शूँ दुःख पाय रोवा लागो। एक बुद्धिमान कियो, टोपली फेंकदे। वीं कियो ऊँचे नी है। वणी कियो एक एक काँकरो फेंकदे। यूँ ही फोरो व्हे' गयो फेर टोपली भी फेंक दीधी। यूँ ही शरीर पे अनेक ममता रूपी काँकरा भर लीधा। याँ ने छोड़्या शूँ सुख व्हे'गा।

(६०)

अहङ्कार केवे यो विचार 'म्हूँ' करूँ हूँ, यो 'म्हने' सुख रो विचार व्हियो, यो दुःख रो, तो सुख दुःख क्यूँ नी केवे, के यो 'म्हने' अहङ्कार व्हियो। ज्यूँ अतरा विचार ज्यूँ ही 'अहं'। फेर ईं ने विशेष, औराँ ने ईं रे आधीन मानणो।

षट्के हि भेदो न पुनः शिवाय।

(६१)

अहङ्कार ने कागद रो दीवो, ईश्वर ने हवा। अहङ्कार ने शरीर ईश्वर, ने जीव। अहङ्कार ने रेल, ईश्वर ने अंजन इत्यादि समझणो चावे। याने अहं में सत्ता ईश्वर री है, अबे अहं कई करे।

(६२)

कामना व्हे' तो यूँ करणी।

कदी ईश्वर दर्शन देगा। क्रोध, ईर्षा, विषय, मोह आदि शत्रु हैं। याँ ने ज्यूँ व्हे' ज्यूँ मारणा। यूँ ही सब परमार्थ में करणा। शृङ्गार में श्रीकृष्ण चरित्र विचारणो।

(६३)

श्री रघुनन्दन, रावण रा माथा आकाश रा आकाश में ही राख्या। "रघुवीर तीर प्रचण्ड लाग हिं भूमि गिरत न पाव हीं"। यूँ ही अहङ्कार ममताआदि ने शरीर पे नी आवा देणो। विचार रूपी नाराच (बाण) शूँ ऊँचा ही राखणा। वैराग्य शूँ नाभी रो अमृत सुखाय देणो।

विषय वासना नाभी सर।

(६४)

राजकन्या रा ध्यान शूँ भंगी नाम जप्यो। ज्यूँ संसारी इच्छा में ईश्वर प्राप्ति री इच्छा प्रबल करणी।

(६५)

सोच मूर्खता विना नी व्हे' के, गई बात रो

विचार करे तो वीं रो कई सोच है। उद्योग री शास्त्र में आज्ञा है, सोच री नी। नी व्हो, नी व्हे'गा। वींरो कई शोच, मूर्खता विना शोच नी व्हे'। चावे जो दुःख पड़ो।

(६६)

शास्त्रोक्त बुद्धि आपणो निश्चय कर लेणो, फेर वीं ने हटवा नी देणी। यो ही दृढ़ निश्चय वाजे है। निश्चय यो राखणो, के एक ईश्वर है, वीं री माया सम्पूर्ण दृश्यादृश्य पदार्थ है। आपणी बुद्धि पे दूसरांरी बुद्धि आरूढ़ नी व्हे'णी चावे।

(६७)

शतरञ्ज ने या जाणा हाँ, के छींतरा व गोटा री है। रमणा लकड़ी रा है, ने खेरादी वणाया है, ने आपणाँ चलाया चाले है। पण बुद्धि में यो निश्चय व्हे' गयो के यो मो' रो यूँ हीज चाले आदि। अये वीं में हर्ष शोक व्हेवा लागो जदी वी खेले। कोई मनख जो ईंरा कायदा ने तुच्छ जाण तो हो, ने बुद्धि में दृढ़नी कीधा हा। वणी कियो वजीर ने मार न्हाको, या शुण खिलाड़्याँ कियो यो तो नी मर शके। वणी एक प्यादो उठाय छेटी रा पेठा

वजीर ने मार न्हाक्यो। लोगाँ वींने कियो थूँ मूर्ख है। खेल नी जाणे। वीं कियो म्हारे खेलणो थोड़ो ही है। जो म्हूँ भी थाँणी नाईं खेल तो, ने. ईं वृथा बुद्धि रा निश्चयत्वरा बन्धन में आवतो, तो यद्यपि म्हूँ सुखी हूँ, पण अणार कृत्रिम सुख दुःख में उळझणो पड़तो। थाँणे वास्तविक कई हानि लाभ व्हियो सो थें हर्ष शोक करो। यूँ ही संसार-शतरञ्ज,वींरा पदार्थ-मो'रा, अज्ञानी-खिलाड़ी, ने ज्ञानी मध्यस्थ व्हे'। अगर वी मो'रा ने नी चलावे, वा यूँ समझ जाय,के ई तो यूँ रा यूँ ही है। नी, लाल म्हारा ने वींरा, तो भी हर्ष शोक नी व्हे'। बस,ई पूर्व भुक्त पदार्थ आपां अठोरा उठी कर हर्ष शोक पाय चल्या जावाँ। फेर जो शतरंज पड़ी देख, ने वी भी खेल हर्ष-शोक पाय चल्या जाय। यूँ ही संसार रूपी महा शतरञ्ज शूँ कतराई खेल गया,खेलरिया है,ने खेलेगा। बुद्धिमान या तो अणाँ मो'राने आपणा नी समझे,या ख्याल जाणे, या अठी रा उठी नी मेले, या हर्ष शोक नी करे। यथार्थ तत्त्व समझ लेवे जीं शूँ। ने निर्बुद्धि तो लड़वा लाग जावे ने आप हार जीत माने। ईं में, ने संसार में बिलकुल फरक नी है। ईं वास्ते सात्विक बुद्धि रो ही आश्रय चावे। क्यूँ के वा

यथार्थ है। प्रत्यक्ष खण्डन, यो पदार्थ है, ईं में कई प्रमाण? याने, या पृथ्वी है, ईं में कई प्रमाण?

उ०—गन्ध है जीशूँ।

प्र०—गन्ध है ईं रो कई प्रमाण?

उ०—नासा है जीं शूँ, तो अन्योन्याश्रय दोष व्हियो! वा याँ दोयाँ रो प्रत्यक्ष मन शूँ, मन रो बुद्धि शूँ, बुद्धि रो तो पे' ली वर्णन व्हे' गयो।

प्र०—पृथ्वी रो कई लक्षण है?

उ०—गन्ध।

प्र०—गंधरो कई लक्षण है?

याने जो कुछ है बुद्धि है, याने आपणो निश्चय ही है, वास्तव में है, सो ही है, जो नी केणी आवे। पृथ्वी नासा आदि पूछता ही रे'णो, के ईं रो कई प्रमाण? बस

(६८)

कोई जोरी शतरञ्ज खेल तो हो, वो नाजोरी खेलवा वाळा शूँ, खेलवा लागो। वो नाजोरी वाळो वीं रो रमणो मारे। वो के'ई रे तो ईरो जोर है। वो के' आपाँ खेलती वगत निश्चय कर लीधी ही के ना जोरी खेलाँगा। फेर वो रमणो चाले ने यो मार ले'

ने वो केवे जोर है। यूँ ही शे'ज में हराय दीधो। जोरी संसारिक, नाजोरी-वेदान्त, परमार्थ, नाजोरी उचित है, के नाजोरी वाळो जोरी शतरञ्जन नी खेले दज्यूँ हार जायगा। वास्तव में नो जोरी है, नी ना जोरी है। या तो माया री जोरी (जबर्दस्ती) है, ने माया ब्रह्म री जोरी (जोड़ी) है, या वात केवा री थोड़ी है। समझवा में और ही है। या तो समझता वेजोड़ी है, जो मनरी याग मोड़ी है। वीं री' ज वुद्धि अठो दोड़ी है, फेर तो गोपद शूँ भी थोड़ी है।

(६९)

एक आदमी चायो म्हारो नाम अखण्ड रे'। पण खुद नी रे'। जदी किस तरे नक्की व्हे' के यो फलाणा रो नाम है। कई जीं रो नाम कलपना करॉं वीं रो नाम शूँ कई सम्बन्ध है।

(७०)

बाळक पणा शूँ ही जो विना शुण्याँ ही परमार्थ विचार पैदा व्हे' तो पूर्व जन्म रा संस्कार सिवाय और कई है। एक ही पुरुष रा छोराँ ने एक समान

राखवा पे भी जो भिन्न दीखे, तो अवश्य ही पुनर्जन्म री प्रतिपादक है। प्रेतादिक री भी वात ईं ने साबित करे है।

(७१)

दृढ़ता व्हे' तो अवश्य भजन व्हे'।

प्र०—जाणाँ तो हाँ, के भजन कराँ तो ठीक दृढ़ता शूँ, पण भजन नी व्हे'-मन अठी रो उठी चल्यो जाय। अगर यो मन दुष्ट चोड़े हाथ में आवे तो मार न्हाकाँ, पण अदृश्य है। ईं ने समझावा ने सब शास्त्र है पण माने नो।

उ०—यदि या दृढ़ व्हे' के भजन करणो, तो जरूर भजन व्हे' शके है। मन रो साक्षी मन है पण या दृढ़ कोई करे नो। केवे के मन नी दीखे, तो कई अटकाव है। ज्यूँ वन में शू'र नी दीखे, पण ओदी पे आय जाय, ओदी (शरीर) पे पकड़ शकाँ हाँ। आपणे शास्त्र में दुष्टमन ने पकड़वा रो उपाय सावत कर राख्यो है, वीं रो नाम है "तपस्या"। पञ्च धूणी तापणो आदि अनेक है। क्यूँ के मच्छी रे लारे लारे दोड़ने वीं ने कोई नी पकड़ शके, पण वा (मच्छी) खावा रा लोभ शूँ वा काँटाँ में उळझ जाय,

यूँ हीं मन स्वर्ग रा लोभ शूँ भी सत्कर्म कर शके है। आजकाले लोगाँ देखावणो तपस्या रे' गई है। वीं शूँ कई फायदो नी व्हे' शके।

प्र० तपस्या शूँ शरीर नाश व्हे' जाय तो! क्यूँ के आज काल रा मनुष्य तप रे योग्य नी है, ने तपस्या किसतरें' करणो ? (या पण नी जाणे।)

उ० तपस्या शरीर ने नाश करवाने नी है, किन्तु मनने वश करवाने है। ज्यूँ कणी दुष्ट घोड़ा व जानवर ने समझावणो, कुछ शिखावणो व्हे' तो केवल कूट्याँ करे, तो भी बिगड़ जाय, ने नी कूटे तो भी बिगड़ जाय। पण वो कुबद करे, ने आपणो आज्ञानुसार नी चाले, जदी जरूर वीं रे योग्य वीं ने सजा देणो, ज्यूँ माता बाळक ने। यूँ हीं मन शूँ स्मरण करावणो, ने जदी यो स्मरण छोड़ दे' तो एक उपवास कर लेणो वा एक सुई अशी चुभावणी के लोई निकळ जाय। ई शूँ मनने दुःख तो व्हे', पण शरीर ने कई नुकसाण नी व्हे' ने यूँ के' ता जाणो या स्मरण ने भूल ने और काम में लागो, जीं री सजा है। बस, *"मार आगे भूत भागे"* रीके'णावत रे माफिक ई ने स्वयं हो नाम याद वस्यो रे'गा, ज्यूँ मदरसा में छोरा। पण दया

करने छोड़वा शूँ तो ईतर जायगा। ने यो प्रार्थना करे, के अबे नी करूँ तो भी एक दाए तो सजा दे ही देणी। अबे नी करेगा तो नी दाँगा। दृढ़ता चावे।

(पारस भाग शूँ)

(७२)

यूँ विचारणो चावे, के थोड़ी सजा शूँ यो घणा दुःखां शूँ बचेगा, बालक वा रोगी ज्यूँ। ने यावत् दुःख मन रे वश नी व्हेवा शूँ व्हे' है, सो सब दुःख प्रत्यक्ष दीखे है, संसार में। सो वाँ शूँ भय करने जरूर ईं ने सजा देणी हित कामना शूँ।

(७३)

समष्टि व्यष्टि।

जळ एक समुद्र में है, वो समष्टि बाजे, वीं में शूँ घड़ा में, लोट्या में, वा कुंजा में राखवा शूँ व्यष्टि बाजे, ज्यूँ घटाकाश, मठाकाश। अब 'पिण्डे सो ब्रह्माण्डे' रा न्याय शूँ पृथ्वी री समष्टि मात्र पृथ्वी, ने व्यष्टिशरीर गत माँसादि। यूँ ही पञ्च तत्व समझणा, यूँ ही अव्यक्तादि है। अव्यक्त री समष्टि विराट री अव्यक्त, ने व्यष्टि बुद्धि शूँ पर अव्यक्त।

यूँ ही महतत्व भी समष्टि व्हियो, ने व्यष्टि भिन्न भिन्न बुद्धि, शरीर गत। यूँ ही अहं आदि अब घटाकाश में, ने महदाकाश में कई अन्तर नो। पण उपाधि शूँ न्यारो न्यारो दीखे। यूँ ही मन एक, सब एक; पण विचार शूँ न्यारो दीखे। शरीर में अध्यास व्हेवा शूँ शरीर भी एक, पण विना विचार्याँ अनेक ज्ञात व्हे'। एक वात ईं शूँ या भी सावत व्हो' के घणा ग्वरा जड़ वत् ईश्वर ने माने है,ने केवे वो अवतारादि नी लेवे। पण जदी वीं री व्यष्टि में यो प्रभाव है तो समष्टि में कतरो व्हे'णो चावे। आपाँ तो ईं पृथ्वी लोक री ही पूरी वात नी जाणाँ, जदी असंख्य नक्षत्र, ने या शूँ दीखे जो नक्षत्र, यूँ परम्परा शूँ माया रो पार कुण ले' शके। ईं शूँ वीं री माया अपरम्पार है, ने छोटो सो वीं रो नकशो मनुष्य शरीर है।

(७४)

सब ईश्वर है।

ज्यूँ एक जळाशयमूँ अनेक ने'राँ, अनेक आड़ी निकळे, ने अनेक रङ्ग रो वीं पाणी में संयोग व्हे' तो भी जळ, जळ ही है।

(७५)

चित्रवत् संसार है,

एक भींत पे अनेक रङ्ग रो एक हाथी मांड्यो। भींत हाथी वग़ैरह कुछ नी केवल रङ्ग ही रङ्ग है। जुगाव-गुजाव-वत्।

(७६)

बुद्धि रो निश्चय।

एक देश में पिता ने पुत्र,ने पुत्र ने पिता के'ता हा, ने या ही ज निश्चय कर लीधी ही। * अठे आया जदी एक कियो यो म्हारो पिता है। लोग हंस्या, ने कियो, 'बड़ों बेटो बाळक बाप', फेर अठारा मनखाँ में यूँ भी घणा पिता पुत्र ने पूछ्यो। थें कुण हो ? याँ बाळकाँ ने पुत्र कियो जदी वी भी खूब हँस्या, ने कियो 'बाळक पुत्र ने बूढ़ो बाप', या भी बड़ा आश्चर्य री बात है। एक बुद्धिमान् संकेतिक नाम छोड़ लक्ष्य समझग्यो। यूँ ही घणाँ दिनाँ यूँ शरीर ही करे, या म्हूँ भी कुछ हूँ, या निश्चय जम गी' सो शास्त्र री बात समझ में नी

* ज्यू काठियावाड़ में बाप ने बापू केवे ने मेवाड़ में बेटा ने बापू केवे।

आवे । बुद्धिमान् स्थिर चित्त शूँ मनन कर समझ ले' या ही—

"बंध्यो कीर मरकट की नाईं ।"

श्री मानस

समझ चार तो जन्य जनक सम्बन्ध (पुत्र ने पिता रो सम्बन्ध) विचार झट समझ जाय । यूँ ही जड़ चैतन विचार, शरीर चैतन नी व्हे' शके,ने चेतन जड नी व्हे' शके । ज्यूँ वृद्ध पुत्र नी व्हे' शके, ने बालकपिता । यूँ समझने वीं धारणार्थ यूँ छोड़ अभिप्रायार्थ समझ लीधो ।

(७७)

संस्कार ।

यो दीखे जो स्वप्न व्हे'गा,तो ई आपणाँ सम्बन्धी है, ईं रो कई प्रमाण ? शायद लोगाँ यूँ ही समझाय दीधा व्हे' । समयरे साथे सब चल्या जायगा। यो कई है ? सब में हाँ । पाणी कई है ? यूँ ही सब ।

ब्रह्म ।

यो रङ्ग है सो अविद्या है । पाणी है, सो ब्रह्म है । नं० १ जीव, नं० २ अज्ञानी जीव,नं० ३

ईश्वर, जीं में ज्ञान अज्ञान मय सम्पूर्ण संसार है।

(७८)

अज्ञान में भय रात्रि वत, प्रकाश में अभय ज्ञानवत् (दिनवत्)।

(७९)

सुख रा समय ने व्यर्थ वार्तादि में बितावो, पर दुःख रा समय ने किस तरे' व्यतीत करोगा। जदी एक-एक घड़ी युग री चोकड़ी ज्यूँ वीतेगा।

जदी एक-एक रुपयो जावा रो विचार करो, तो वर्ष रा वर्ष जाय वीं रो विचार क्यूँ नी करो। जो धन एक दिन अवश्य जायगा, वीं री उपाय में मनुष्यतन व्यर्थ क्यूँ खर्च करो। ईश्वर रा भजन में क्यूँ नी लागो, जो अठे ही अवश्य सुख प्राप्त व्हे'।

(८०)

या नी जाणाँ के ई उपाय शूँ दुःख मिटे, जदी तो ठीक, पण जाण पूछ तो ईश्वर दीधी, फेर वीं पे विचार नीं करवा शूँ दूणी सजा री बात है।

(८१)

सर्व नाश

समय जदी नी दीखे तो फेर इं रो प्रमाण कई के अतरो जीव्यो, ने अतरा जीवाँगा ।

(८२)

स्वप्न संसार में अन्तर नी है, तो एक सत्य एक मिथ्या क्यूँ ? दोई मिथ्या है। जो देख रियो है, वो ही सत्य है, दीखे सो नी ।

(८३)

दुःख देखे, ने सुख देखे, यूँ कहे सो ठीक है। क्यूँ के अगर नी देखे, तो है ही नी । देखे, तो दीखे । द्रष्टा है, सो ही है ।

(८४)

जदी यो कई नी है,तो उपदेश में याँ ही पदार्थां रो दृष्टान्त देवो सो झूठा रो दृष्टान्त क्यूँ ?

"गूंगे को समझाइये गूंगे की गति आन"

वृन्द सतसई

(८५)

म्हारो मोक्ष व्हे' तो ठीक।

एक महात्मा ने कणी कियो म्हारो मोक्ष कर

दो। महात्मा कियो। थाँ में शरीर जीव मन है, काँ रो मोक्ष चावे? शरीर लोही माँस-मय है। ईं रो कई मोक्ष? जीव ईश्वर एक है, तो कई मोक्ष। थने जीव दीखे भी नी है, फेर वीं रो मोक्ष शूँ कई प्रयोजन? ने मन जो संकल्प विकल्प सर्वत्र करे हो है। वीं रो मोक्ष किस तरे' व्हे'? पण एक मनरी वृत्ति 'अहं' है। वा अज्ञान शूँ दृढ़ व्हे'गी है, ने वणी एक शरीर रो आश्रय ले' लीधो है, ने संकल्प विकल्प जो मन करे। गेले ही चालतों आपणा माने है। बस, वीं रे नाश व्हेवा पे मोक्ष व्हे'गा।

(८६)

जदी सुख दुःखादि सर्वत्र प्राकृत नियम शूँ व्हे' तो म्हूँ कई सर्व हूँ? म्हूँ कुछ नी।

(८७)

अतरा विशेषण वालो हीज (अहं) 'म्हूँ' क्यूँ? और 'म्हूँ' क्यूँ नी। 'म्हूँ म्हूँ' तो सर्वत्र है हीज, जदी म्हारो 'म्हूँ' करयो है?

(८८)

नाम स्मरण करती वगत चित्त नी लागे, तो नाम गणता जाणो। ज्यूँ राम राम राम यूँ मन में

ही गणणो ने मन में ही के'णो। मतलब-दूजा संकल्प मिटावा शूँ है।

(८९)

राम ने राम, यूँ केवा में एक नाम शूँ दूसरा नाम रे वचे जो है, वो ही ब्रह्म है। वठे चित्त ठे' रावणो। योगवासिष्ठ में भी है

(९०)

नाम ने अहं में तन्मय कर देणो। याने 'अहं' याद रे' सो ही 'अहं' ने नाम ही समझणो।

(९१)

राते स्वप्न आवे दिन में भी कुछ दीखे सो स्वप्न ही है। आधी देर यो, ने आधी देर यो, फेर एक ही साँचो क्यूँ, फेर समय तो कल्पित है।

(९२)

बेटी २ दीखे, पण है एक ही जगा' स्वप्नवत्।

(९३)

ज्यूँ अहङ्कार सर्वत्र विद्यमान है, पण कार्य बिना दीखे नी। ज्यूँ अहंकार रो स्मरण कराँ यूँ नाम रो। याने सब काम करताँ भी अहंकार ने

कधी नी भूलाँ यूँ ही नाम नी भूलणो विचार ६० में देखो।

(९४)

एक राजा रे, ने दूसरा राजा रे सीमा रो झगड़ो हो। वणी राजा अस्या पेच न्हाक्या, के कुछ समय बाद वा सीम ईं रे आय जाय। पण यो मर ने वणींज राजा रे जनम्यो, ने सीम जावा लागी। जदी ही जस्यो खुदरा कीधा काम। वा कोई गरास्या, लड़्यो ने ई, वीं री सीम दबाई, फेर वीं रे खोळ्याँ गयो, ने ईं रे दूजो ईं रो शत्रु फेर, ईं जस्यो।

(९५)

समय तो मन में व्हे' मन माया में—

"सोई प्रभु भ्रू विलास खगराजा'
नाच नटी इव सहित समाजा ॥

श्रीमानस

अणी वास्ते काळ री गति तो मन रे वश में है, वणाँ तक भी नी है, तो ईश्वर तक किस तरे'। सूर्य आदि समय शूँ है, सूर्य शूँ समय नी। अब समय रो कई रूप व्हियो' ऊमररो कई भरोशो ने अन्दाज।

(९६)

सब री प्रवृत्ति दुःख मिटावा में है, दुःख रो मूळ कारण वासना है, ईं ने ही क्यूँ नी मिटावणो। जतरा दुःख है, वाँरी तलाश करवा शूँ वासना ही मूळ लाधे गा। वासना, इच्छा, तृष्णा, मनोरथ एक ही है।

"काम एष क्रोध एष"

श्री गीताजी

और सूवताँ, बेठताँ, देखी जाय तो वासना ही विद्यमान रे'तो मृत्यु समय वासना रहित किस तरे' व्हाँ'गा। ईं वास्ते कणी भी वगत चित्त में यूँ नी रे'णी चावे, के यो करणो है। आप्त काम (पूर्ण मनोरथ) रे'णो, न जाणे कणी वगत मृत्यु व्हे' जाय।

(९७)

श्रद्धा।

ज्यूँ आपाँ रुपियो आछो जाणाँ, वीं ने ही शराफ खोटो के' ने खोटो जाण जावाँ फेर वी में वो खोटापणो नी दीखे तो भी निश्चय में वो वश्यो ही है,

से वो वरयो ही है, श्रद्धा शूँ खोटो दीखे। यूँ ही संसार रा परिच्छकाँ, ईं ने खोटो कियो सो मान्य है।

उभयो रपि दृष्टोन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः।

श्रीगीताजी

(९८)

निष्काम करपारी नाँई सब करे, धान री आशा ईश्वराधीन समझणी। धानरी कामना नी करणी।

(९९)

सांख्य सार परम विचार।

प्र० मोक्ष कई वस्तु है, ने कीं रो व्हे' है? ईं रो विचार ही मुख्य है। अहंकार ही बन्धन है, वो अहंकार करयो है? श्री जनकमहाराज आदि जदी के' वे के 'मैं हूँ' तो वाँरो बन्धन क्यूँ नी व्हियो?

उ० वो अहंकार है, ने व्यवहार भी है, परन्तु बन्ध यो ही है, के अस्यो हीज 'म्हूँ हूँ'। विचारणी चावे, के यो अमुक 'म्हूँ हूँ' सो कणी पे लक्ष्य करने के' है। यदि शरीर ही 'म्हूँ' तो मृत्यु बाद भी शरीर रे' है? प्राण रो आवागमन ही 'म्हूँ' तो,

प्राण तो घायु है, ने वों रे रेवा पे भी मूर्छा वा; दवा शूँघावा पे 'अहं' नी दीखे। ईं यूँ सारा ही मिलने। 'अहं' तो सारा ही सारी ही जगाने मिल्या थका है, भंगी में भी ब्राह्मण में भी। ईं शूँ इच्छा क्रोध आदि प्राकृत सर्ग समान ने सब वाताँ समान व्हेवा शूँ एक ही 'म्हूँ' क्यूँ ? ईश्वर री माया ही परम पुस्तक, ने उपदेष्टा माता है।

ईं संसार ही रो विचार राखे, तो मुक्ति व्हे' जाय। कोई पिता पे प्रेम करे। कोई द्वेष कोई धर्म, कोई अधर्म, तो फेर एक ही 'म्हूँ' क्यूँ। ईंने यूं समझ ले'णो, चावे 'अहं', धाने 'म्हूँ', संसार में आयो पर या विचारी के अबे 'म्हूँ' कई वणूँ। तो दुःख सुख सर्वत्र और प्राकृत नियम सर्वत्र समान देख, वणी 'अहं' कणी भी शरीर वा व्यक्ति रो आश्रय नी लीधो। क्यूँ के वीं ने वीं रे बैठवारी जगा' ही नी मिली सो नाश व्हे' गयो।

नी जड़ री मोक्ष व्हे' ने नी चैतन्य रो बन्धन, अबे यूँ के'वे के म्हारा जो विचार मन में है, वी दूसरा के नी है, ईंशूँ 'म्हूँ' हूँ तो आप विचार सिवाय न्यारा कई हो ? और न्यारो साक्षी तो एक ही है और जदी वो भी या ही के' वे के म्हारा विचार ईं

रा मन में नी है, तो वो आप क्यूँ नी व्हियो? रोग में दुःख, विषय में आनन्द आदि नियमित बात है। ईश्वर री नियमित बात से ज्ञान ही मोक्ष, ने ज्ञान है।

(१००)

अहंकार वा वासना हीन ने वा ज्ञानी ने कई दुःख नी व्हे' दीखो भले ही।

(१०१)

पञ्च कोष आत्म पुराण शूँ।

आनन्द रूपी ईश्वर, वणारे नखे ही प्रज्ञान रूपी ज्ञान है। ईं रे वास्ते बुद्धि विज्ञान, ईं रे वास्ते मन संकल्प विकल्प ईं रे वास्ते प्राण, ईं रे वास्ते अन्न,वा एक एक विना व्यर्थ,सब ईश्वर विना व्यर्थ।

(१०२)

काल शूँ संसार, संसार शूँ काल दोई माया शूँ, ने माया ईश्वर शूँ।

(१०३)

'ऊर्ध्व मूल मधः शाखः'

(गीताजी)

उत्तान पाद, सुरुचि संसार में उत्तम विषय, सुनीति विद्या, ध्रुव-निश्चय शूँ ईश्वर मिले।

(१०४)

पद ध्यान

ऐसो रूप अनूप निहारो,
तेसेहि शशि चन्द्रिका झलकनि,
ते सो ही श्री मुख उजियारो,
श्री वृषभान लाडिली जू पै कोटिन चन्द्र निछावरि डारो।

विनय

जननी जनम देहु तो दीजो,
पै या जुगल माधुरी ते मन छिनहूँ विलग जिन कीजो।
लखि अवगुन अनन्त अपने के अम्ब छमा सब कीजो॥

योगवृत्ति

पिया सों रूठ चली पनिहारी,
औरन के घट ढूंढत डोले अपने घट हि विसारी।
सुधासिन्धु निज निकट त्यागि के फिरे तृषा की मारी॥
कोटि उपाय करे सखियन पै फिर के नांहि निहारी।
गुरु की लाज भांज घर बैठी बाहिर फिरन सिधारी॥
मान छांडि मिलगई नाथ (पिया) सो तब पायो सुख भारी॥

(१०५)

बुद्धि शूँ पर ईश्वर है, तो संसार में सर्वत्र बुद्धि शूँ कार्य व्हे, ने बुद्धि रो प्रेरक है ईश्वर।

सब की मति को सर्वदा, प्रेरक भी भगवान।

श्री नागरीदासजी,

तो जो निश्चय व्हे' वींरे लारे रो लारे, ईश्वर रो भी निश्चय करणो। जीं री खीचड़ी ने जींरे ही डोड़ चांवल नी करणो।

(१०६)

संसार या चित्त मण्डन है ?

आत्म पुराण

(१०७)

वासना व्हे' वीं में ही नाम री भावना करे, वा वासना में नाम स्मरण करवा लाग जाय। वासना शूँ ही अनेक संकल्प विकल्प व्हे' है, सो नाम री ही ज वासना राखणी स्वतः स्मरण व्हे'गा।

(१०८)

नाम सब शूँ ऊँचो है, जो विचार व्हे' वीं ने नीचे-राख नाम ने वीं पे स्मरण करणो। वा नाम ने विना भूल्यां विचार पड्यो, वो या भावना राखणी सो नाम ही रे' जावेगा। वासना विचार, कुल गौण, ने नाम मुख्य जाणणो बस, पछे नाम नी छूटे। निष्काम कर्म, (कामना युक्त काम नी)

करणो, सो ईं रो अगर तीन दिन भी यूँ रे' तो ब्रह्म-साक्षात्कार व्हे' जाय तीन तो लिख्या है पर तुरंत ही व्हे' जाय। ईं रो अभ्यास यूँ व्हे', के कामना नी करणी। ईं में नित्य जो है, संध्यादि वी नी करां यो विचार व्हे' तो यूँ विचार करणो, 'नी करां' वा भी कामना है, 'करां' या भी कामना है। बस,अब प्रवाह पतित ही व्हियो। पर यूँ भी नो विचारणो, के प्रवाह पतित 'करां' वा 'नी करां' काम गीता, भारत आश्वमेधिक पर्व में है। वीं में काम कियो, के तपादिक में भी म्हूँ रेऊँ हूँ। ईं वास्तें म्हारो नाश नी है, ने जो म्हारो नाश करणो चावे, तो म्हूँ हंशूँ, ने नाचूं हूँ। क्यूँ के कामरो नाश करणो है, यूँ विचारे सो भी काम रो वृद्धि करणो ही व्हियो, यो ही सन्यास त्याग वा समाधि है। गीताजी रो सार भी यो ही है। यो अभ्यास शूँ शीघ्र वा कठिनता शूँ व्हे' शके है।

(१०९)

ब्रह्म में स्थिति।

'म्हूँ बाळक व्हूँ', 'म्हूँ' ही जवान व्हूँ। 'म्हूँ' ही सुखी व्हूँ'। 'म्हूँ' ही दुःखी व्हूँ। 'म्हूँ ही मूर्ख हूँ'। 'म्हूँ' ही विद्वान् व्हूँ। म्हूँ' ही जनमूँ।

'म्हूँ' ही मरूँ। 'म्हूँ' ही रोगी, 'म्हूँ' ही आरोग्य मतलब, जदी के एक हो 'म्हारो' ('म्हूँ' अणीरो) निश्चय नो है, तो यो निश्चय सत्य क्यूँनी व्हे' के 'म्हूँ' ही आत्मा हूँ। ईं निश्चय में ही सब आय गियो।

प्र० आत्मा तो दीखे नी, ईं शूँ वीं रो निश्चय नी व्हे' शके ?

उ०—दीखे तो कई भी नी है,सिवाय आत्मा रे, परन्तु सतगुरु आज्ञानुसार साधन शूँ दीखे है। पर यूँ भी के'णो है, वास्तव में तो देखे है, पर अज्ञान शूँ दीखे है।

प्र० आत्मा कस्यो है ?

उ० के' वा शूँ समझ में नी आवे, पर शून्य नी है, सच्चिदानन्द है।

प्र० कतरा दिनां में आत्मज्ञान व्हे' शके ?

उ० ईं रो नियम नी है, पर जतरी सत्‌गुरु रा वाक्य पे श्रद्धा व्हे'गा, वतरी ही जल्दी आत्म प्राप्ति व्हे'गा।

प्र० सत्‌गुरु रो कई लक्षण है !

उ० साँचो गुरु (अणीरेसिवाय) शास्त्राँ में और भी लक्षण है।

प्र० साधन (करयो है) ?

उ० अनेक है, जरयो गुरु बतावे सो ही मुख्य है।

प्र० तथापि कोई उत्तम साधन बतावणो चावे?

उ० जो गुरु अधिकारी देख, ने बतावे सो ही उत्तम है। परन्तु सब अधिकारियाँ रे नाम समान, साधन और नी है। संसार शूँ मन में वैराग्य राख जपणो चावे। पे,ली भी लिख्यो हो। ईं में दूसरा ने आगे री भूमिका पूछवा री भी जरूरत नी, वो ही ईश्वर वीं रो गुरु है।

(११०)

दूणो दुःख नी उठावणो।

कर्माधीन व्हाँ' ज्यूँ दुःख व्हे'। वीं शूँ घबरावा शूँ वो बढ़ जाय। उद्योग करणो, पण इच्छा नी करणो। कर्तव्य जाण ने करणो।

(१११)

ईं में घणा खरा विचार उन्नत भूमिका रा है। वाँ रे अनुसार कोई अधर्म नी करणो चावे, धर्म करणो, क्यूँके जदी समता है, तो शास्त्र प्रणाम ही करणो।

(११२)

कृष्ण चरित जो चहत है, आँखिन देख्यो मित्र ।
जहँ लगि मन बुद्धी सकल, कृष्ण चरित्र विचित्र ॥ १ ॥

सकल जगत को जानिये।

(११३)

प्र०—जगत सत्य है वा असत्य ?

उ०—सत्य रे मूँड़ा आगे असत्य,ने असत्य रे मूँड़ा आगे सत्य है ।

प्र०—कोईक' असत्य के' वे 'दूज्यूँ सब ही सत्य के' है ।

उ०—जी सत्य के' है,वी भी जगत में है,तो परीक्ष्य है, परीक्षक नी है । परीक्षक के' सो ही बाताँ साँची है । शराफ शेंकड़ाँ रुपया परखे, पर शराफ तो सत्य ही है । एक शराफ अनेक रुपया । एक चेतन अनेक जड़, चेतन री वात साँची, जड़ री झूठी ।

(११४)

भक्ति ने ज्ञान में कई अन्तर है ?

एक कीड़ी जाय री' ही, वणी ने रोकवारो कणी आदमी विचार कीधो मो वीं'रे (आडो) हाथ राख्यो । फेर वा घटी यूँ फिर और आड़ी

जावा लागी। जदी दूसरा हाथ शूँ फेर वठी भी रोक दीधी, वणीज आदमी रा दो ई हाथ है! आदमी ईश्वर, कीड़ी माया, मन-हाथ, ज्ञान-भक्ति अन्तर-वृति, बाहिर वृत्ति रो अठी उठी जावणो। अन्तर वृत्ति रो अर्थ, मन में विषय चिन्तन है।

(११५)

कथा श्रवण

कथा श्रवण करती वगत ध्यान करणो, अब श्री भरतजी जटा मंडल धारण कीधो, ने श्री प्रभु भी मिलया। यूँ जाणे देखी थकी वात वा शुणी वात रो ध्यान करणो? "ज्यूँ वीठ स्त्रियाँ री वार्ता"

श्री भागवत

(११६)

*देख सकल उजास पे है न भान * रो भान*

गुमान बत्तीसी

आत्मा नित्य है। सूर्य नारायण रा प्रकाश शूँ जदो एक आदमी दूसरे गाँव जावे ओर वीं ने सूर्य री याद कतरीक दाण आवे, यूँ ही आत्मा रा

* भान-सूरज, भान-याद।

प्रकाश शूँ सब है,परन्तु आत्मा ने लोग नी विचारे।

(११७)

'अहं' (म्हूँ) ने 'इदं' (यो) करलो 'इदं' 'अहं' इदं कर्म करोमीति।

(११८)

अहं है, सो अहं (अ+हम्-म्हूँ नी) अहं रो अर्थ है म्हूँ नी, (अठे) नञ् समास है। हंस रो अर्थ व्हे' म्हूँ वा मेरो अर्थ में (माँयने) हैं''। 'माँय' जो बोले है,सो यूँ के' है, के वो ई रे माँयने है।माँय ने वोही ज बोलावे है। आई माँय ने लारे री लारे अविद्या आई।

(११९)

नाम स्मरण मन में करणो, सो जोर जोर शूं करताँ व्हाँ ज्यूं करणो, वा पे'ली थोड़ी देर जोर शूं कर, पछे जो उच्चारण रो शब्द हियो, वींरो ध्यान बरोबर करणो। फेर भूल जाँवाँ तो जोर शूं के' लेणो। जतरा संसारी विचार व्हे' है, वी भी देखाँ तो जाणे जोर शूं के' ताँ व्हाँ' ज्यूं मन में व्हे' है। घणा खरा मन रा विचार बोल भी जाय। ज्यूं प्रकट वा स्वप्न में। श्री गजराज रे तिल

प्रमाण सूंड बारणे रही, जदी हरि नाम पुकार्‌यो; सो मन में ही प्रकट री नाईं हेलो पाड्‌यो, हे नाथ! वा अजामिल भी यूं ही पुकार्‌यो व्हे'गा।

मरती समय नाम पर रुचि घटे तो ईंरा (नाम-रा) महात्म्य री पुस्तकां देखणी। सीताराम, नाम-प्रताप प्रकाश वा भगवन्नाम महात्म्य वा सर्वत्र ही राम चरित्र "रामचरणदासजी कृत" नाम महात्म्य आदि है। या तो प्रायः सर्वत्र आवे है, 'प्रवणो धनुः' इत्यादि कलिसन्तारणोपनिषद्।

ईश नामा पराध छोड़णा वांरा नाम शूँ नाराजगी (तो छापो सिक्का पे आप देश प्रिय क्यूँ नी यो के वो······ ।

(१२०)

हिया री होटां आवे पण हियामें नाम राखणो, जो वो ही आवे "अन्ते मतिः सा गतिः" शूँ हिया री परलोक में भी आवे ज्यूँ सन्निपात में अनुभवी थकी वीती थकी ही बात करे और नी, या ही हियारी है अन्तर्निविष्ट बस।

(१२१)

पाणी ऊनो करे सो कठे जाय ? बन्द करदे' तो भी। अविद्या अनित्य, ने नित्य मानणी। ई

शूँ जाणी जाय, के नित्य अगर कई नी व्हे' तो नित्य री भावना ही क्यूँ व्हे'ती, परन्तु कोई नित्य वस्तु अणी रे नख ही है, सो मृगनाभी * री नाई यो वीं ने भूल ओरां में लीन है।

प्र० अगर यो शरीर नित्य व्हे' तो ?

उ० यो शरीर तो प्रत्यक्ष नाशवान है। (मनख) मृत्यु पाय भी ईं ने नित्य माने है। अगर ईं ने नित्य नी मानता तो अनर्थ क्यूँ करता।

प्र०—शरीर अनित्य व्हे' तो कई, पञ्चभूत तो नित्य है ?

उ० वर्तमान समय में तो स्वप्न भी नित्य है ही, ने पञ्च भूत भी नित्य नी है। क्यूं के काल-कृत व्हेवा शूं परमाणु नित्य है। यूं मानो सो केवल कल्पना है। ईं वच्चे तो नित्य ने नित्य जाणणो ठीक है, ने काल मन कृत, यूं परम्परा शूं नित्य एक ही है। यूं ही सब समझ ले'णा अशुचि आदि।

---

* मोर—जणी री नाभ शूँ कस्तूरी निकले वणी मृग ने कस्तूरी री सुंगध आवे, तो वो जाणे के या गंध और जगा' शूँ आय री' है, आपणी नाभरी नी जाणे भूल जाय है।

(१२२)

अथवा अनित्य है शुचिताआदि शरीर में पण, अशुचिता ही नित्य है, ने आत्मा में अशुचिता आदि अनित्य है, पण शुचिताआदि ही नित्य है। योग सूत्र में *"अनित्या शुचि सिद्धि"* सूत्र देखो।

(१२३)

ज्यूँ कोई केवे, म्हांणे अठे तो आकाश आदि है, तो हंसी री वात है। यूं ही यूँ के'णो म्हूँ सुखी हूँ, दुःखी हूँ, आदि। ई तो सर्वत्र है, एक में ही क्यूँ!

(१२४)

अगर म्हूँ करूँ तो आंखां शूँ शुणणो वगेरा विपरीत क्यूँ नी करूँ। ई शूँ ई प्राकृत है। प्रकृति शूँ अणोतरे रा ही वण्या थका है। अहंकारसहित, सांख्य, ई शूँ ही सुगम मान्यो है, शान्ति पर्व में भीष्मजी।

(१२५)

अहंकार रो अहंकार छूटणो ही मोक्ष है।

(१२६)

अहं री उत्पत्ति।

जरया जरया कर्म अनादि अविद्या शूँ व्हिया, वरया वरया संस्कार जीव पे पड़ गया, सो ही 'अहं' है। वीं ने वींज माफिक शरीर मिल गयो। याने, स्वतः वरयो हो शरीर वणी आपणों मान लीधो। ज्यूँ कणो चोरी करने आपने चोर मान लीधो, सो यूँ विचार राखणो के कर्मानुसार 'अहं' वण्यो है। सो ईं न्यावटा शूँ कई मतलब ? जरया करे वरया ही भरे। ईं रा हिसाब में कुण पच मरे। दूज्यूँ 'अहं' तो विचार मात्र है, ज्यूँ अतरा विचार ज्यूँ हीज अहं है। पण ईश्वर री माया है, के एक विचार जीव व्हे' जाय।

(१२७)

चेतोदर्पणमार्जनं भवमहादावाग्निनिर्वापणं,
श्रेयः कैरवचन्द्रिका वितरणं विद्यावधूजीवनम्।
आनन्दाम्बुधिवर्द्धनं प्रतिपदं पूर्णामृतास्वादनं,
सर्वात्मस्नपनं परं विजयते श्रीकृष्णसङ्कीर्तनम्॥

(भावार्थ—जो श्रीकृष्ण भगवान् रो भजन चित्तरूपी काच ने साफ करवावालो है, संसाररूपी लाय ने बुझावावालो है,

जीवाँ ने खूब शांति देवावालो है, विद्यारूपी स्त्री रो जीवन है, आनंदरूपी समुद्र ने बधावावालो है, पग-पग में अमृत ने पावा-वालो है, और जो बहुत ही शीतल है, वो हीज संसार में सब शूँ उत्तम है।)

नाम्नामकारि बहुधा निज सर्व शक्ति—
स्तत्रार्पितो नियमितस्मरणेन कालः ।
एतादृशी तव कृपा भगवन्ममापि
दुर्दैवमीदृशमिहाजनि नानुरागः ॥

(भावार्थ—हे भगवान् ! आपरी तो पूरी दया है ही, परन्तु आपरा नाम स्मरण में खुद री सब शक्ति लगाय देवा पर भी आप में अनुराग नी उत्पन्न व्हियो अर्थात् आपरा चरणारविंदां में भक्ति नी व्ही'। यो म्हारो दुर्भाग्य है।)

तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना ।
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः ॥

(भावार्थ—चारा रा तिनका शूँ पण (अधिक) नीचो, वृक्ष शूँ पण (अधिक) सहन शील, मान अर्थात् अहङ्कार रहित और दूजां ने मान अर्थात् आदर देवावालो व्हे' ने सदा सर्वदा भगवान् रो भजन करणो।)

न धनं न जनं न सुन्दरीं,
कवितां वा जगदीश कामये ।
मम जन्मनि जन्मनीश्वरे,
भवताद्भक्तिरहेतुकी त्वयि ॥

(भावार्थ—हे भगवान्, नी तो म्हूँ धन चाऊँ हूँ, नी कुटुम्ब ने नी जो सुंदर कविता। केवल, जन्म-जन्म में परमात्मा में लो रहित भक्ति व्हो' याही ज म्हूँ चाऊँ हूँ।)

अयि नन्दतनूज किङ्कर,
पतित मा विषमे भवाम्बुधौ
कृपया निजपादपङ्कज-
स्थितधूलीसदृशस्वभावया ?॥

(भावार्थ—हे नन्दकुमार, म्हूँ, आपरो सेवक हूँ सो आप संसार सागर में पड्या थका म्हने आप आपरी चरणरज श बचाय लेवे ?)

नयनं गलदश्रुधारया,
वदनं गद्गदरुद्धया गिरा।
पुलकैर्निचितं कदा वपु—
स्तव नाम ग्रहणे भविष्यति ॥

(भावार्थ—हे भगवान्, आपरो नामस्मरण करवारे सम आंसुवारी धारा शूँ युक्त आखाँ, गद्‌गदकंठ वालो मुख औ रोमांचवालो शरीर कणी दिन व्हे'गा ?)

युगायितं निमेषेण चक्षुषा प्रावृषायितम्।
शून्यायितं जगत्सर्वं गोविन्दविरहेण मे॥

(भावार्थ—भगवान् रा वियोग शूँ, क्षण, युगाँ रे समा व्हेवा लागो, आखाँ चौमासा रा बादला बण गई' और जग सूनो व्हे' गयो।)

आश्लिष्य वा पादरतामनुष्टुमा-
मदर्शनान्मर्महतां करोतु वा ।
यथा तथा वा विदधातु लंपट
मत्प्राणनाथस्तु स एव नापरः ॥

(भावार्थ—गोपी प्रार्थना करे है, के हे भगवान्, म्हने भावे तो कंठ में लगाय ने चरणाँ में शरण देवे, भावे दर्शन नी देय ने दुःखी करे—मार न्हाके, भले ही आपरी इच्छा व्हे' सो करे, परन्तु म्हारे प्राणप्यारा आप ही ज हो दूजा नो ।)

बस, ई में सम्पूर्ण परमार्थ विचार आयगयो । ई सिवाय कई भी नो है ।

(१२८)

अगर संसार रो ही कियो प्रमाण है, तो सब संसार थने थूँ के'वे, पर म्हूँ कोई नी केवे । जदी म्हूँ किस तरे व्हियो ? ईं शूँ सब 'थूँ' है, याने (मध्यम) पुरुष है । उत्तम पुरुष तो एक ही है । ईंरो यो मतलब-के जो दीखे है, सब थूँ है, म्हूँ नी है । किन्तु 'म्हूँ' तो एक ही ज दीखे है । थूँ नराई, म्हूँ एक, अहो स्वयं प्रकट व्हेवे ।

प्र०—सब तरे' शूँ वींने अविद्या किस तरे' दबावे ?

उ०—जड़ भरतजी वत्, वो रो वो ही के'णो फलाणी वात म्हूँ करूँ, तो ठीक वठे यूँ विचारणो "थूँ करे तो ठीक"। कोई कठिन काम आय पड़े, वठे मनख यूँ के' फलाणो काम म्हाँ शूँ नी व्हे' तो पण पछे म्हें कियो, थारे अबे कई करणो है ? ने फलाणा, अब के जो थूँ चूक जायगा तो फेर अस्यो अवसर नी मिलेगा। यूँ ही सब काम विचारणा 'अहन्ता' नी आवा देणी।

॥ अथ नामापराध, पद्य ॥

(१२९)

श्री राधाचरण गोस्वामीजी लिखित

सतां निन्दा नाम्नः परममपराधं वितनुते,
यतः ख्यातिं यातः कथमु सहते तद्वि गरहाम् ।
शिवस्य श्री विष्णो र्यइह गुण नामा दि सकलम्,
धिया भिन्नं पश्येत् स-खलु हरिनामाहितकरः ॥

गुरो रवज्ञा श्रुतिशास्त्रनिन्दनम् ,
तथार्थवादो हरिनाम्नि कल्पनम् ॥
नाम्नो बलाध्यस्यहि पापबुद्धि,
र्न विद्यते तस्य यमै र्हि शुद्धिः ॥
धर्मव्रत त्यागहुतादि सर्व,
शुभक्रिया साम्य मपि प्रमादः ॥ ६३ ।

अशुद्ध चित्तेन

श्रुते (हिं) नाम माहात्म्ये यः प्रीतिरहितो नरः ।
अहं ममादिपरमो नाम्नि सो ऽप्य पराधकृत् ॥
जाते नामा पराधेऽपि प्रमादेन कथञ्चन ।
*सदा संकीर्तयन्नाम तदेकशरणो भवेत् ॥**

(१३०)

अगर यूँ विचार करां के दुःख व्हे' जीं शूँ हाल म्हारो मोक्ष नी व्हियो, सो कई, दुःख म्हने ही ज व्हे' है, यूँ ही सब ।

(१३१)

सुखं दुःखं समं कृत्य—

यूं विचारणो के ई दो ही चित्तरी वृत्तियां है। यूँ ही सब ही वृत्तियां ने समान ही मानणी । क्यूं के वृत्तिपणो तो समान ही है और ओछो वत्ती भी नी व्हे' शके, अप्रत्यक्ष व्हेवा शूं, सो देश कालादि परिच्छेद भी यॉं में नी व्हे' शके, तो एक ही वात व्ही' माया एक, ईश्वर एक, बस, आकाशवत् ।

---

*नोट—अणी री पुस्तक नी मिलवा शूँ श्लोकां ने शुद्ध नी कर शक्यो हूँ । —सम्पादक

आकाश में तो घटादि उपाधि पण है, पर वृत्ति में तो सो भी नी।

(१३२)

सब एक है, पण म्हूँ दूजो नी व्हेऊं। ज्यूं स्वप्न में एक मनख म्हारे पे प्रहार कर रियो है, सो वीं में, ने म्हारे में फर्क नी। क्यूं के दोई कल्पित है, परन्तु एक में अहं कर्मानुसार व्हे' गयो। यूं ही मनख जश्या जश्या कर्म करे वश्या वश्या ही अहं वण जाय है। अहं केवल कर्म रो समूह है, सो स्वप्नवत् है, ज्ञान शूं नाश व्हे'।

(१३३)

राजकुमार वत्।

सब ही मनो मन बन्धन समझ गया, ने राजा ने पकड़ायदियो। भाव,—राजा = जीव अहंकार शूं बन्ध्यो है, तो अहंकार तो सर्वत्र है, फेर बन्धन कई? पर एक दूसरा ने पूछे जदी तो राजा नें छुड़ाय दें'। यूँ ही एक दूसरा रो विचार करे, जदी तो निश्चय व्हे' जाय, के आपाँ तो सारा ही एक ही समान मनो मन बन्ध मान्यो है, याने पृथक् दीखाँ हाँ। या बात यूँ है।

कणी राजा आपणाँ पुत्र ने नाराज व्हे' ने वीं री माता सहित निकाल दीधो। वो पुत्र घड़ो व्हियो, जदी वीं री माँ कियो, थारा बाप ने बाँध लाव, तो कुँवर सभामें जाय राजा ने एक डोरा शूँ बाँधवा लागो ने यूँ कियो, के एक आदमी म्हारा शूँ नी मिल्यो है, दूज्यूँ सब म्हारे शामिल है। तो सारा ही मनो मन समझ्या। नी मिल्यो सो तो 'म्हूँ' ही हूँ, सो अतरा शूँ किस तरे' लड़ूँ। यूँ मनो मन डर गया ने राजा बन्धगयो, ने वीं राणी रे पगाँ में राजा ने पटक दीधो। राणी = माया, कुमार = मन, राजा = जीव, सभा = प्रकृति, या ने, स्वभाव वा अहङ्कार। पुरुष परीक्षा में या वात है।

(१३४)

कोई आदमी जद प्रकृति रो वर्णन करे, तो मन वड़ो ही प्रसन्न व्हे' और फेर वीं ने शुणवा रो विचार व्हे' वात चावे जशी ही व्हे' यो ही काव्य में काव्यत्व मान्यो है, ने ई' शूँ ही मीठी दवा शूँ रोग मिटवा री उपमा दीधी है, ज्यूँ ही जें या वात।

अथवा कणी वात कीधी थाळी पे रींगटी खेंचवा शूँ रूँ रूँ ऊभा व्हे' जाय, या नाहर रो वर्णन वगेरा वा विवाह रो वर्णन रघुवंश में, वीं शूँ चित्त

ने प्रसन्नता क्यूँ व्हे'। साहब शकुन्तला रो श्लोक वाँच, क्यूँ नाच्यो। मतलब-वठे एकत्व प्राप्त व्हे' है, प्रकृति रा-वर्णन शूँ याने प्रथकता लोप व्हे' है। यो ही साँख्य रो मोक्ष है, ने काव्य रूपी मोक्ष यूँही सहज में व्हे' है। विचारवारी वात है।

(१३५)

जो सुख चाहे सतत मन, दुख ते कछुक डरान।
छांड़ि विषय विष अवासि कर, अमिय ईश यश पान॥

(१३६)

स्वप्न साक्षी, जाग्रत साक्षी, सुशुप्ति साक्षी एक ही है।

(१३७)

तृष्णा दुःख लावे, अहंकार उठावे ऊँचावे धारण, करे।

(१३८)

दोहा—*पाठी ऊमर पीठ दे न्हाठी सों भयधार।*
काठी कर में पकड़ ने लाठी लीधी लार॥

स्वरचित

अर्थ—लाठी यूँ पकड़ी है, के ऊमर चली गई, ज्यूँ या भी नी भाग जाय, परन्तु या तो स्मशान

---

* पाठी ऊमर अर्थात् जवानी तो डर ने पीठ देय गई। अब हाथ में मजबूत पकड़ ने लाठी लीधी है।

तक साथ देगा, वां वीं युवा ऊमर ने सजा देवा री इच्छा शूँ लाठी दीधी है। भाव-पाछी युवावस्था री इच्छा नी करणी सो भय = मृत्यु भयधार ने जवानी भागी यो दूजो अर्थ व्हे, ।

(१३९)

माया केवल पत्तो लिख्यो पत्र है ।

ज्यूँ डाक में शूँ आपणा नाम रो लिफाफो आयो, पण माँय ने कई नी । यूँ ही ऊपरे सरस, पर परिणाम कुछ नी, खोल देणो सो कुछ नी ।

(१४०)

शरीर कर्म शूँ वण्यो, ने ईं ने देखवा शूँ कर्म बन्धन व्हे' ने यो ईश्वर रूपी खाँड रो मेल मन बाळक ने दीधो, जो ईं ने काम में लावे वीं ने और कई नी मिले ने घणाँ बाळकाँ री माँ ज्यूँ यो शरीर गारा रो खेलकण्यो, है ईं शूँ नी खेले वणी शूँ माता प्रसन्न व्हे' ।

(१४१)

दृढ़ता शूँ छोड़ दो केवल मन शूँ।

(१४२)

बुद्धि ।

निश्चय शूं ही संसार व्हियो, ने निश्चय शूं ही

नाश व्हे । या निश्चय कीधी, यो म्हां, यो यो। मेसमेरिजम भी निश्चय शूं तळाव देखावे। बस, यो मन निश्चय ही ईश्वर वणायो और कुछ नी वणायो।

(१४३)

जींरे आश्चर्य है वो सत्य है, जी शूँ या वात सत्य है, यो भी तो विचार है, ने नी दीखे, या असत्य है, वो भी विचार है। नी दीखे तो वी दोई समान ही व्हिया। यूँ ही द्वन्द दोई असत्य व्हिया। जीं शूँ सत्यासत्य सिद्ध व्हे सो ही सत्य श्री कृष्ण चन्द्र है।

(१४४)

रतनारे (बोखारे) दाँत काड़वा री ना है, माया री सत्यता भासे तो भी असत्य है। व्यवहार भले ही व्हो' परमार्थ में झूठ है।

(१४५)

श्री भक्त शिरोमणी मीरा मातां री यो वचन याद राखणो चावे, के पुरुप तो एक ही श्री कृष्ण चन्द्र है, और कुल स्त्री (प्रकृति) है। ईं में बड़ी सहज मुक्ति है, केवल स्त्री भाव राखणो।

((१४६))

"एकोऽहं बहुस्याम् ।" श्रुतिः ।

एक ही म्हूं बहुत प्रकार रो व्हूं । एक ही जो "अहं" सो बहुत तरे रो व्हियो ज्यूं अहं सुखी दुखी आदि सब व्यवहार में यो ही ध्यान राखणो, के एक ही "अहं" है । है भी यूँ ही बिलकुल फरक नी है ।

(१४७)

ईश्वर री याद यूँ राखणी ज्यूं मुसाफिर ने रेल री याद रे' । दो आदमी एक जगा' सूता । एक एक हेलो दोयाँ ने ही पाड़्यो एक झट जाग गयो, एक नींद कारण, वींरा मन में यद्यपि नींद में हो, पर याद रेल री यूं ही समाधिस्थ पुरुष भी पाछो उळझ जाय, पर दूजा रे रेळ में बेठवा री नी ही, वो संसार ने असत्य जाण तो हो, सो नी जाग्यो । थोड़ी भी संसार री सत्यता महा मोहने देखावे है ।

(१४८)

तारथ राज प्रयाग जहँ, तिरवेणी की तीर ।
तहां बिन्दुमाधव निरखि, सहज हि शुद्ध शरीर ॥

(१४९)

षट् चक्र में वा मातृका वर्ण रा ध्यान शूं शब्द ब्रह्म रो ज्ञान व्हे' है। मतलब-सब ही वर्ण अक्षरात्मक है, वैखरी मध्यमाद्यादि सब ही व्हिया है।

(१५०)

अहं, (म्हूँ) इत्यादि म्हूं कई सत्य है? ज्यूं स्वर, व्यजन में है, यूं ईश्वर जगत में है। जगत ईश्वर विना नी, ईश्वर जगत विना भी है, ने ईश्वर विना जगत है ही नी।

वचन अतीता होय के, भवन्की भीता खोय।
गीता जननी गोद में, रहो नचीता सोय॥

॥ इति ॥

परमार्थ विचार

चोथो भाग

नर तन पाय विषय मन देहीं ।
उलटि सुधा ते शठ विष लेहीं ॥

श्री मानस

न बुद्धिभेदं जनयेत् अज्ञानां कर्मसङ्गिनाम् ॥

श्री गीताजी

भूमिका

यो परमार्थ विचार रो चोथो भाग है। अणी में भी महात्मा रा मुख शूँ शुण्या थका और पुस्तकां में कथन कीधा थका, विचाराँ रो संग्रह है। या पुस्तक यत्न शूँ राखणी योग है। क्यूँ के रहस्य भी अणी में है, जीशूँ दुर्जनाँ री दृष्टि शूं बचावणो चावे। ज्यूँ सुन्दर वस्तु (बालक) ने डाकण री दृष्टिशूँ बचावे है। यद्यपि संग्रहकार पे अणीरा एक पण विचार रो असर नो पड्यो है, केवल "पर उपदेश कुशल बहुतेरे, जे आचरहिं ते नर न घनेरे" चरितार्थ व्हे'रियो है, तथापि कोई सज्जन आचरण करेगा या विचार, संग्रह कर लीधो है।

---

(१)

"असक्तो ह्याचरन् कर्म"

श्री गीताजी

असक्त यूँ व्हे' शके है के जो विचार चित्त में व्हेवे वा करे सब ने यूँ समझे, ई तो व्हियां ही करे है, ने अनेक वार व्हिया है, भुक्तभोग है, अनुच्छिष्ट-नी है पे'ली पण अनेक दाण काम में अनेकां रे आया थका है, नई चोज कुछ भी नी है, यो विचार हरेक समय राखवा शूँ असक्त व्हे' जायगा।

(२)

प्र०—भक्ति, ने ज्ञान में कई अन्तर है?

उ०—भक्ति, अनुलोम विचार र ने विचार कर प्रपंच ने विचारणो। ज्ञान प्रतिलोम है, प्रपञ्च ने विचार ईश्वर ने विचारणो। सब ईश्वर री माया है। म्हूँ कुछ नी हूँ और यो विचार पण ईश्वर री माया है। जो ईश्वर री इच्छा व्हेवे सो ही व्हेवे या भक्ति है। सब झूठ है, यो ज्ञान है।

(३)

या माया बड़ी वृद्धा है, तो पण नित नवी दीखे है। वृद्ध पुरुषां रा वचन है, के "जण जण

हारी तो पण अकन कुँआरी" सदा रम्य ही दीखे है।

(४)

"आपूर्य"

श्री गीताजी

ई रो भाव यूँ व्हे' है, के जणी तरे' समुद्र पूर्ण है, तो पण वों में अनेक नदियां रो जळ आवे है।

"जिमि सरिता जलनिधि महं जाई"

श्री मानस ·

यूँ ही अनेक कामना पण पुरुष नखे आवे है, वीं में ज्ञानी अज्ञानी रो तो अन्तर यो बतायो है, के वीं में स्वतः ही कामना आवे है। परन्तु अज्ञानी कामना नखे जावे है। ई शूँ ज्ञानी कामना व्हेवा पे यूँ विचारे, ज्यूँ समुद्र में पाणी आवा नी आवा शूं हानि लाभ नी, यूं ही आत्मा में पण कामना शूं कई हानि लाभ नी। ई तरे' शूं वो कामना री उपेक्षा करने वांरे लारे नी लागे। जो, व्हेवे सो व्हेवे ही है, ई शूं बन्धन नी व्हेवे। परन्तु अज्ञानी सहसा कामना रे लारे लाग नष्ट व्हे' जावे।

"कामानुसारी पुरुषः कामाननु विनश्यति"

श्री भारत

काम कामो शांति ने प्रास नी व्हेवे । क्यूं के वो यूं विचारे, यूं कर काढूं, यूँ कर काढूँ पर ज्ञानी विचारे अब या कामना व्ही' अब या यूं व्हेवेगा। बात एक ही, विचार रो फरक है। ज्ञानी जाणे कामना है, सो बारणे ही नी है। किन्तु म्हारी ही तरंग रा आकार है, और अज्ञानी जाणे काम्य वस्तु बारणे कुछ अन्य है।

(५)

आत्मा ईश्वर अत्यन्त समीप व्हेवा शूं नी दीखे ज्यूं काजळ वा आंख ही नी दीखे।

जगत जनायो जेहि सकल, सो हरि जान्यो नाहि ।
ज्यों आंखिन सब देखिये आंखि न देखी जाहि ॥

बिहारी सतसई का

पढ़े लिखे में का पढ्यो, अहे समझिबो सार ।
जो समुझावे सबन को, सोतू समझ बिचार ॥

चतुर चिन्तामणि

(भाव) सर्व साक्षी आत्मा है, जो या म्हं लिख रियो हूँ, ईंने विचारे सो ही आत्मा ने विचारे सो ही आत्मा, ईंने पण विचारे सो ही आत्मा। पुष्पक विमान न्याय शूं एक जगा' बरोबर खाली ही है, चावे जतरा मनख बैठ जावो। यूं ही जठा तक विचार आगे करां, आत्मा आगे ही आगे रे'गा। ई शूं ही निर्लेप ज्यूं पाणी वढ़े, कमळ ऊंचो ही ऊंचो व्हे' तो जाय। ज्यूं लुड़क दवात ने चावे जतरी ही गुड़ावो मूंडो ऊंचो ने पींदो नीचो ही रे'गा।

यूँ ही ब्रह्म निर्लेप ही रे'गा। यो विचार श्री काकाजी श्री गुमानसिंहजी हुकम कर्यो, यो ही सर्व सिद्धान्त है। इ वास्ते जो विचार है, वींरो साक्षी आत्मा है। चावे ऊँडा शूँ उँड़ो विचार व्हे'। सूर्य नारायण वतरा ही छेटी दीखेगा, चावे मे'ल पर शूँ देखो, चावे मंगरा पर शूँ देखो ने चावे जमीन पर शूँ चा खाड़ा शूँ देखो। वठे द्वारकारी नावाँ वत् पाणी शूँ ऊँची'ज रेवे।

" जाणे सोही आतमा जावे सो मन जाण "

श्री गुमानसिंहजी

(६)

एक दिवस मरि है अवस, स्ववस कि परवस होय।
केस फस आशा विवस, दियो मनुप तन खोय॥
आशमान क्यूँ व्हे' रह्यो, नाशमान जग जान।
प्यास हान नहि होत जहँ, भासमान जल भान॥

स्वकृत।

माँय ने संसार असत्य जाणो, पण बारणे सत्य—स्पप्नवत् (जाणो)

(७)

वासना रहित व्हेवा शूँ मुक्ति व्हेवे।

प्र० वासना विना व्यवहार किस तरे' करे?

उ० वासना रहित व्हे'ने व्यवहार करे।

प्र० व्यवहार ठीक नी व्हेगा। क्यूँ के याद नी रखवा शूँ भूल जायगा?

उ० व्यवहार करणो है या परमारथ। परमारथ में संसार ने मिथ्या जाणणो पड़े तो मिथ्या वस्तु रो कई विचार; जठी चालणो वठो देखणो। ईं शूँ ही श्री शङ्कर स्वामी आज्ञा करी है, के कर्म ज्ञान शामिल नी व्हेवे वींरी आड़ी शूँ तो व्यवहार

मिथ्या है, तो वासना किस तरे' व्हेवे। नाम देव जी मरवा लागाने मृत्यु रो निश्चय कर लीधो, जदी परमेश्वर दर्शन दीधा यूँ ही ईं शूँ बिलकुल मूँडो फेर लेवे जदी परमारथ व्हेवे। परन्तु वींरो व्यवहार नी विगड़े। क्यूँके "*योग क्षेमं वहाम्यहम्*" श्री गीताजी में आज्ञा है। पण यूँ विचार राखे फलाणी वात विगड़ नी जाय। जतरे वींरे निश्चय में संसार सत्य है, ने परमारथ नी सधे।

(८)

बाईशिकल चलावती वगत विचार हात में राखो ने व्यवहार करती वगत मन में।

(९)

एक महात्मारा शिष्य शान्त स्वभाव वाला हा, वाँरो श्याम रंग देख लोग निन्दा करवा लागा, ने दुखो करवा लागा। जदी वणाँ गुरु नखे जाय ने कही के ईश्वर री सृष्टि में पण करया लोग है, व्यर्थ ही दूसरां री निन्दा करे। गुरु कही थूँ पण वरयो ही है। ज्यूँ थारो रंग ईश्वर कृत है, यूँ ही वाँरो स्वभाव पण ईश्वर कृत है।

(भाव) महात्मा ने चावे, के अतरी पण दूसरां री वात मन में नी लावे।

(१०)

जो चित्त फूँक शूँ (मूँडा री हवा शूँ) उड़ जाय, वो कई ठे'रे अर्थात् मनुष्याँ री बात शुण चलित व्हे' जाय, वो कई भजन वा कार्य कर शके।

(११)

एक आदमी रूई री महीन तन्तु रो पञ्जर बणाय हवा ने अग्नि शूँ बचावा री कोशिश कीधी अग्नि शूँ वो भस्म व्हे' गयो। दूसरे पण यूँ ही, थूँ ही सब काल अग्नि दिन तूल ?

(१२)

'कबीर तेरी झोपड़ी गल कटियन के पास।
जो करि हैं सोइ पाइये तू क्यों होत उदास॥"

गळ कटिया चित्तवृत्ति, माया प्रकृति, तू आत्मा, अहङ्कार रा कर्म ने अहङ्कार भुगते मन रा मन, बुद्धि रा बुद्धि, शरीर रा शरीर, इन्द्रियाँ रा इन्द्रियाँ, तो ई' में थूँ उदास क्यूँ व्हे' है। भाव-थूँ याँ शूँ अलग है।

(१३)

संत शास्त्र सतगुरु तिन्हे, समझावे किहि भाँत ।
मरिवेकी माने न जे, मरिवे हू ये बात ॥ १ ॥

स्फुट।

ज्ञानी पक्ष में—वो आपने सच्चिदानन्द जाणे है। ईं शूँ सन्त आदि वीं ने उपदिष्टोपदेश (उपदेश मिल्यो थको उपदेश) किस तरे' करे। वाँ रो शरीर छूट जाय, तो पण वो आपरो मरवो नी मानेगा।

अज्ञानी पक्ष में—मरवो जाण्या विना वैराग नी व्हेवे, वैराग विना ज्ञानादि परमार्थ रो कई साधन नी व्हेवे, तो अज्ञानी मरजावे तो पण मरवा री बात नी माने। आखरी दम तक पण संसारी वातां ही करे, ने मनन करे वा उपदेश करताँ २ मरजावे, तो पण नी माने वा मनुष्य मर जावे है, अनेक मर्‌या थका देखे है, तो पण जो मरवा री बात नी माने वीं ने कई उपदेश लागे। मरवा री वाताँ के'वा में सब ही माने, अन्तर में नी।

"स्वमस्तकसमारूढ़ां मृत्युं पश्येज्जनो यदि।
आहारोऽपि न रोचेत किमुतान्यविभूतयः ॥"

(१४)

जो या समझ लेवे के अन्तःकरण ही में सुख दुःख है, बारणे कुछ भी नी, वींरो पण चित्त स्थिर व्हे' जावे। क्यूँके अन्तर दृष्टि व्हेवा शूँ।

(१५)

सुख में सुखी नी व्हे'णो, दुःख में दुःखी नी व्हे'णो, सुख दुख तो व्हे' हीज है। वीं में फेर दूजो सुख दुःख वीं सिवाय नी कल्पणो।

(१६)

संसार में सुखरी अपेक्षा दुःख विशेष है। क्यूँके कामना पूर्ण व्हेवा में सुख ने, नी व्हेवा में दुःख व्हेवे, सो अनेक कामना हर समय व्हे' ती रेवे, वीं में शूँ एक आधी पूर्ण व्हेवे है।

(१७)

आपणी वृत्याँ ने देखता रे'णो के दुःख रा बीज आपाँ हीज वावाँ हाँ, ने जो कामना पूर्ण व्हेवे वणी में भी कामना रे'वा शूँ दुःखदाई हीज है।

(१८)

सुख, दुःख, मान, अपमान, प्रिय, अप्रिय आदि द्वन्द्व है मनोरथ रूपी नदी रा दोई किनारा

है। विना किनारा नदी रो अभाव है। एक किनारो रे' तो दूसरो पण है, एक नी है तो दूसरो पण नी है। एक नी है, तो नदी पण नी है, नदी नी है, तो कर्तव्य पण नी है।

(१९)

सुख दुःख यूँ आपाँ अभिन्न हाँ, तो पण सुख दुःख नो व्हे'णा चावे, भिन्न हाँ तो पण नी व्हे'णा चावे।

(२०)

जो आपाँ (मनुष्य) ने सुख व्हे' है, वीं में यूँ सन्तोप निकाळ ने देखो के सुख व्हे' है, के दुःख। वा ज्यो आपाँ (मनुष्याँ) ने दुख व्हे' है वीं में सन्तोप मिलाय दो, पछे वो दुःख व्हे' है, या सुख। भाव—सन्तोप में सुख असन्तोप में दुःख।

(२१)

ज्यूँ सुवर्ण में भूपण कल्पित है, यूँ ही ईश्वर में संसार कल्पित है। ब्रह्म में प्रकृति, ई में महत्तत्व अहङ्कारादि, तो ज्यूँ वृक्ष रा कमाड़, पेटी खेलकण्या, (काठ्काँ रे खेलवारी चीजाँ) हाथी आदि यूँ ही। क्यूँके याँ में काष्ठ बरोबर है और झूठो।

(२२)

ज्यो स्वयं ही कीधो थको है, वो कर्ता किस तरे' व्हेवे।

श्रीभारत

(२३)

आकाश में शब्द ने कान में आकाश तो शब्दादि रो जीं शूँ भान व्हे' वो आत्मा।

श्रीभारते

(२४)

'आप मर्‌याँ विना स्वर्ग नी दीखे' लोकोक्ति आप अहं कामना सुख रे वास्ते करे, जद छोड़वा में ही सुख है, तो सुख रे वास्ते दुःख क्यूँ लेणो। जद बैठा बैठा ही मनोरथ सिद्ध व्हे' तो सन्दिग्ध कर्म क्यूँ करणा निश्चय ही करणो। ज्यो सम्पूर्ण कामना सिद्ध व्हेवा शूँ व्हेवे तो सुख, ने कामना त्याग शूँ व्हेवे वो सुख मिलायो जावे, तो त्याग शूँ व्हेवे सो ही विशेष है।

(२५)

जो पृथ्वी में गुण है, वी पाणी में पण है। क्यूँ के पाणी विना भूमि में आया कठा शूँ, यूँ ही सब प्रकृति में है।

(२६)

भजन रो सुभीतो—

आपाँ यूँ विचाराँ, के अतरो कार्य व्हेवा पे भजन व्हे' शके है, दूज्यूँ नी सो पण ठीक है। पर वश्यो एकान्त आदि सुभीतो करणो ईश्वर रे आधीन है और कामना वढ़ावणो पण अनुचित है। सब में मुख्य साधन यो है, के ईश्वर रा नाम ने नी भूलणो हर वगत सो, अभ्यास शूँ व्हे' शके है, ने यदि साधनोचित स्थानादि प्राप्त नी व्हिया ने मृत्यु आय गई तो मनुष्य जन्म यूँ ही परो जायगा। ई वास्ते समय ने हाथ में शूँ नी जावा देणो चावे, ने साधनोचित स्थानादि तो सारा ही है, व्यवहार में भजन व्हे' वींरी होड़ एकान्त रो भजन नी कर शके। क्यूँके एकान्त, चित्त शूँ ही है। काम क्रोधादि रो सान्निध्य व्हेवा पे पण वीं शूँ वचणो वा कोशीश करणी। कामना नी करणी, सबरो भलो चावणो। इत्यादि साधन प्रत्येक स्थान पे व्हे' शके है। जणी मन शत्रु ने मारणो है, वो सब जगा' साथे ही है, ने पास ही है, पराक्रम री आवश्यकता है, सो ही श्रीभगवान् गीताजी में आज्ञा कीधी है, जो विषय सुख प्राप्त व्हेवा पे भी

सन्तोष नी कर शके, वो घणा रे विना किस तरे" करेगा। हाँ, साधनोचित स्थान प्राप्त व्हे' जाय. तो उपेक्षा नी करणी।

(२७)

एकान्त बैठ ने मन रोकवा री इच्छा नरा ही करे है। क्यूँ के मनखाँ में मन भजन में नी लागे, तो यूँ विचारणो के मनखाँ में आपाँ री आसक्ति है। ईं ने छोड़वा में दुःख व्हे' है, तो एकान्त बैठने जो दुःख उठावणो पड़े, न जतरो प्रयत्न करणो पड़ेगा, वतरो अठे ही बैठा बैठा, क्यूँ नी कराँ। मतलब वो पण साधन, यो पण साधन।

नारायण रंगारा मेश्री

(२८)

साधन ध्यान रो—

श्री ईश्वर री मूर्ति रो ध्यान यूँ करणो, के. ज्यूँ—मुरगी रा अण्डा रो (क्यूँके) वी में ठण्डाई है। भाव-ठण्डाई शूँ धीरे धीरे पाँच मिनट तक ही ज नित्य करणो, ज्यूँ मुरगी रा अण्डा. में चैतन्यता प्रकट व्हे' जाय सेवा शूँ। यूँ ही मूर्ति में पण व्हे' जाय।

(२९)

ध्यान में संसार दीखे, यूँ ही पछे पण तो दो ई समान ही मानणा। ज्यूं भारत में है, के, स्वप्न में आदमी दीख्यो, वो ही जाग्रत में दीखे, तो एक ही वात है, यूँ जाणणो। अठे बैठाँ भींत पाछे गर्भ में व्हे' जो दीख जाय, वा भविष्य दीख जाय। जद वेदान्त क्यूँनी मानणी आवे, ने नी मानणी आवे सो उन्माद रो कारण है।

(३०)

परमारथ में माता सहायता करे, खालो तत्व दीखे। ज्यूँ हीज-नो है, याँरा अधिष्ठाता रा दर्शण पण व्हे' है, ज्यूँ शरीर में जीव रा।

(३१)

मैया मेरो नाम है रुचिर कन्हैया।
खेलत खात रहत नित व्रज में, चारत नित्त नन्द की गैया
जो तूँ बिसरगई है मो का, पूछ देखि बल मैया ॥ १ ॥

(३२)

"या एषा परम पुरुषस्य परा ललना (स्त्री) या कृपेति (दयेति) भण्यते या अस्मात् गर्भं दधाति च सचराचरं सूयते।"

जो ई परमपुरुष (पुरुषोत्तम) री परा प्रकृति नामा स्त्री है, 'जो 'दया' यूँ कही जाय है, वा अणी पुरुष शूँ गर्भ धारण करने फेर संसार ने (म्हाँने) उत्पन्न करे है। भाव—चैतन्य अंश ने प्राप्त करने माया संसार ने जणे है और वा मृदु स्वभावा है, ई शूँ जीवाँ रो उद्धार भी करे है।

(३३)

इजहार देवा में मुद्दई मुदायला आपणा पक्ष ही सावित करेगा, पण हाकिम ने निर्णय करणो चावे, के सांचो कुण है, वांराँ भाव, इजहार, गवाह पे'ली री पेठ आदि शूँ।

मन, ज्ञान-मुद्दई, इजहार वात संसार, न्याया-धीश-बुद्धि (मुदायला ?)

हीरानन्दजी।

(३४)

पे'ली शंका नी ही अब व्हीं' यूँ ही चली जायगा, दुःख सुख भी (यूँही चल्यो जायगा।)

रतनलालजी आमेटा।

(३५)

भाव ही भारी हळको है, ज्यूँ छोटीने, म्होटी ने, लोग विचारे।

प्र०—जदी विपरीत कल्पना क्यूँ नी व्हे'?

उ०—विपरीत ही ज है, वा सूर्य किरणा में जळरीज कल्पना व्हे' यूँ ही म्हारे में संसार री हीज। आपां जणी वात ने ज्यूँ मान रियां हां सो ही भ्रम है। या वात यूँ नी है, जो महात्मा कही, ज्यूँ है सो, प्रत्यक्ष, अनुमान आगम शूँ सिद्ध है।

(४०)

तीरने खेंच ने छोड़वा शूँ लक्ष्य पे लागे। यूँ ही वैराग्य शूँ कर्म ने छोड़णो उचित है। यूँ रो यूँ छोड़वा शूँ वचेई पड़ जायगा। संकल्प छोड़णा, फेर अणी छोड़वारो संकल्प रो पण त्याग व्हे'णो चावे। पे'ली ही छोड़वा रा संकल्प रा त्याग शूँ कल्याण व्हे' तो सारां रो ही व्हे'।

(४१)

स्वभावोऽध्यात्म उच्यते।

श्रीगीताजी!

"स्वभाव" आपणा भाव रो ज्ञान, व "स्व-भाव" (आदत) रो ज्ञान व्हे'णो ही अध्यात्म ज्ञान है। भाव-ई ई वातां प्रकृति में है, वा स्वाभाविक है। अश्यो विचार व्हे', 'सांख्य' ज्ञान व्हे'णो या

यूँ विचारणो, के ई तो भाव है। यावत् भव है, सो भाव ही है. अनेक भाव है। भाव सिवाय भव (संसार) में कुछ नी है। पर आपणो भी भाव करणो चावे, के ई आपणाँ (आत्मा रा) भाव है, सम्पूर्ण भाव आत्मा शूँ है, ईं शूँ स्वभाव है, भाव में पड़णो, ने भव में पड़णो, एक ही है।

(४२)

निश्चय सर्व शास्त्र रो।

पूर्णता, योग री, ज्ञान री, सांख्य री, भक्ति री एक ही है। निन्दा गौण री ने मुख्य री अपेक्षा शूँ है, एक शास्त्र दूसरा शास्त्र री पद्धति में आवा वाळा विघ्नां ने बतावे है, निन्दा नी करे है, बात एक ही है।

(४३)

सब लोग काम, सुखरे वास्ते करे है, पर आज कोई भी अस्यो आदमी नी देख्यो जणी अस्यो काम कीधो व्हे' के वींरे कर्तव्य कुछ भी नी रियो व्हे'। तो जाणी जाय है, के अणाँ ने हाल सुख नी मिल्यो। क्यूँ के सुख मिलतो तो ईं (काम करवा शूँ) रुक जाता; पर काम, मृत्युपर्यन्त करता ही रे' है।

ईं शूँ या बात साबित व्हे' के संताँ ही साँचा सुख ने पायो है।

जेठारामजी

(४४)

नाटक में आठ ही रस मान्या है, शान्त ने नी। क्यूँके शान्त रस री प्राप्ति व्हेवा पे नाटक ही बन्द व्हे' जावे। द्रष्टा ने फेर नाटक देखवा री इच्छा नी रेवे, ने यूँ ही संसार रूपी नाटक भी शान्त रस रा उदय शूँ पूरो व्हे' जाय। ईं शूँ संसार पण शान्त रस ने नी माने। क्यूँके वणारे हाल नाटक देखणो है।

(४५)

कोई आदमी गहरा जल में जाय पड्यो। अब वो पाणी ने दबावे, तो ऊँचो निकळे ने हाताँ शूँ पाणी उठावे तो नी वो बैठतो जाय, यूँ ही संसार रूपी समुद्र में विषय रूपी जळ ने मन पे चढावा शूँ डूबे, ने दबावा शूँ तरे।

(४६)

अन्य वेद में पण मुख्यतया उपनिषदाँ रो अर्थ है। पुराण में अनेक वाताँ प्रायः परमारथ विचार

रीं है। ज्याँरा अर्थ कठे कठे पूछवा शूँ खोल्या है। ज्यूँ पुरंजन, भवाटवी आदि। क्यूँ के पुराण में वेदार्थ है, ने दीखे नी सो आपणो दोष है।

(४७)

दुःख अज्ञान विना नी व्हे', कई व्यवहार कई परमारथ। ज्यूँ व्यवहार में कोई काम विगड़वा शूँ दुःख व्हे' तो काम तो विगड़ गयो. (काम विगड्यो) कई, दुःख शूँ सुधरे है, कदापि नी; यदि वो वींरो उपाय विचारे ने लाध जाय, तो कार्य सुधरणो सम्भव है। पण उपाय नी लाधवा पे भी दुःख व्हेवे, सो पण विना विचार री होज वात है। दुःख शूँ काम विगड़े है सुधरे नी।

प्र०—कणी आदमी री कोई शारीरिक व्यथा शूँ वा अपमान व्हेवा शूँ दुःख री वृत्ति उदय व्हे' सो कई ई पण नी व्हे' शके ?

उ०—अपमान शूँ दुःख व्हे' सो तो पे'ली ही निर्णय कर दियो, पीड़ा व्याधि शूँ जो व्हे' सो व्यवहार में अवश्य दुःख मान्यो जाय है। पर वीं नें चतरो ही दुःख व्हे'णो चावे, जतरो बाळक ने वा पशु ने। बाळक, पशु शूँ यो भाव है, के वी वणी

दुःख री चिन्तना परचात्ताप नी करे। मनुष्य ने चावे, उपाय करे, शोक नी करे। अणीज वास्ते श्री-भगवद्गीता आज्ञा करे है "कर्मणः सुकृतस्याहुः" आदि शूँ।

प्र०—उपाय करणो रजोगुण रो काम है, ने रंज शूँ दुःख व्हे'णो मान्यो है?

उ०—अणीज वास्ते व्यवहार में दुःख के' है, पर सात्विक व्यवहार में दुःख नी है। उळझ ने व्यवहार में दुःख है, अनासक्त में नी व्हे'। सत्व परमात्मा ने प्रिय है। ईं शूँ जदी जोव वींरो त्याग करे तो वो प्रभु दुःख शूँ जीव ने चेतावे, के थूँ ईं में मती जा। ज्यूँ (बेटो) कुवद करे तो माता वणी ने दंड देवे (कूटे)। ईं शूँ दुःख व्हे'ताईं झट सावधान व्हे' जाणो चावे ने ड्रज्यूँ तम प्राप्त व्हे' गा।

(४८)

जी भाव आपणा मन में पेदा व्हे' रिया है, ई होज अनेकाँ रे यूँ ही पैदा व्हे' गया ने व्हे'गा। या वात प्रत्यक्ष शूँ तवारीख काव्य आदि शूँ समझणी, वो अनादि सिद्धान्त रो कई विचार करणो।

(४९)

परमात्मा शूँ प्रकृति त्रिगुण मयी व्हे', तो ई भेद गुण में है, आत्मा में नी है। ज्यूँ हाथ पग आदि अंग में भेद है, इन्द्रियाँ में भेद है, पर जीव में नी।

प्र०—जद एक जीव है, तो पण परस्पर विरोध क्यूँ करे है? एक एक ने मारे है, एक एक रो बुरो चावे है?

उ०—विरोध गुणाँ रो है, आत्मा रो नी, एक दूसरा रो विरोध करे सो नी, पर सत्व गुण व्हे' जणी समय रजोगुण री निन्दा वो होज करे, ने रज में सत री आपणा ही कीधा विचार री निन्दा आपी ही ज कराँ। कई वी आपो न्यारा न्यारा व्हे' गया? नहीं। मनुष्य कोई वस्तु नी है, गुण ही ज है, गुणाँ रा तारतम्य शूँ असंख्य भेद व्हे' शके है। मान लो के सौ रुपया भरया सत (सत्व गुण) में एक रुपया भर्‍यो रज है (रजोगुण) ने एक पईसा भर्‍यो तम (तमोगुण) अब नन्याणु रुपया भर्‍या सत में दो रुपया भर्‍या रजने दो पईसा भरस्यो तम। ई शूँ यूँ ई रो विस्तार नरोई व्हे' शके है। छन्द शास्त्र में नियमित गणां

रो विस्तार करवा में भी आदमी ने खबर पड़ शके है। आकाश शूँ पण विशेप जी गुण वणांरी कई इयत्ता (संख्या) व्हे' शके है। अणोज शूँ माया रो पार नी है और एक शूँ दूसरो प्रथक् दीखे है। वास्तव में त्रिगुण रो ही यो संसार प्रस्तार। श्री भगवद्‌ गीता आज्ञा करे है—

> "विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसंभवान्।
> सत्वं रज स्तम श्चैव गुणाः प्रकृतिसभवाः॥"

ई शूँ ही जड़ चेतन भेद, पशु नर भेद, ब्राह्मण शूद्र भेद, युग भेद मन तन्मात्रा बुद्धि आदि अनेक भेद व्हे' ने वाँरा पण अनेक, ने वांरा पण अनेक भेद व्हे'गया है।

(५०)

त्रिदेव में भेद मत समझो, क्यूँ के सतो गुण व्हे'गा ने रजो गुण रा आगम शूँ श्रयकाई आवेगा, ने रज में तम शूँ तो वो अवश्य नरक में जायगा। क्यूँ के वो आपणो एक हीज गुण माने है, सो ही श्री भगवत् गीता आज्ञा करे है।

> "नद्वेष्टि संप्रवृत्तानि न निवृत्तानि कांक्षति।
> उदासीनवदासीनो गुणैर्यो न विचाल्यते"॥

आदि शूँ सब गुणां रा दृष्टा है, गुण दृश्य है। (गी० १४ अ० २३ श्लो०) गुणातीत कोई वृत्ति नी है, केवल आत्मा है।

(५१)

गुणां रो (प्रकृति रो) तारतम्य देखणो चावे, के श्रीपरमात्मा कृष्णचन्द्र रो ज्यो अवतार व्हियो वो पण प्रकृति ने ही अंगीकार करने व्हियो, ने मनुष्य, देव पशु पत्ती पण प्रकृति रो ही आश्रय कर रिया है। भाव, राजा बुद्धिमान पण, ने कर्षो (किसान) निर्बुद्धि पण, प्रकृति रे ही आश्रय है। परंतु वणां में कतरो अन्तर है, सो प्रत्यत्त ही है। यूँ ही श्री करुणामय जदी अवतार ने अंगीकार करे, तो परा प्रकृति री हद ने ग्रहण करे,। यूँ ही पाषाण जड़ता री। ईं शूँ श्री राधाकृष्ण में भेद नी है, वठे बुद्धि रुक जाय है। जीं भाव शूँ प्रजेश रो अवतार व्हे है।

(५२

प्रश्न—सब मनख मर जाय तो आत्मा कठे रेवे ?

उत्तर—आत्मा अयार है, जठेही रेवे। महा-प्रलय में (भी) यूँ ही रेवे। प्रकृति नित्य है, ने सब जीव तो मर जाय जदी, ने अयार, एक ही हालत है। याने मर्‌या थका (जड़) ही है।

प्र०—तो अयार ही यांरो मुरदा भेळो दाह व्हे'णो चावे?

उ०—केवल मुरदा रे मांयने तम हीज रेवे। जीवता में सत रज पण रेवे। सत्व है, सो ही जीव के' चावे है, ने सत्व में ही आत्मोपलब्धि है। ज्यूं उजाळा में वस्तु री, अंधारा में वस्तु रो अभाव नी व्हे' उजाला में भाव नी व्हे'।

प्र०—तो जन्म मरण परलोक में कुण जावे है?

उ०—अज्ञान शूँ यो लोक परलोक दोई दीखे, ज्यूँ स्वप्न। जो स्वप्न में जाय वो ही परलोक में जाय। 'परलोक स्वप्न सब ही एक जगा' है। ई शूँ ही त्रिकाल दर्शी सब देखे पर अज्ञान शूँ नी दीखे, गुरुदत्त (गुरुजी रा दीदा थका) नयन शूँ दीखे श्री गीताजी ""दिव्यं ददामि त चक्षुः—

(५३)

प्र०—व्याकरण शूँ मुक्ति किस तरे' व्हे'?

उ०—वेद रा शब्दां रा अर्थ ने समझवा शूँ

संसार, संसरे सो व्यक्ति, प्रगट व्हियो, भव, वामा, जगत, विश्व, शरीर, तनु, मर्त्य, दृष्टा, प्रभु, माया प्रकृति प्रधान, ईं शूँ संस्कृतरा व्याकरण शूँ ही मुक्ति व्हे'। मनोहर शब्द लौकिक और रूढि आदि शूँ अनेक भांत रा है, पर अर्थ ठोक विचार वा शूँ परमारथ री ही प्राप्ति व्हे'।

(५४)

एक वेरागी ने कणी कयो थांणे पुत्र मर गयो, वीं रो शोक क्यूँ नी व्हियो। वणा कही पुत्र मरयो ने शोक पैदा व्हे' गयो। एक मर्यो एक पैदा व्हे' गयो, जीं रो हर्ष पण करणा चावे। एक वृत्ति नष्ट व्ही' एक उदय व्ही' ईं में कई हर्ष शोक। अथवा बेटो ही मर्यो ने या वात पण मर जायगा। जो म्हूँ वीं ने अमर जाण तो हो, तो शोक करतो, ने अश्या ही शोक करे। म्हूँ तो पेलां ही शरीरां ने क्षण भंगुर जाणूँ हूँ।

(५५)

प्र०—कई परमेश्वर रो कोई नाम रूप है?

उ०—एक नाम ईश्वर रो नी व्हे' शके। क्यूँ के नाम दीधो जाय है।

प्र०—तो ईश्वर रो नाम कणी दीधो ?

उ०—यो ही व्हे'गा, के भक्तां तो ज्यो ज्यो भक्तियुक्त नाम सुमर्‌यो, वो ही ईश्वर रो नाम है, सब ही नाम ईश्वर रा ही है। पर अन्य भाव शूँ अन्य व्हे' जाय, ज्यूँ दीखे है। यूँ ही रूप पण। सब नाम रूप ईश्वर शूँ सिद्ध व्हे' तो वो स्वयं यां शूँ किस तरे' सिद्ध व्हे'।

"विज्ञातार केन वापि जानीयाम् ।"

श्रुति।

ई शूँ *"वासुदेवः सर्वमिति"* सिद्ध व्हियो। भक्तां ने हर समय भगवान ही याद रेवे।

"तस्याऽहं न प्रणश्यामि"।

(५६)

डेड़कारो घड़ो कीधो सो व्हियो नी। एक न्हाके दूसरो फुदक जाय, सो पूरा पांच सेर नी व्हिया। यूँ ही चंचल संसारी सुख, *वैराग्य शतक जैनी री टीका* शूँ बन्धन कणी में है, रज में। ई वास्ते शान्त रज तम सत ने चलावे, सो रज, कफ, पित्त ने चलावे सो वात (वायु)। *पित्तः पंगु कफः पंगु ॥ इति वैद्यक।* वैद्यक में केवल पिण्ड रो वर्णन

है। सांख्य में पिण्ड ब्रह्माण्ड रो "चलश्च रजः" सांख्य कारिका।

रज अंजन रो आंकड़ो, अंजन सत् विचार।
तम तमाम गाड़ी जुड़ी, देखत मुलक बहार॥

(५७)

प्र०—शास्त्र कई सिखावे ?

उ०— प्रकृति री पुस्तक रो अर्थ।

प्र०—पुस्तक तो सारां रे ही आगे धरी है।

उ०—पर वांचणो जिज्ञासु ने शास्त्र शूँ आवे। शास्त्र, सत्संग, गुरु, आत्मा, एक रा ही पर्याय (दूजा नाम) है परमारथ में।

(५८)

दोहा—*अपने को हति चहत क्यों, सपने को सामान।*
जपने को हरि नाम है, झट भव को भयमान॥१॥
घटी-घटी टेरत सकल, बड़ी बड़ी ली मान।
सुलटी समझ न होत है, उलटी बुद्ध अजान॥२॥
देह तजन में सबन के, नहिं सन्देह लगार।
आतम में भ्रम में गियों, आतम दियो विसार॥३॥
साथ तजे नहिं सर्वदा, सब को सब ही ठौर।
सो आतम तजि भ्रम चहे, तिहि दुःख होय सुघोर॥४॥

सवैया

इन्द्रिन में अघ अघ धिनेरी, जहां दुरगंध बसे बहुतेरी।
मोखि मई सह दोपि लगे जिहि (ब्रण) रक्त रु मूत्र बहे जहं फ़ेरी॥
ये हि विचारि दियो पट ढांकि सुराखि मनो मल ऊपर गेरी।
सोंघत सो खल शूकर ज्यों पर कूकर की करनी यह तेरी॥

कवित्त

भेद को मिटावे के दुखावे जीव दुनियां के,
'अहं शिव' बोलि वे में होत नहिं पाछे हैं।
जग को रिझावन को दुष्टता छिपावन को,
प्रभुता बढावन को शास्त्र सब बांचे हैं॥
भूरि भ्रम वासना के वास कोटि त्रासना के,
करम उपासना के कहे मत काचे हैं।
लोक द्रोह वेद कनि कानी उर आनी नेक,
ऐसे भ्रम भ्रानी ते अज्ञानी बो'त आछे हैं॥
सारं अहंकार को विकार उर छार कियो,
सार निरधार आप ही में आप राचे हैं।
त्यागि परवाद स्वाद शान्ति को प्रसाद पाय,
जग के प्रमाद परवाद परे आछे हैं॥

माया का मिटाया मूल काया अपनाया नहीं,
दाया करे सब में न दाया करे पाछे हैं।

वासना नसानी धन्य मोक्ष रजधानी मिली,
मेरी मति मानी ब्रह्म ज्ञानी वह साचे हैं॥

दोहा—*छोर जात शुभ ज्ञान सब, मोर तोर बढ़ि जात।*
समय अमोल बिहात पुनि, नहीं हाथ कछु आत॥
बातन में कछु हाथ न आवे।

प्र०—कहा भयो व्हे' का रह्यो, व्हे' है कहा विचार ?

उ०—*"आधे दोहा माहिं है, सकल शास्त्र को सार।"*

दोहा—*व्यञ्जन सो सारो जगत, स्वर सो ईश्वर जान।*
वा बिन वह नहिं रहि सके, वा बिन वाहि न हान॥

(५९)

प्र०—आपणो कर्तव्य कई है ?

उ०—जींरो पश्चात्ताप कधी नी व्हेवे सो ही आपणो कर्तव्य है। घणी मांदगी शूँ पीडित व्हेवा पे पण ज्यो काम आपाँ ने आछो लागे, जीं शूँ मांदगी भूलणी आय जाय, वो ही हरि स्मरण

आपणो कर्तव्य कार्य है। भाव, और सब काम शूँ जिज्ञासू ने मरती समय घृणा व्हे' पर हरि स्मरण शूँ नी।

(६०)

श्री परम हंस देव रामकृष्णजी रा उपदेशां रा एक बंगाली वणां शूँ समझने अर्थ कीधा है। वणी पुस्तक में लिख्यो है, के संसार में यावत् पदार्थ यौगिक (मिलावटरा) है। या वात साइन्स शूँ पण सावितव्ही' है। हाइड्रोजन ओक्सिजन दो पदार्थां तक वीं साइन्स वाळा हाल तक निर्णय कर चुक्या है। पर ई दोई पदार्थ पण यौगिक है। या वात आपणां शास्त्रां में, ने योगियां रा अनुभव में सिद्ध है, तो ज्या यौगिक नी वो ही सत्य है, और कल्पना, ज्यूँ वस्त्र सत्य नी है, पर कपास ने पृथ्वी (सत्य है) यूँ ही चित सत्ता शूँ सब हैं, तो सत् चित् आनन्द ही सत्य है, और सब कल्पना है। या वात वीं में खूब समझाई है "कल्पना माया है।

माई, उठती मन की मौज जहा है वह क्या है घट अन्दर।

बलवन्तराव ग्वालियर।

(६१)

पद (श्री कबीरजी का)

मुरसिद नैनों बीच नबी है ।
श्याह सफेद तिलों बिच तारा ॥
अविगति अलख रची है । (टेक)
आंखी मद्धे पांखी चमके, पांखी मद्धे द्वारा ।
तेहि द्वारे दुर्बिन लगावे, उतरे भव जल पारा ॥
सुन्न शहर में वास हमारा, तहँ सरबंगी जावे ।
साहब कबीर सदा के संगी, शब्द महल ले आवे ॥
चली मैं खोज में पियकी, मिटी नहिं सोच यह जियकी ।
रहे नित पास ही मेरे, न पाऊँ यार को हेरे ॥
विकल चहुं ओर को धाऊँ, तबहुं नहिं कन्त को पाऊँ ।
धरूँ केहि भाँति सों धीरा, गया गिर हाथ से हीरा ॥
कटी जब नैन की झांई, लख्यो तब गगन में सांई ।
कबीरा शब्द कहि भाषा, नैन में यार को वासा ॥१॥
पढ़ो मन ओं नमो सिधंग (ओं नमो सिद्धम्)
ओंकार सबे कोई सिरजे, शब्द सरूपी अङ्ग ।
निरंकार निर्गुण अविनाशी, कर वाही को संग ॥
नाम निरञ्जन नैनन मद्धे, नाना रूप धरन्त ।
निरंकार निर्गुण अविनासी, निरखे एके अङ्ग ॥
माया मोह मगन होइ नाचे, उपजे अङ्ग तरङ्ग ।
माटी के तन थिर न रहत है, मोह ममत के सङ्ग ॥

सील संतोष हृदय बिच दाया, शब्द सरूपी अङ्ग ।
साधु के वचन सत्त कर मानो, सिरजन हारो संग ॥
ध्यान धीरज ज्ञान निर्मल, नाम तत्त गहन्त ।
कहे कबीर सुनो भाई साधो, आदि अन्त परयन्त ॥२॥

(६२)

मेरी नजर में मोती आया है ॥ (टेक)
कोइ कहे हल्का कोइ कहे भारी, दोनों भूल भुलाया है ।
ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, थाके तीनहुं खोज न पाया है ॥
शङ्कर शेष औ शारद हारे, पढ़ रट गुण बहु गाया है ।
है तिलके तिलके तिल भीतर, विरले साधू पाया है ॥
दोदल कमल त्रिकुट बिच साजे (अ.उ.म.) ओंकार दरसाया है ।
ररंकार पद सेत सुन्न मध, षट दल कमल बताया है ॥
पार ब्रह्म महा सुन्न मझारा, सोनी अच्छर रहाया है ।
भंवर गुफा में सोऽहं राजे, मुरली अधिक बजाया है ॥
सत्यलोक सतपुरुष विराजे, अलख अगम दोउ भाया है ।
पुरुष अनामी सब पर स्वामी, ब्रह्मण्ड पार जो गाया है ॥
ये सब बातें देही माहीं, प्रतिबिम्ब अण्ड जा पाया है ।
प्रतिबिम्ब पिण्ड ब्रह्मण्ड है नकली, असली पार बताया है ।
कहे कबीर सतलोक सार है, यह पुरुष नियारा पाया है॥३ ॥

(६३)

"गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पंण्डिताः"

श्रीगीताजी

विद्वान, कुल शरीर आपणा ही माने है, आत्म साक्षी चैतन्य है सो मरया थका जी शरीर आपणा है, ने जीवताजी आपणा है, यूँ ही सुखी दुखी दोदां रो शोच नी करे।

यस्यनाहं कृतो भावो। श्रीगीताजी

(अहङ्कारेण कृतः भावः अयमस्मि इति।)

अहङ्कार सूँ ज्यो भाव व्हे' वीं,रो नाम अहंकृत भाव है। तात्पर्य-अहङ्कार भले ही व्हे वे पर अहं कृत भाव नी व्हे'णो चावे, के अस्यो हीज म्हूँ हूँ। म्हूँ ही ज हूँ। ईंरो वर्णन पे'ली व्हे' चुक्यो है। अहङ्कार तो एक तत्व है, जो चौवीस तत्वाँ में है, पर अहंकृत भाव बन्धन है।

(६४)

प्रार्थना

दोहा—यद्यपि याके योग में, हौ नाहिं तीनिहु काल।
सहज अवस्था सहज में, दीजे सहज दयाल॥

आज्ञा

दोहा—सहजावस्था सहज में, यों मिलने को मूल ।
निरालम्ब मनको करो, तज सॅकल्प को तूल ॥

(६५)

सांख्य विचार—

परमात्मा सच्चिदानन्द है । वीं में चित्त ही प्रकृति है। वींमें स्थित व्हेवा शूँ सत् आनन्द प्राप्त व्हेवे है। चित्त शूँ ज्यो शून्य चैतन्यवत् कोई विलक्षण भान व्हेवे, वा माया है। वीं में अव्यक्त रूप शूँ सब कुछ है, पर क्रम शूँ त्रिगुण ही प्रकट व्हे' है, ने वी महत्तत्व वा बुद्धि रा नाम शूँ समझणा चावे। वीं अव्यक्त में या भावना व्ही' के "शुद्ध तत्व हूँ" तो वो अव्यक्त यूँ रो यूँ ही रह्यो, ने सतोगुण व्हे' गयो, ने वीं शूँ मन व्हे' गयो, ने सब यूँ ही व्हे' ने पञ्चतन्मात्रा व्ही' ने रजोगुण व्हियो ने पञ्च भूत व्हिया, सो तमोगुण व्हियो, ने पूर्वोक्त अव्यक्त आदि यूँ ही रे'ता गया। जद भूताँरी याद व्ही' तो पण अव्यक्त आदि शूँ तोम मय व्हे' गयो। यूँही उन्नत अवस्था ने अधो अवस्था विचार

ही ज में है। विचार मूल पदार्थाकार व्हियो सो तम, इंद्रियाकार रज, सहजाकार सत्व, ने ई शूँ आगे समप्रकृति ने पछे ज्यो भान, सो आत्मानुभव तन्मात्रा में, मन में रज, ने मनमें मन सत्व?

(६६)

'चश्मां पे दुरबीण धरले, खुलगयो दशमां द्वार'
द्वार माँय एक मूरत दरशे, (ज्याने) सूझे अलख अगम अपार॥
ज्याँरा देखण दीदार

मोती कह्यो

(६७)

एक राजा नखे कोई बुद्धिमान आदमी वाताँ कियाँ कर तो हो। राजा रा हूँ कारा देवा में वीं ने खबर पड़ती, के अशी अशी वाताँ अणी (राजा) ने पसन्द है। वाणी ही माफिक ज्यादा के'तो हो। अब वीं री वातां शुणणो राजा अनेक तरे' शूँ बन्द कर शके है, और शुणती समय पण नव रस री कथा शूँ अनेक प्रकार रो भाव राजा रा मन में व्हे' तो जाय है। कणी वगत वीरता वा कणी वगत शोक आदि। परन्तु रज भाव वणी में वण्यो ही रेवे है। साधू री कथा

शुणताँ शुणताँ राजा वीं में ही तन्मय व्हे' रियो है, तो पण वीं ने पूछो के थूँ कुण है ? तो तुरन्त केवेगा के राजा, कङ्गाल री कथा में पण पूछवा शूँ यो ही उत्तर मिलेगा के राजा, पर राजा पणो रे'ताँ भी वीं ने नरी तरे' रा अनुभव व्हे' ता जाय है। पर देखवा वाळा ने यूँ नी समझणो चावे, के यो कंगाळ री वाताँ करे, सो कंगाळ है। कंई स्त्री रो चिन्तवन कर तो मनुष्य स्त्री व्हे' गयो ?

अर्थ—राजा; आत्म; बुद्धिमान; प्रकृति अनेक तरे' री वाताँ गुणाँ रा कारण शूँ अनेक विचार, शुणणो, आसक्त व्हे'णो; वात के'ताँ रोकणो, अनासक्त व्हे'णो; वात के'ताँ रोकवारी विधि ही शास्त्र है, योग शूँ राजा केवे वात मत के', शुणो जाणी थकी है; सांख्य झूठी है, ज्ञान, आछी नी लागी वैराग्य; समुच्चय तमाशा री, इन्द्रजाळी री भांती यूँ हा सब मत जाणणा । या वात ही भक्ति री है। भाववो चावे तो सौ तरे' शूँ रोक दे' ने चावे तो सौ तरे' शूँ वाताँ कराय काढ़े ।

जो चेतन कंह जड़ करे जड़ हिं करे चैतन्य ।

श्री गोस्वामीजी महाराज

स्त्री रो चिन्तवन-प्रकृति रो विचार, ईं शूँ पुरुष व्हे' जाय, पुरुष रा चिन्तवन शूं स्त्री व्हे' जाय। पर आनन्द दोयाँ रे मिलवा में आवे। भावः ऐक्य ज्ञान शूँ आवे। चिन्तवन मिलवा पे छूट जाय ने सुख ही सुख रे' जाय। अन्वय व्यतिरेक❀ भी ईं रो ही नाम है। वात के' वा रो मतलब यो, के मन में सारी वाताँ ही ज के' वाँ हाँ।

(६८)

एक सेर घृत लावो, यूँ के'वा शूँ कतरो घृत लावणो। क्यूँ के कठेक तो १०८ भर्‌यो, कठे ८० भर्‌यो, ने कठे ४० भर्‌यो सेर व्हेवे है, तो सेर कुछ चीज नी व्हियो, आपणी कल्पना है। यूँ ही सब ही कल्पना है। विचार देखो, विचार री दृढ़ता ही संसार है। यूँ ही संख्या पदार्थ आदि विचार (६१) में।

❀ नोट—जणी चीज रे रे' तां थकां जो रेवे, वो अन्वय वाजे है। अर्थात् अग्निरे रे'तां थकां धुँवो है यो अन्वय है, ने जणी रे नी रेवा पर जो नी रेवे, व्यतिरेक वाजे है। अर्थात् अग्नि नी तो धुँवों पण नी, यो व्यतित्‌रेक है।

(६९)

अनेक लेखाँ शूँ वा ठीक विचार शूँ या वात विचार में आ गई, के ज्यो है, बुद्धि रो निश्चय है, तो यूँ विचारणो चावे, के अबार बुद्धि यो निश्चय कीधो। अबे यो अणी शूँ अहङ्कार छूट साक्षित्व प्राप्त व्हे' जायगा। अबार बुद्धि दुःख रो निश्चय कीधो। अबे सुख रो, रज, सत, तम, म्हूँ, यो पण निश्चय है। ईं ने अस्यों जाणे सो ही वो ही है।

(७०)

गीता में, विभूति री जो आज्ञा व्ही' वीं मांयनूं वा वस्तु निकाळवा पे वा कुछ भी नी रे'वे ज्यूँ "रसोऽहमप्सु" (भगवान आज्ञा करे है, पाणी में म्हूँ स्वाद रूप हूँ) तो पाणी में शूँ रस काढ़ लेवा पे वणी रो जलत्व (जलपणो) ही नष्ट व्हे' जायगा, ने पाणी री स्मृति वा देखवा में रस ही ज दिखे है, ने रस ज्यो स्वयं हरि है, तो यूँ जणी में ज्यो आपाँ विचाराँ हाँ वो एक ही भगवान् है (मतलब) ज्यो आपाँ ने ध्यान वन्धे वो श्री कृष्ण है, ने न्यारो दीखे सो ही

योगमाया है। वणी रा हीज ईश्वर है, जीं शूँ योगेश्वर भगवान् है। भाव ही भव है, भाव जणी शूँ दीखे वो ही परमात्मा है, सत्य और मिथ्या कुल हा भाव है।

(७१)

विज्ञातारं केन वा विजानीयात् ।
(जाणवा वाळा ने म्हूँ कीं तरे' जाणूं ॥)

श्रुति ।

विज्ञाता तो सब में ही एक है, वो म्हूँ हूँ यूँ के'वारी जरूरत नी। क्यूँ के म्हूँ विज्ञाता हूँ, तो म्हने कुण जाणे, म्हने तो म्हूँ ही ज जाणूँ, ने म्हूँ एक ही ज विज्ञाता हूँ, तो भेद करयो, म्हूँ विज्ञाता हूँ, म्हारे शूँ सब जाण्यो जाय है, पर म्हूँ कणी शूँ ही नी जाण्यो। जाऊँ हूँ, यो श्रुति रो निश्चय है। भावः म्हूँ द्रष्टा हूँ, यो निश्चय व्हे' वा पे सब बंधन मिट जाय है।

(७२)

उनाळा रा दिन बड़ा व्हे' सो मनुष्याँ ने शुँवावे नी सो केवे दिन निकाळवा री कोई

युक्ति विचारो जदी कोई शतरंज गंजफो आदि अनेक युक्तियाँ शूँ दिन निकाळे। जदी यूँ क्यूँ नी केवे, के 'मौत झट आवे, अस्यो उपाय विचारणो" वणाँ ने मोत छेटी दीखे है, सो झट आवा री युक्ति विचारणो, या वीं मोत रो वी कोई विशेष शरीर समझे है। यूँ नी जाणे, दिन निकळणो ही ज मोत आवणो है। पर वी तो चार महिना रा दिन में ही तृप्त व्हे' गया, ने केवा लाग गया, के दिन बड़ो व्हे' है। आप निश्चिन्त रेवे के मोत कस्या वेग शूँ आप रे छाती पे अकस्मात् लात री देवे, के वणी समय आपाँ ने उनाळा रा दिन कई ऊमर रा कुल दिन हजार वर्ष व्हे'गा, तो पण बिलकुल एक घड़ी जस्या पण नी दीखेगा और उपाय तो कुल मोत बुला· वारा हीज है। केवल हरि स्मरण मोत टाळ वारो है, सो तो आपाँ शूँ सदा ही छेटी है।

(७३)

पे' ली संसार री और मन री एकता करणी। यूं विचारणो, संसार है सो मन ही है। ज्यूँ स्वप्न जगत मन ही है। पछे मन री, आत्मा री

एकता करणी, स्वप्न है, सो आत्मा ही है । यूँ सर्वात्म (सब आत्मा) है। वा यूँ विचारणो, म्हूँ (अहं) कई चीज है, तो या निश्चय व्ही' "मन" है, तो जदी अहङ्कार रो काम व्हे'वे; तो शरीर रो नी मानणो, मन रो मानणो, "म्हूँ" या मन में आवे, तो निश्चय करणो "म्हूँ मन"। क्यूँ के शरीर ने तो "म्हूँ" री शक्ति नी है। म्हूँ तो मन ही ज है, तो "म्हूँ" कुण, "मन", ई शूँ आत्म ज्ञान व्हे' जाय। क्यूँके मन नखे ही आत्मा रो भान व्हे' जाय है। मन री ने संसार री एकता रो मुख्य यो ही विचार है, के जो विचार व्हेवे, कुल मन में व्हेवे।

प्र०—तो बारणे संसार में कई नी व्हेवे ?

उ०—हाँ बारणे व्हेवे सोकुल मन ही में व्हेवे ।

प्र०—तो बारणे एक आदमी री कोई चीज खोस लेवे, अथवा नवी दे देवे, तो वणी रे कई गई आई नी ?

उ०—हाँ मन ही ज में गई, ने मन हीज में आई ।

प्र०— तो बारणे पर्वतादि दीखे सो कई है ?

उ०—ई मन ही ज है; ने बारणे है यो पण मन ही ज में है । ज्यूँ दो कबूतर आकाश में एक

ऊँचो और एक नीचो उड़ रिया व्हेवे तो दोई आकाश में ही ज है। यूँ ही थारणे माँयने ई दोई वाताँ मन ही ज में है।

प्र०—तो म्हाँने थारणे क्यूँ दीखे ?

उ०—थाँने और म्हाँने थारणे नी दीखे कुल (सर्व) ने मन ही ज में दीखे है। थारणे नी दीखे और थाँ, ने म्हाँ, कुल मन में ही ज है। ज्यूँ स्वप्न में म्हूँ पण मन, थूँ पण मन, सब ही मन, 'थारणे है" यो बन्द, "मन में है" यो मोच् तो स्वतः हीज झूठो है।

(७४)

प्र०—आत्मा रो कई नाम है ?

अहं मैं, थाई, इत्यादि अणाँ शब्दाँ रो अर्थ आत्मा पे ही ज पड़े है, पर भूल शूँ शरीर पे मान लीधो। यूँ एक नाम दूसरा रो जाण हेलो पाड़े, ऊदा ने कालयो जाण, कालया रा नाम शूँ हेलो पाड़ ने हँसी व्हे' यूँ ही शरीर ने अहं के' वा में काम नी चाले, पर उलटी वात है, यो अहं नाम, आत्मा रो स्वयं है।

(७५)

असत्य में सत्य आत्मा शूँ है, "या वात असत्य है" असी जो सत्य (निश्चय) प्रतीति व्हे' सो आत्मा (सत्य) शूँ है। ईं शूँ असत्य कुछ नी है, सत्य ही है, सत्य हर समय है, असत्य कणी भी समय नी है, चावे ज्ञान व्हो' चावे अज्ञान, पर है, सत्य ही। असत्य सत्य शूँ नी व्हे'

(७६)

यो जाग्रत है, ने यो स्वप्न है, या वात निश्चय मनखाँ रा केवा शूँ ही व्हीं' तो मनख जदी निश्चय व्हे' जाय, के जाग्रत रा है, वा स्वप्न रा. तो पछे. स्वप्न जाग्रत रो पण निश्चय व्हेवे, ने यूँ व्हेवा शूँ अन्योन्याश्रय दोष व्हेवे गा, ईं शूँ दोई समान है। म्हाँ रा मन शूँ यो निर्णय करयो तो "हाँ" स्वप्न रा के जाग्रत रा। यूँ पण यो ही अन्योन्याश्रय आवेगा। स्वप्न री ने जाग्रत री निश्चय किस तरे' व्हो'? मनखाँ रा केवा शूँ, मनखाँ री मन शूँ, मन री आप शूँ, आप री (भ्रम) अविद्या शूँ, अविद्या री आत्मा शूँ, तो आत्मा ही मुख्य सत्य रियो ।

ऊँचो और एक नीचो उड़ रिया व्हेवे तो दोई आकाश में ही ज है। यूँ ही वारणे माँयने ई दोई वाताँ मन ही ज में है।

प्र०—तो म्हाँने वारणे क्यूँ दीखे ?

उ०—थाँने और म्हाँने वारणे नी दीखे कुल (सर्व) ने मन ही ज में दीखे है। वारणे नी दीखे और थाँ, ने म्हाँ, कुल मन में ही ज है। ज्यूँ स्वप्न में म्हूँ पण मन, थूँ पण मन, सब ही मन, 'वारणे है" यो बन्द, "मन में है" यो मोक्ष तो स्वतः ही ज भूठो है।

(७४)

प्र०—आत्मा रो कई नाम है ?

अहं में, थाई, इत्यादि अणाँ शब्दाँ रो अर्थ आत्मा पे ही ज पड़े है, पर भूल यूँ शरीर पे मान लीधो। यूँ एक नाम दूसरा रो जाण हेलो पाड़े, ऊधा ने कालयो जाण, कालया रा नाम यूँ हेलो पाड़ ने हँसी व्हे' यूँ ही शरीर ने अहं के' वा में काम नी चाले, पर उलटी वात है, यो अहं नाम, आत्मा रो स्वयं है।

(७५)

असत्य में सत्य आत्मा शूँ है, "या वात असत्य है" अशी जो सत्य (निश्चय) प्रतीति व्हे' सो आत्मा (सत्य) शूँ है। ईं शूँ असत्य कुछ नी है, सत्य ही है, सत्य हर समय है, असत्य कणी भी समय नी है, चावे ज्ञान व्हो' चावे अज्ञान, पर है, सत्य ही। असत्य सत्य शूँ नी व्हे'

(७६)

यो जाग्रत है, ने यो स्वप्न है, या वात निश्चय मनखाँ रा केवा शूँ ही व्हीं' तो मनख जदी निश्चय व्हे' जाय, के जाग्रत रा है, वा स्वप्न रा, तो पछे स्वप्न जाग्रत रो पण निश्चय व्हेवे, ने यूँ व्हेवा शूँ अन्योन्याश्रय दोष व्हेवे गा, ईं शूँ दोई समान है। म्हाँ रा मन शूँ यो निर्णय कर्यो तो "हाँ" स्वप्न रा के जाग्रत रा। यूँ पण यो ही अन्योन्याश्रय आवेगा। स्वप्न री ने जाग्रत री निश्चय किस तरे' व्हो'? मनखाँ रा केवा शूँ, मनखाँ री मन शूँ, मन री आप शूँ, आप री (भ्रम) अविद्या शूँ, अविद्या री आत्मा शूँ, तो आत्मा ही मुख्य सत्य रियो ।

(७७)

संसार री चञ्चलता किस तरे' दीखे। जो जी भाव आपाणाँ मन में व्हिया वणा ने याद करो।

(७८)

जी जी मनख आपाँ री जाण रा मर गया वाँ रो नाम एक पाना पे लिख राखो, ने मन ज्यादा विकार करे जदी वाँच लो'।

(७९)

शिव पुराण सनत्कुमार संहिता चत्वारिं शोध्यायः।

श्रीसनत्कुमार उवाच

नाडी सूक्ष्मेण मार्गेण ऊर्ध्वं यात्युत्तरायणम् ।
उभौ मार्गौ तु विज्ञेयौ देह संवत्सर स्मृतम् ॥
सर्वनाडी· परित्यज्य ब्रह्मनाडीं समाश्रयेत् ।
जीवमध्ये स्थिता सूक्ष्मा विधूमा पावकं शिखा ॥
मध्ये तस्याग्निसकाशो जीव प्रोतो न दृश्यते ।
छायैषा दृश्यते या तु चक्षुर्विषयसंगता ॥
कनीन्यतः स्थिति र्व्यास हेतुः सर्व शारीरिणाम् ।
अनास्ते सत्तरो ज्ञात्वा सूक्ष्मो मध्यगतो न यः ॥
नेत्रे पश्यति यज्ज्योतिः तारा रूप प्रकाशकम् ।
स जीवः सर्वभूतेषु आत्मा न च समास्थितः ॥

ज्योतिषऽचक्षुषः सूक्ष्म तत्वं तत् परमं स्मृतम् ।
तच्चामृतसमाख्यातं ज्ञान लभ्यन्तदुच्यते ॥
तस्मात् परतरं नास्ति योग विज्ञानदा गतिः ।
ज्ञात्वैवं संत्यजेन्मोहं गुणत्रय विकारजम् ॥
इति तत्वं समाख्यात व्यास माहेश्वरन्तव
तद्ब्रह्मपरि पूर्णत्वं नामरूपश्च नास्ति ते ॥
योगिनो यं न जानन्ति यत्सूक्ष्म परमोत्तमम्
सर्वत्र विद्यते सोथ न च सर्वपु दृश्यते।
स दृश्यते च भगवान् नतु प्रायः कथञ्चन
ज्ञानेन ये प्रपश्यन्ति योगिन स्ते परामता।

श्री व्यास उवाच

निष्फल सकलं ज्ञात्वा सद्य एव प्रकाशते ।
त्वत्प्रसादादहं तात प्राप्तज्ञानो गताशुभः,
निस्सन्देहोऽभव स्वान्तः प्रष्टव्यं नान्यदस्ति मे ॥
ईश्वरध्यान सम्प्राप्तमुपायं योगलक्षणम् ।
कथयस्व मुनिश्रेष्ठ प्रष्टव्यं नान्य दस्ति मे ॥

श्रीसनत्कुमार उवाच

तत्रात्मा सूक्ष्म संलक्ष्यः प्रागुक्तास्तिष्ठति द्विज ।
तत्तेज सर्व नास्ति नाडीषु विभक्तं सर्व देहिनाम् ॥

तत्तेजः चक्षुराहृत्य सर्व नाड़ी समाश्रितम् ।
मन एकमतं कृत्वा तथात्मा विनियोजयेत् ॥

भावार्थ—नाडो सूक्ष्ममार्ग शूँ ऊपर चढे है। वाणी रा दो मार्ग है—एक उत्तरायण, दूसरो दक्षिणायन। सब नाडियों ने छोड़ केवल ब्रह्मनाडी रो आश्रय लेणो चावे। वणी में अग्निरे समान प्रकाशमान जीव विराजमान है। नेत्र में कनीनिका देखे है, वो भी जीव हीज है। वणी ने अमृत भी के' है। ज्ञान रे विना वो प्राप्त नी व्हे' सके है। वणी ने जाण ने तीन गुण शूँ उत्पन्न मोह ने छोड़ देवे। यो ब्रह्म है, ने सर्वत्र विद्यमान है। व्यासजी महाराज क्यो—अब म्हारो संशय दूर व्हे'गयो। इत्यादि ❀

(८०)

श्री गीता जी रो योग—

एक शूँ एक रो योग व्हे' ने यो संसार दीखे है। यो ही ज गीता जी रो योग है। या ही ज योग माया है। ईं रा ही ईश्वर योगेश्वर केवाय है "*ब्रह्मण्याधाय कर्माणि*" रो अर्थ ब्रह्म में अणा

❀ शिवपुराण री सनत्कुमार संहिता में चालीसमो अध्याय देख्यो, परन्तु दो एक श्लोक रे सिवाय पूरो पाठ नी मिल्यो। कणी में शूँ लीधो है, पतो नी लागो। म्हारी बुद्धि शूँ होज शुद्ध कीधो है। परन्तु चित्त ने सो संतोष नी है। अस्तु—जश्यो कीधो यो है। संपादक

कर्मां ने राखे, अर्थात् समझे। ज्यूँ स्वप्न रा कर्म स्वप्न दृष्टा में समझवा शूँ वणाँ स्वप्न रा कर्मां रो प्रभाव आपणे ऊपर नी पड़े, यूँ ही जाग्रत सुषुप्ति रा पण कर्म ब्रह्म में जाणणा। ईं शूँ पाप में लिप्त नी व्हेवे, यो हीज परमात्मा रो योग है, के ब्रह्म ही में अनेक दीखे है, ज्यूँ स्वप्न शूँ मन वा जीव में।

(८१)

योग, ज्यूँ विनोळा (कपास्या) में रुई, रुई में तन्तु, तन्तु रो पट, पट रो कुडतो,कुडतारी बाँयां वगेरा, ज्यूँ सुवर्ण में कङ्कण कुण्डलादि, ईं रो ही नाम योग, ने याँ ने अलग समझणा। ज्यूँ सोना शूँ कड़ा, ने न्यारो समझणो ईं रो ही अर्थ माया, ने वारंवार यो विचारणो, यो सोनो है, यो ही योगाभ्यास है। ब्रह्म में अर्पण करणा कर्मां ने, सो ही 'ब्रह्मण्याधाय कर्माणि' केह्यो। ज्यूँ स्वप्नाँ में कर्मां ने, स्वप्न दृष्टा आत्मा में अर्पण करणा, के स्वप्न आत्मा शूँ दीखे है, "संगं त्यक्त्वा करोति यः" संग छोड़ने ज्यो करे अर्थात् आसक्ति छोड़ देवे। ज्यूँ स्वप्न रा मनुष्य सब ही कल्पित समान व्हेया पे भी एक शरीर ने आपणो मानणो, यो ई संग

तत्तेजः चतुराहृत्य सर्वं नाड़ी समाश्रितम् ।
मन एकमतं कृत्वा तथात्मा विनियोजयेत् ॥

भावार्थ—नाडो सूक्ष्ममार्ग शूँ ऊपर छठे है। वाणी रा दो मार्ग है—एक उत्तरायण, दूसरो दक्षिणायन। सब नाडियों ने छोड़ केवल ब्रह्मनाडी रो आश्रय लेणो चावे। वणी में अग्निरे समान प्रकाशमान जीव विराजमान है। नेत्र में कनीनिका देखे है, वो भी जीव हीज है। वणी ने अमृत भी के' है। ज्ञान रे बिना वो प्राप्त नी व्हे' सके है। वणी ने जाण ने तीन गुण शूँ उत्पन्न मोह ने छोड़ देवे। यो ब्रह्म है, ने सर्वत्र विद्यमान है। व्यासजी महाराज क्यो—अब म्हारो संशय दूर व्हे'गयो। इत्यादि *

(८०)

श्री गीता जी रो योग—

एक शूँ एक रो योग व्हे' ने यो संसार दीखे है। यो ही ज गीता जी रो योग है। या ही ज योग माया है। ईं रा ही ईश्वर योगेश्वर केवाय है *"ब्रह्मण्याधाय कर्माणि"* रो अर्थ ब्रह्म में अर्पणा

---

* शिवपुराण री सनत्कुमार संहिता में चालीसमो अध्याय देख्यो, परन्तु दो एक श्लोक रे सिवाय पूरो पाठ नी मिल्यो। कणी में शूँ लीधो है, पतो नी लागो। म्हारी बुद्धि शूँ होज शुद्ध कीधो है। परन्तु चित्त ने तो संतोष नी है। अस्तु—जदयो कीधो यो है। संपादक

कर्मां ने राखे, अर्थात् समझे। ज्यूँ स्वप्न रा कर्म स्वप्न दृष्टा में समझवा शूँ वणाँ स्वप्न रा कर्मां रो प्रभाव आपणे ऊपर नी पड़े, यूँ ही जाग्रत सुषुप्ति रा पण कर्म ब्रह्म में जाणणा। ईं शूँ पाप में लिप्त नी व्हेवे, यो हीज परमात्मा रो योग है, के ब्रह्म ही में अनेक दीखे है, ज्यूँ स्वप्न शूँ मन वा जीव में।

(८१)

योग, ज्यूँ विनोळा (कपास्या) में रुई, रुई में तन्तु, तन्तु रो पट, पट रो कुडतो, कुडतारी बाँयां वगेरा, ज्यूँ सुवर्ण में कङ्कण कुण्डलादि, ईं रो ही नाम योग, ने याँ ने अलग समझणा। ज्यूँ सोना शूँ कड़ा, ने न्यारो समझणो ईं रो ही अर्थ माया, ने वारंवार यो विचारणो, यो सोनो है, यो ही योगाभ्यास है। ब्रह्म में अर्पण करणा कर्मां ने, सो ही *'ब्रह्मण्याधाय कर्माणि'* व्हियो। ज्यूँ स्वप्नाँ में कर्मां ने, स्वप्न दृष्टा आत्मा में अर्पण करणा, के स्वप्न आत्मा शूँ दीखे है, *"संगं त्यक्त्वा करोति यः"* संग छोड़ने ज्यो करे अर्थात् आसक्ति छोड़ देवे। ज्यूँ स्वप्न रा मनुष्य सब ही कल्पित समान व्हेवा पे भी एक शरीर ने आपणो मानणो, यो ईं संग

व्हियो, यो संग त्याग पण सव ने समान स्वप्न रा समभणा, वो ज्यूँ स्वप्न द्रष्टा पुरुप नी लिंपावे है, यूँ ही जागृतादि द्रष्टा पुरुप नी लिंपावे है। भाव-स्वप्न द्रष्टारे स्वप्न शूँ कुछ सम्बन्ध नी, यूँ ही सर्वत्र।

(८२)

विषयान्मति भो पुत्र सर्वानेव हि सर्वथा।
अनास्था परमा ह्येषा सा मुक्ति मर्नसो जये॥
विम पृथ्व्यादि चित्तस्थं न वाहिःस्थं कदाचन।
स्वप्नभ्रमं पदार्थेषु नीचैरेवानुभूयते॥
कदा शम मपेष्यन्ति ममान्तभोंगसंविदः।
इदं कृत्वेदमप्यन्यत्कर्तव्यामितिचश्चला॥

(८३)

संख्या एक शूँ ही व्हेवे है। यूँ ही एक ब्रह्म शूँ असंख्य पदार्थ व्हे' रिया है। वणी एक री सत्ता विना एक भी नी रेवे और एकत्व सब ही संख्या में व्याप्त है। ज्यूँ एक सौ अथवा सौ रुपया न्यारा न्यारा विचार शूँ देखवा में पण एक एक ही दीखे,ने गणवा में पण एक एक ही गणे, दश २ गणे तो पण एक दशक करने गणे, यूँ ही ब्रह्म सर्व व्यापक है।

भ्रम शूँ अनेक दीखवा पर भी है एक ही । यूँ ही एक ने फेर एक के'चारो नाम दो पटक्यो, सो ही ब्रह्म रो स्पन्द, (१) प्रकृति ने (२) पुरुष दो नाम पटक्या । यूँ ही योग व्हेवा शूँ अनेकता दीखे, ईं रो ही नाम योग माया है ।

(८४)

साधन करवा री सब के'वे, ने शुणवा री के'वे, सो भी शुणवा में करवा री लिखी है, सो करणो ही विशेष मुख्य है ।

(८५)

ईश्वर रा नाम ने नी भूलणो । हर समय और काम शूँ भूलणी आय जाय, तो यूँ विचारणो, के जदी आपणो नुकशाण कईं नी व्हेवे, तो नाम क्यूँ भूलणो, ने ई तो बन्धन है । पर करता जाणो, ने ईश्वर री याद राखणी, यो ही मुख्य साधन शिरोमणि है । नीचली मच्छी बड़ी व्हेवे ने ऊपरली ने खाय जाय, यूँ ही अन्तर रो नाम ब्रह्म संकल्प ने नाश कर देवेगा ।

(८६)

आप मत भूलो–

हरे'क वगत व्यवहार में पण मनख झूठा आपा

ने भूलवा शूँ पण जदी हास्य रो पात्र व्हेवे है, ज्यूँ राजा ग़रीब रा कार्य शूँ, ने ग़रीब राजा रा काम शूँ; अथवा नशा में तो आपो भूलणो ही बुरो है। जदी साँचो आपो भूलवा शूँ कतरी विडम्बना व्हे, णी चावे। परन्तु साँचो आपो भूले कुण, भूठो अहं भूले। जदी पण साँचो तो यूँ रे'वे, ने भूलणो ने याद रे'णो तो वणी रे मूँढ़ा आगलो है। ईं शूँ हर समय आत्मा एक रस है। वणी री ज सत्ता शूँ भूलणो याद व्हेणो है। ज्यूँ (बुद्धिर्ज्ञानमसम्मोहः) में आत्मा एक रस पृथक् बताया है गीताजी में।

(८७)

प्रिय वस्तु री प्राप्ति में हर्ष व्हेवे है, ने एक शूँ एक विशेष प्रिय है, ने सब ही आत्मा रे वास्ते प्रिय है, ने सब शूँ आत्मा विशेष प्रिय है, तो आत्मा री प्राप्ति में कतरो आनन्द व्हे'णो चावे, ।

(८८)

मकोड़ा ने ताड़नो सीखो।

मकोड़ा ने जठी ने शूँ ताड़े वठी ही ज पाछो आवे, यो वीं रो स्वभाव है। यूँ ही मनख रो पण स्वभाव है, के वीं ने छेटी करे, पण नजीक जो

लेवे तो वो छेटी व्हे' जाय, यूँ ही माया सुख है के छेटी करवा शूँ नजीक आवे, नजीक करवा शूँ छेटी व्हेवे। पण लोग ईं ने नजीक राखवा वास्ते नजीक हीज राखे, ने या छेटी व्हे'तो जाय।

(८९)

विश्व तेजस, (प्राज्ञ)

जाग्रति में आपाँ देखाँ सो कठे है, आत्मा में वणी समय आत्मा ने विश्व केवे है, ने देखी थकी कुरूप मुँह आँखाँ में फेर दीखे, सोही तेजस् ने वी पण वन्द करे (सो) शून्यता दीखे सो प्राज्ञ है।

(९०)

देवदत्त रे विना ही यज्ञदत्त काम करे, तो देवदत्त ने यो क्यूँ विचारणो चावे, के म्हारे विना काम नी व्हेवे। अगर यूँ व्हेवे के यज्ञदत्त रा शरीर में यज्ञदत्त विना ने देववत्त रा शरीर में देवदत्त विना काम नी व्हेवे तो शरीर में यज्ञदत्त रे ने देवदत्त रे कई फरक है भावः— अनुभव में दोयाँ रे ही तुल्यता है, तो किस तरे' दो व्हिया ? जतरा काम, विचार आदि है (वी सब) आत्मा शूँ भिन्न है, तो मोक्ष में कई सन्देह है।

(९१)

"ज्ञात्वा देवं सर्वदुःखाय हानिः" श्रुति

(भगवान ने जाणवा शूँ सब दुःख मिट जाय है)

प्रश्न—कई आत्मा ने शरीर शूँ न्यारो जाणवा शूँ होज दुःख मिट जायगा ?

उत्तर—हाँ, अवश्य ही आत्मा ने न्यारो जाणवा शूं दुःख मिट जायगा। ज्यूं देवदत्त ने आप शूं न्यारो जाणे ईं शूं यज्ञदत्त रो दुःख देवदत्त ने नी व्हेवे, पर देवदत्त यज्ञदत्त री कन्या ने परण्यो जठा शूं वणी कन्या रो दुःख देवदत्त ने व्यापवा लाग गयो, ने यज्ञदत्त रो भी। यूं ही आत्मा ने मन रो दुःख नी व्यापे, पर अहंकार वृत्ति रूपी मन री कन्या ने अंगीकार करवा शूं मन रो ने शरीर रो भी दुःख व्यापतो दीखवा लाग गयो। क्यूं के मन, ने पञ्च भूत, तो पे'ली पण हा, पर दुःख नी व्यापतो ने यज्ञदत्त ने देवदत्त रे पाछी लड़ाई व्हे'गई, तो यज्ञदत्त री कन्या भी देवदत्त शूं विरोध रा कारण शूं नाराज व्हे' गई। जद वीं रो दुःख देवदत्त

ने व्यापणो बन्द व्हे' गयो। यूं ही अहं वृत्ति रा त्याग शूं फेर वीं रो दुःख नी व्यापेगा, ज्यूं शरीर पंच भूत मय व्हेवा पे ?

(९२)

चित्त स्वरूप में स्वाभाविक ही चैतन्यता है, वीं रो ही नाम मन पड़ गयो, ज्यूं ज्यूं वीं में दृढ़ भावना व्हे'ती गई, ज्यूं ज्यूं वींरा अनेक आकार दीखवा लागा। ज्यूं खाँडरा मे'ल, मक्या, प्याला वगेरा अथवा पाणी री शरद हवा, फुँहारया, छाँटा नाळा, नदी, तळाव, समुद्र, बरफ, कड़ा, ओळा वगेरा दीखवा शूं पृथक्ना (अळगाव) व्हे'वा पे पण पाणी हीज है। केवल पृथक् भाव शूं ही बन्ध ने ऐक्य भाव शूं ही मोक्ष। पर पृथक् भाव और ऐक्य भावभी वणी चित्तशक्ति सिवाय कुछ नी है।

'योग वासिष्ट'

(९३)

कर्म-उपासना-ज्ञान।

कार्य रो हीज दीखणो कर्म, कार्य कारण रो दीखणो उपासना, कारण रो दीखणो ज्ञान। ज्यूँ कार्य घटरो हीज दीखणो, ने घट मृत्तिका रो दीखणो

कार्य कारण रो दीखणो, ने मृत्तिका रो हीज दीखणो, कारण रो दीखणो; यूँ संसार हीज दीखणो कर्म, जतरे कर्म करणो चावे, ने जतरे कर्म नी करेगा, तो आगे नी वढ़ेगा, ज्यूँ पशु कार्य ने भी नी देखे, अथवा सुस पुरुष। कर्म शूँ वो कार्य कारण ने देखवा लाग जायगा, जद ही उपासना समझणी, वो ईश्वर ने और संसार दोयाँ ने ही देखे है। ने संसार कल्पित व्हेवा शूँ वो जदी परमात्मा में हीज स्थित व्हे' जायगा अर्थात् कारण ने हीज देखेगा जदी ज्ञान समझणो; या वात प्रत्यक्ष देखणी, हर वस्तु में वीं रो कारण देखणो, अर्थात् कार्य देखती समय कारण ने नी भूलणो। यथाः—

"*यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।*
तस्याहं न प्रणश्यामि सच मे न प्रणश्यति॥
सर्वभूतस्थितं यो मां पश्यत्येकत्वमास्थितः।
कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्माणि च कर्म यः॥
सर्वथा वर्तमानो पि न स भूयोभि जायते॥" इत्यादि

श्रीगीताजी

(९४)

प्र० बन्ध मोक्ष सुख दुःख कई है?

उ० आतमा शूँ बन्ध ने न्यारो समझणो ही बन्ध है यूँ ही मोक्ष सुख दुःख।

(९५)

प्र० उपरोक्त विचार शूँ आत्मा सिवाय कुछ नी है, तो मोक्ष बन्ध किस तरे' है?

उ०—ज्यूँ शतरंज चौपड़ में अर्थात् "कल्पना में है।"

प्र०—कल्पना कई है, ने कणी में है?

उ०—कल्पना कई नी है, ने कल्पना में हीज है। अर्थात् अक्षर जो लिख्या जाय है, वी कागद में है, या शाही में या मन में? कागद में है, जदी तो कोरा पाना पेही वंचणा चावे। शाही डंक में व्हे' तो दवात में या कलम हाथ में लेता ही ने पुस्तक वंचणी शुरू व्हे' जाणी चावे और अणाँ सबाँ रा संयोग में व्हे' तो हर कोई अक्षर लिखवा लाग जाय। यूँ ही मन में व्हे' तो भी अण भण्या भी बाँचवा लाग जाय। क्यूँ के मन तो वीं रे भी है। ई शूँ जाणी जाय, के जो याँ री कल्पना है, वीं में ही ई अक्षर है, यूँ ही संसार

समझणो । भावः—हरेक वस्तु में वीं रा कारण ने छोड़ ने ज्यो आपणा मन में जो वीं रो पृथक् रूप बंधे सो ही बंधन, संसार, माया, भ्रम, प्रकृति अविद्या, मन, है। यो ही विचारवा शूँ सब जगा' ईश्वर रा दर्शण व्हे' है अर्थात् "कार्य में कारण ने मत भूलो।"

(९६)

प्र०—ब्रह्म सर्व व्यापक किस तरे' है, ने सब शूँ न्यारो किस तरे' है ?

उ०—कमाड़ में कणी जगा' वृक्ष नी है, केवल कमाड़ भाव में वृक्ष नी है। यूँ ही ब्रह्म सर्व व्यापक ने सब शूँ न्यारो है, संसार में कणी अंश में ब्रह्म नी है, केवल संसार भाव में नी है।

सब रूप सदा सब ही हिन सो।

श्रीमानस

मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः ।
न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमैश्वरम् ॥

श्रीभगवद्गीता

(९७)

आत्मा पे बुद्धि रो आवरण आय गयो है,

ज्यूँ सूर्य पे बादळाँ रो अर्थात् सूर्य पे बादळाँ रो आवरण नी आवे पर आपणाँ पे आवे, ने आपाँ आत्मा हाँ, जदी बुद्धि रो आवरण कणी पे आयो, ने, सो देखवा वाळो कुण व्हियो—

"यथा गगन घन पटल निहारी।
झँपेउ भानु कहहिं कुविचारी॥"

श्री मानस

(९८)

प्र०—म्हने कल्पना क्यूँ व्हे' ?
उ०—थूँ खुद ही कल्पना है।
प्र०—थने कई कल्पना व्हे' ?
उ०—म्हारो मन थिर व्हे' जाय तो आछो।
थूँ खुद ही मन है, थारो मन कई थिर व्हे'। "थूँ" मन नी है और मन रो द्रष्टा है, तो थारो मन स्थिर व्हे'गा जदी महा प्रलय व्हे' जायगा। क्यूँ के सब थारो ही मन है। क्यूँ के आप मरयाँ ने जग प्रलय। आप अर्थात् अहं (खुद)

(९९)

अहङ्कार।
अहङ्कार, मोक्ष में रोक है, अर्थात् कपाट है, सो

भी वच्च रा। ज्ञान, भक्ति, योग, सब ही अहङ्कार ने पसन्द नी करे है। व्यवहार में भी अहङ्कार ने खोटो मान्यो है। अहङ्कार शूँ ही बन्ध है। अहङ्कार ही सब अनर्थ रो कारण है। अहङ्कार ने अज्ञान एक ही है। जठे अहङ्कार है, वठे ही अज्ञान है, जठे अज्ञान है, वठे ही अहङ्कार है। अणी रो ही नाम अविद्या है। ईं ने छोडणो ही मोक्ष है।

प्र०—वास्तव में मैं भी विचार देख्यो, तो अहङ्कार शूँ ही सुख दुःख, अहंकार शूँ जन्म मरणादि द्वंद है, पर यो छूटणो बड़ो मुश्किल है। शरीर छूटे, मन छूटे (मुर्च्छा में) धन, कुटुम्ब, सुख, दुःख, आपणो सब ही छूटे, पर अहंकार तो नी छूट्यो, नी छूटे, ने छूटे तो लोग परमहंस व्हे जाय। व्यवहार भी छूट जाय, ने शरीर भी छूट जाय, वातौं भले ही करलो, पर अहंकार छूट्यो व्हे अस्या तो शुक वामदेव आदि वा जनक आदि, राजा व्हे'गा पर आश्चर्य व्हे है,के वणाँ रो किस तरे अहंकार छूट्यो, ने छूट्यो जदी वी मर क्यूँ नी गया। वणाँ तो आपाँ शूँ भी बड़ा बड़ा काम कीधा हा ?

उ०—हे भाई ! बड़ा-बड़ा काम अहंकार मिटवा शूँ होज व्हियाहा। ईं में कोई आश्चर्य नी है, के अहंकार किस तरे' मिट्यो। अगर विचार करे, तो तत्काल अहंकार मिट जाय, ने या कोई दन्त कथा नी है। यो बड़ा बड़ा महात्मा रो सरल सुगम सिद्धान्त है। अणी तरे' शूँ घबराय ने सहज बातरे वास्ते मन ने सामर्थ्य हीन नी करणो। श्रीगीताजी में अश्या ही विचार करवा शूँ महावीर गाण्डीवधारी ❀ अर्जुन ने भी श्री भगवान् ने आज्ञा करणी पड़ी के (*क्लैब्यं मास्म गमः पार्थ*) इन्द्रिय में भी एक इन्द्रिय नी रोवे सो भी खाली विषयरा काम में हीज अर्थात् मूत्र त्याग जो वीं रो काम है, वो तो करे हीज, पर स्त्री शूँ विषय नी कर सके ईं में क्लीबता नी है।

एक राजा री कन्या सब ही मनुष्याँ ने क्लीब के' ती ही। क्यूँ के वणाँरा अहंकार रा विषय में अश्या हीज विचार हा, पर एक निरहंकार राजकुमार ने हीज वणो पौरुष युक्त जाण पाणि

❀ अर्जुन रे धनुष रो नाम गांडीव है।

ग्रहण कर्‌यो (परण लीधो)। यदि अहंकार युक्त पुरुष ने क्लीबाधिराज के'वे तो भी अत्युक्ति नी व्हे वे अहो ! अशी सुगम सत्य वात, ने पण जी अंगीकार नी करे, मन री कमजोरी वणारी कतरी समझणी चावे और सब ही इन्द्रियाँ रो प्रवर्तक मन है, जीं रो मन ही नपुँसक वत् व्हे' गयो। जदी वो नर सब ही इन्द्रियाँ शूँ शक्ति हीण व्हे' गयो। मनुष्य के'वे के अहंकार छूटणो असम्भव है, पर विचार केवे के अहंकार व्हे'णो असम्भव है, ने जदीज परमहंस श्री राम कृष्ण देव, श्री नारद, श्री मार्कण्डेय, श्री प्रियव्रत, आदि महात्मा परमेश्वर ने, माया रे वास्ते प्रार्थना करता, के माया देखाँ. जो वणाँ में अहङ्कार व्हे' तो, जदी तो माया तैयार ही है, पर कोशीश करने भी वी अहंकार पैदा नी कर शक्या, जदी ईश्वर शूँ यो प्रार्थना करणी पड़ी। ने अहंकार, जो यूँ केवे के "म्हारा में तत्त नी है", जदी तो विचार ई ने तुरन्त ही मार लेवे, यो दम्भ रो हीज खजानो है। पर विचार पण कोई सामान्य चीज नी है, पर अहङ्कार रो प्रतिद्वन्द्वी (प्रति पक्षी) भी अश्यो ही व्हे'णो चावे, ज्यूँ दुष्ट रावण रा शत्रु मर्यादा पुरुषोत्तम

भगवान् श्री रामचन्द्र । जठे विचार रो नाम शुण्यो, के या तो वीं ने एक दम दबाय लेवे, अथवा आपणे आधीन कर लेवे अथवा सन्धि कर ने मित्रता कर लेवे, ने फेर मोको देख ने मार भी न्हाके। माया युद्ध में यो बड़ो कुशल है, धर्माधर्म री भी ईं ने कई परवा नी है। जतरा अकर्म है, सब करवा ने आप प्रस्तुत है, अणी वास्ते विचार ने पे'ली तो ईं रा स्वभाव शूँ वाकब व्हे'णो चावे, पछे ईं रा असली बळ ने पिछाणणो चावे, के यो दीखे जश्यो ही ज है अथवा ओर तरे' रो। विचार रे, ने अहंकार रे अनेक वार युद्ध व्हियो, कदी यो भाग गयो कदी विचार। क्यूँके विचार री सेना में यो भेद न्हाक ने छळ शूँ जीत गयो। एक दाण विचार ने बुद्धि शूँ खबर मिली, के देह-देश पे अहंकार अकस्मात् धावो न्हाक विजय कर लीधी है। जदी विचार कियो, के ज्ञान वैराग्य ने बुलावो, ने फोज तैयार करो। पर कोई नी बोल्यो, जदी विचार कही, के कोई भी म्हारो सहायता पे नी है, कई म्हूँ एकलो ही हूँ। जदी तो यो प्रबल शत्रु म्हारी भी सेना ने साथ ले' ने अवश्य ही म्हने भी मार न्हाखे गा।

यूँ विचार ने खिन्न, जाए श्री कृष्णचन्द्र कृपा निधान स्वयं आज्ञा करी के ।

"क्लैब्यं मास्म गमः ।"

"न मे भक्तः प्रणश्यति ।"

"अहं त्वा सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ।"

"कर्म बन्धं प्रहास्यसि ।"

"तस्मादज्ञान सम्भूतंहृत्स्थं ज्ञानासिनात्मनः ।"

"छित्वैनं संशय योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत ।"

अणी तरे' यूँ अनेक वचन शुण विचार पाछे देखे, तो त्रिभंग ललिताकृति * श्री व्रजराज कुमार सुन्दर अरुणाधर पे मधुर मुरली बजाय रिया है। आपणी देह री कान्ति शूँ सब अन्धकार मिटाय रिया है, और मन्द मन्द मुसकाय रिया है। विचार अश्या दर्शण करतां ही सचेत व्हे' गयो, पर वणी यूँ जाण्यो, के ई तो आनन्द मग्न बंशी बजावे है, ने कई शस्त्र भी अणा नखे कोई नी। जदी भगवान् आज्ञा करी के बिना शस्त्र ही थारे द्वारा अणी अहंकार रो नाश कराय दूँगा। हे पुत्र, थूँ "अकेलो हूँ" यूँ मत डर।

---

* एक पग पर खड़ो रह कर दूजा पग शूँ आंटी लगाय ने पण्ड टेक ने वांको खड़ो रे'णो।

"मोरदास कहाइ नर आसा ।
कर हित कहहु कहा विश्वासा ।" श्री मानस
हे प्रिय *"मयैवैते निहताः पूर्वमेव "*
"निमितमात्रं भव सव्यसाचिन् ।"

यूँ आज्ञा कर आपणो श्री व्रज रो मनो हर स्वरूप दुराय विचार रो रथ हाँकवा लाग गया। वणी वगत अहंकार काँप गयो, छाती धूजवा लागी, पर वीं ने आपरा छळ रो वड़ो घमण्ड हो, सो, श्री कृष्ण चन्द्र दयालु ने साथे देखने भी विचार ने मारवा रो विचार कीधो। जदी भगवान् आज्ञा करी के हे परन्तप! अब थारा वाण प्रहार कर, तो विचार देख ने के'वा लागो, ई तो अठी री आडी रा ही ज नराई वीर वणी री आड़ो दीखे है। जदी भगवान् आज्ञा करी के थूँ केवल अहंकार ने मारले'। क्यूँके ईं रे मरवा पे कुल फोज थारी व्हे' जायगा। यो जोवे जतरे ईज ई अणी री तरफ दीखे है, दूज्यूँ है, थारी ही ज तरफ। जदी विचार अहंकार ने म्हूँ मार न्हाकूँ। "अस्मि मारूँ" शस्त्र चलायो, जदी तो अहंकार विचार रे माथा पे पाछो "अस्मि" वाण अरयो मास्यो के विचार घूमवा लाग गयो, ने रुधिर

निकळवा लाग गया। अणी अस्त्र ने खाली जातो देख, विचार ने प्रभु सावधान कर आज्ञा करी "अणी शूँ यो दुष्ट नी मरेगा।" थूँ अणी रा मर्म में तीर मार, जदी यो मरेगा। दूज्यूँ रावण री नाई अनेक सिर अणी रे व्हे' ता जावेगा। जदी विचार, प्रभु ने विनय करी "हे कृपालु आप हीज ईं रो मर्म स्थान बतावो, के जठे तीर री देऊँ। जदी श्रीभक्तवत्सलव आज्ञा करी के "हे प्रिय! ईं रा मर्म स्थान ने सावधान व्हे' ने शुण, प्रथम तो थूँ ईं रो भय छोड़ दे'। अगर ईं रो भय रे' गा तो तीर ठीक लक्ष्य पे नी लागेगा अथ "अहं" ईं रो मतलब, यो है, के "हं, अ, "(म्हूँ नी)" यो ईं रो मर्म प्रत्यक्ष दीख रियो है, ईं में तीर री दे'। विचार कियो "म्हूँ हाल नी समझ्यो। म्हूँ नी, जदी देखे कुण, शुणे कुण इत्यादि, इन्द्रियाँ ने कुण चलावे, ने सुख दुःख की ने व्हेवे, ने विचार कीने व्हेवे, ने विचार कुण देखे ?" जदी श्री भगवान् आज्ञा करी, हे सौम्य, थूँ शत्रु रा भय शूँ घणा समय शूँ भयभीत व्हे' रियो है, जीं शूँ नी समझ्यो। इन्द्रियाँ मन शूँ चाली, सुख दु:ख रो ज्ञान मन में व्हे' बुद्धि विचार करे'

ने विचार ने आत्मा देखे। अब "अहं" कई व्हियो?, हे भाई "अहं" है ही नी, ने वीं रो उपयोग भी शरीर में कुछ नी व्हें जदी वणी शूँ कई भय, ने वो कई है, थूँ ही ज के'? अतरा में इन्द्रियाँ आपने कियो, के म्हें तो देखवा आदि री क्रिया करां, ने यो केवे के म्हें देख्यो, म्हें शुण्यो। मन कियो, म्हूँ तो संकल्प विकल्प शूँ सुख दुःख पाऊँ ने यो दुःष्ट केवे के म्हें पायो। वुद्धि कियो के म्हूँ तो निश्चय करूँ, ने यो केवे म्हें निश्चय कीधो, ने सत्व रज तम भी अरज कराई है, के म्हाँरा काम भी कोई वच्चे ही आपणाँ केवे है, सो वीं ने सजा व्हे'णी चावे। जदी, विचार कियो, के यो अहंकार ही ज थाँरॉ काम ने आपणाँ करने घणी देर शूँ लड़ रियो है। अठी ज्यूँ ज्यूँ ई वीर फँट ने सही सही वात के' ता गिया, ज्यूँ ज्यूँ अहंकार जी रा अङ्ग गळ गळ ने पड़ता गिया। जदी वुद्धि ने गुणाँ रो कथन पूरो व्हियो, ने विचार कियो के वो अहंकार कठे है, यूँ के' ने वुद्धि ने भेजी के "जा पकड़ लाव!" तो वुद्धि सब जगा' हेर आई, तो भी अहंकार रो पतो नी लागो। जदी विचार पूछ्यो, के वो

अबार तो हो ने अबार कठे चल्यो गयो। जदी बुद्धि कियो, के यो तो म्हने हीज भ्रम व्हियो, के भूल शूँ कई री कई अरज करणी आय गई, वो तो ठेठ शूँ ही नी हो, ई तो म्हाँरा इन्द्रियाँ मन आदि रा अंग मिल्या ने न्यारो कईक व्हेवे, ज्यूँ दीख गयो, ने म्हाँरा आप आप रा अंग जदी सम्भाल लीधा, जदी वो तो पे'ली नी हो ने अवे भी नी है। जदी श्री भगवान आज्ञा करी के हे प्रिय! घो'त आछो, वींरे मर्म में तीर मार्‌यो के वींरो नाम निशाण ही नी रियो।
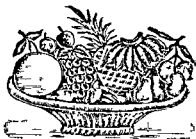
परमार्थ विचार

पांचमो भाग

"सब कर मत खग नायक एहा, करिय रामपद पङ्कज नेहा ।"
"श्रुति सिद्धान्त इहै उरगारी, राम भजिय सब काम बिसारी ॥"

श्रीमानस

"अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥

श्री गीताजी

भूमिका

यह पुस्तक एक संग्रह है जिसमें अनेक ग्रन्थों के और महात्माओं के वचन हैं । इसमें कोई अनुचित बात मालूम हो, तो वह संग्रहकर्त्ता की भूल से रह गई समझनी चाहिये । क्योंकि उन दयामय परम उदार ईश्वरावतारों में भूल का रहना असंभव है, उसी प्रकार हिंसक कृपण क्षुद्र जीव में भूल का न होना भी असम्भव है । परन्तु सज्जन गुणग्राही अवश्य ही इस पुस्तक को आदि से अन्त तक देख प्रसन्न होंगे और उन सज्जनों को तो अधिक आनन्द होगा कि जिनकी कृपा से यह शुक का अनुकरण काक होकर करना चाहता है । यह इस पुस्तक का पांचवां भाग है ।

(१)

श्री नाम स्मरण सर्वोपरि है। या वात स्थान स्थान पर लिखवारो यो ही तात्पर्य है, के मनुष्य ईं ने भूल नी जाय। प्रायः मन रो यो स्वभाव है, के जठे वणी ने रोकवारो कार्य व्हे' अर्थात्-विपरीत करां वठे ही वो घवरावे और श्री नाम स्मरण में तो ज्यादा ही ज घवरावे। क्यूँ के अणी में घणो भ्रट मन रो नाश व्हे' जावे है। पर अणी में लाग जाय, जदी तो ईं ने पण आनन्द आवा लाग जाय। यूँ नी विचारणी के योगरी, ज्ञानरी, भक्तिरी, महिमा ज्यादा है। श्री नाम स्मरण में सब ही है। ज्यूँ श्री यशोदानन्दन रा मुख में सब ही है, भावः—श्री मुखारविन्द छोटो दीखे पर वीं में म्होटी वस्तु कशी नी है?

(२)

सब मत एक है और न्यारा न्यारा है। श्री परमहंसजी महाराज री आज्ञा है के "अब पुराणा शिक्षा नहीं चलता" वीं रो यो भाव नी है, के पुराणी श्री गीता भागवतजी आदि रद्दी व्हे' गया। तात्पर्य यो है, के "ज्यूँ धातु तो वो ही

ज है सिर्फ गळाय ने छाप दूजी लगाय देवे सो नयो शिक्को व्हे' जाय। यूँ ही ज्यो श्री वेद रो सिद्धान्त है, वणी ने महात्मा लोगां आपणा हृदय में गळाय ने आपणी छाप लगाय चलाय दीधो। अर्थात् वेद रो अनुभव कर लोगाँ ने समझाय दीधो। अणी ने वेसमझ के' वा लाग गया, या वेद में ही नी। वेद में नी है जदी कठे है ? त्रिकाल में भी महात्मा रा वचन वेद विरुद्ध नी व्हे' शके। वेद में अवश्य है, पर आपाँ नी समझ शक्या, ईं शूँ आपणे भावे नी व्हीं' और स्वयं वेद आज्ञा करे है, के—

(*आचार्यवान् पुरुषो वेद*)

"गुरु वाळो ही मनुष्य समझ शके है"।

(*उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः*)

—श्री गीताजी

भी या ही आज्ञा करे है, अर्थात् गुरु शूँ ही वेद समझयो जाय है।

(३)

यो संसार स्वप्न ज्यूँ नी है, पर स्वप्न हीज है। कल्पित है जीं शूँ।

(४)

"यतो यतो निश्चरति"

'जहाँ जहाँ दृष्टि पड़े तहाँ तहाँ कृष्ण स्फुरे,। भावः—जठे र जाय, वठे वठे लक्ष्य देखणो, अर्थात् नाम लेताँ मन, घट में जाय तो घट भी ईश्वर रो नाम समझणो ने पट भी। यूँ ही ईश्वर ब्रह्म, सत्य, मिथ्या आदि भाव में करणो। एक में सब है सब में एक है।

(५)

एक गाड़ी बड़ा वेग शूँ जाय री' ही, वणी में सेकण्ड, इण्टर, थर्ड, फर्स्ट. सेलून रा मुसाफिर भर्‌या थका हा, कोई बेठवा रे वास्ते लड़ता, कोई अखबार वाँचता, कोई हंसता, ने कतराई शोक ग्रस्त बैठा हा। भंगी, ब्राह्मण, अंगरेज, आदि सब जात, सब ऊमर, रा आदमी, लुगायाँ, वणी में हा। जतराक में दूसरी गाड़ी भी सामी आई, मुसाफिराँ ने तो यूँ खबर ही के शायद अबार टेशण आवेगा। वी वापड़ा कई जाणे के या लड़-वारे वास्ते दोड़ री' है, वी तो निज निज मनोरथ कर रिया हा, अतराक में बड़ा जोर शूँ टक्कर

लागी, के जीं शूँ सब विचार ने क्रिया भी मुसाफिराँ री नष्ट व्हे' गई, ने शरीर भी। मुसाफिर वैठा जदी एक वड़ा स्टेशन ऊपरे एक ज्योतिषी वणाँ ने कियो, के या गाड़ी लड़ेगा, सो कोई मत वैठो। पर वापड़ा गरीब री कुण शुणे, स्टेशन मास्टर वींने तड़ाय दीधो, ने मनखाँ री जो वैठवा वास्ते भीड़ पड़ री' ही, वी वैठणो ही ज आपणो कर्तव्य समझ रिया हा, वणाँ ने या नक्की व्हे'तो के या गाड़ी लड़ेगा, तो दाम काट वाबू री खुशामद कर रात में जागरण कर अर्थात् तन मन धन शूँ क्यूँ अतरी मेहनत वेठवाने करता।

गाड़ी=संसार, वेटणो=विषयासक्ति, लड़ी=काल री गाड़ी शूँ, ज्योतिषी=योगी। अर्थात् आपी संसार रूपी गाड़ी में वैठा थका अनेक चेष्टा, ने थोड़ी २ बात पे लडाँ हाँ, ने जाणाँ के आपणा मनोरथ पूरा व्हे'गा, या खबर नी के काल री गाड़ी दोड़ी थकी सामी आय री' है ने योगी (ज्योतिषी) स्पष्ट केवे, जीं ने नखे हो नी आवा देवे।

(६)

एक कवि री कविता

एक वड़ो कवि है, वीं री कविता वड़ी मनोहर

है, वो नव रसमयी कविता करे है, परन्तु जणी रस रो वर्णन करे, सो ही प्रत्यक्ष व्हे' जाय है। जणी वगत वो शृंगार रो वर्णन करे, तो:—

'देखहिं चराचर नारि मय जे ब्रह्म मय देखत रहे'

और वणी रा काव्य री या शक्ति है, के चेतन ने जड़, ने जड़ ने चेतन कर देवे। आपणाँ गोसाईजी महाराज वणी कवि ने ठीक जाणता हा। वणी कवि री तारीफ़ में निज रामचरित मानस में आज्ञा करी के:—

('जे चेतन कहे जड़ करहि, जड़हि करे चैतन्य')

और वेद में (कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूः) आदि वींरा उपनाम भी लिख्या है। वींरी कविता सारा ने ही प्रत्यक्ष है, जीं शूँ वींरा एक दो छन्दाँरा उदाहरण अठे नी लिख्या, अगर वणी री वणाई पुस्तक देखवा रो विचार व्हे'वे तो वणी पुस्तक रो नाम प्रकृति है। दूसरी पुस्तक स्वभाव, ने तीसरी पुस्तक अहं, ने चौथी मन, ने (वृत्तयः पञ्च) पाँचमी, ई पाँच पुस्तकाँ वणीरी श्री महर्षि पतञ्जलि, ने एक श्री भगवान् व्यास देखी और कणाद छः ने कणीक सात (देखी) यूँ नरो पुस्तकाँ है। रुचि अनुसार

देखे है। क्यूँ के नराई विषय पे वींरी कविता है। प्राकृत कवि तो वींरी ही ज कविता ने अठी री उठी कर नामवरी पावे है, ने उत्तम कवि जो वींरी कवितारी तारीफ़ करवा लाग जाय, ने आप नवी कविता वणावणो भूल जाय और वणी कवि री तारीफ़ में ही ज लाग्या रेवे है। अश्या कवि ने देखवारो इरादो, तो व्हे' पर वींरी कविता में ही ज अश्या मग्न व्हे'रिया हाँ, के आपाँ री भी खबर नी है। जदी वो शान्त रस री कविता की ने ही शुणावे जदी वो मनख वीं शूँ मिलवा री कर, ने होंश में आवे।

(७)

शाँ शाँ ने गणना शूँ भी मन रुक जाय।

मन्दसोर रा महात्मा अग्रवाल

(८)

"याही में जप जोग है, या ही में सब ज्ञान।"
"जाणे सो है आतमा, जाने सो मन जान॥"

श्री काकाजी साहब गुमानसिंहजी

(९)

प्र०—जदी जीव एक है, तो अनेक क्यूँ दीखे?

उ०—अनेक भाव है जीं शूँ अनेक दीखे। अर्थात् गुणाँ रा तारतम्य शूँ अनेक दीखे।

"जिमि घट कोटि, एक रवि छाँही।
यह घाड़ि बात राम के नांहीं॥"

श्रीमानस

एक सूर्य नारायण रो प्रतिबिम्ब अनेक घड़ाँ में पड़्यो एक काळो घड़ो, एक लाल, एक धोळो, एक पे हाथी मंडऱ्या एक पे मनख, एक पे रूँख, एक पे एक रींगटी, एक पे दो, एक पे तीन, अब सूर्य, ने प्रतिबिम्ब, में तो कई फरक नी। परन्तु घड़ा में फर्क पड़्यो। श्रीकबीरजी महाराज आज्ञा करे है, केः—

"कबीर कूआ एक है पनिहारी अनेक।
भेद घुस्यो वरतन महिं नीर एक को एक।"

वरतन याने घड़ा, वा वर्ताव (गुण), दृष्टान्त में यो अर्थ लेणो के सूर्य जड़, ने वीं रो प्रतिबिम्ब भी जड़, अणी शूँ वणा प्रतिबिम्ब ने खबर नीं के यो लाल घड़ो है, यो काळो अथवा ईं ये हाथी मंडया है, ईं पे मनख वा ईं पे एक लकीर है, ईं पे दो, परन्तु चैतन्य सूर्य रो जो जीव प्रतिबिम्ब है, वणी

में तो चैतन्यता है ही ज। ज्यूँ प्रकाशमान् सूर्य रा प्रतिबिंब में प्रकाश है। यूँ ही चैतन्य सूर्य रा प्रतिबिंब में चैतन्यता है, सो वर्णी ने यो ज्ञान है, के यो घड़ो लाल है, यो श्वेत, ने यो काळो, ने अणी में ई ई चित्र है, सो आपाँ ने प्रत्यक्ष व्हे' रिया है, के म्हूँ गौर हूँ, म्हूँ श्याम हूँ, म्हूँ (रक्त) गऊँ वर्ण्यो हूँ, म्हूँ मनख हूँ, शृंगी हूँ, म्हूँ वृक्ष हूँ, म्हूँ सुखी हूँ, म्हूँ दुःखी हूँ, म्हूँ बे होंश हूँ, अणी तरे' शूँ घट रो ज्ञान व्हे'णो ही चैतन्यता है।

प्र०—जदी मोक्ष कई है?

उ०—मोक्ष यो है, के जदी आपणो ज्ञान व्हे' जाय ने घट (घडा) री वात घट (मन) में जाण ले'। अबार आपाँ घट री वाताँ आपणाँ में जाण रिया हाँ यो वन्ध है। वो प्रतिबिम्ब चैतन्य रो हृदय में पड़े है, वठे योगी आप ने जाण ने कृत कृत्य व्हे' जाय है।

''उमादारु योषित की नाँई, सबहिं नचावत राम गुसाँई।

श्रीमानस

राम मन इन्द्रियाँ रा स्वामी जड़ घट ने आपरा प्रतिबिम्ब जीव शूँ सब ने नचाय रिया है।

"हृद्देशेऽर्जुनतिष्ठति" श्रीगीताजी

अहन्ता ही प्रतिबिम्ब है, यो ही जीव है, ने यो घट रा गुण आत्मा में साबित व्हेवा शूँ है। ज्यूँ प्रतिबिम्ब कुछ वस्तु नी है, ने दीखे, यूँ ही यो भी है।

(दृग्दर्शनशक्त्योरेकात्मतेवाऽस्मिता)

श्रीयोग सूत्र

अर्थात् देखवा वाळा (चैतन्य) री, ने दीखवा वाळी माया री एकता रो व्हे'णो ही अस्मिता (म्हूँ पणो) है, सो देखवा वाळो, ने दीखवावाळो, एक कदापि नी व्हे'। पर भ्रम शूँ यूँ मानणी आय जाय है, ज्यूँ रुपयो, (धन) ने मनुष्य एक नी है, पर धन नष्ट व्हेवा शूँ नराई मनुष्य पण नष्ट व्हे' गया। नी तो धन नष्ट व्हियो, वो भी है, ने नी मनुष्य। क्यूँ के वो भी है; केवल अज्ञान व्हे'गयो। यूँही शरीर रे नष्ट व्हेवा शूँ मनुष्य जाणी, म्हूँ नष्ट व्हेऊँ हूँ, पर

"न जायते म्रियते वा कदाचित्" श्रीगीता

अणी वास्ते चैतन्य है, सो एक ही है, वीं रो प्रतिबिम्ब भी वश्यो ही है, केवल प्रकृति, मन, वृत्ति, भाव, में भेद है।

(१०)

प्र०—दो वाताँ रो विचार व्हेवे अर्थात् दुचिताई व्हेवे जदी वणाँ में कशी व्हेवे गा ?

उ०—ज्यो नियत व्हे' गई है, वा व्हेवेगा। मनुष्य री सृष्टि में नियत नी व्हे' पर प्रभु री सृष्टि में नियत व्हे' गई है। यथा श्रीगोस्वामीजी महाराज

"बनी बनाई बन रही और बनगी नाहि।

तुलसी या विधि समुझि के मगन रहो मन माहि॥"

जो समर्थ स्वामी री आज्ञा ने पसन्द नी करे, वणी सेवक ने दुःख व्हे'णो चावे। यथाः—

कर्तुं नेच्छसि यन्मोहात्करिष्यस्यवशोऽपि तत्॥

श्री गीताजी

मन आदि जड़ है, ने ईश्वर री सत्ता शूँ ही है। दृज्यूँ कुछ भी नी है, वणाँ री सत्ता मानणी मूर्खता है, जो *मनुष्य विचार भी स्वतन्त्रता शूँ नी* कर शके, वो काम किस तरे' करे; जो आप ही कार्य है, वो कारण किम तरे' व्हेवे।

(११)

कोई केवे मन, ने रोक ने भजन करो, कोई केवे मन जाय, तो भले ही जावो, ईश्वर ने मत भूलो।

कोई केवे जठे मन जाय, वठे ही ईश्वर री भावना करो, कोई केवे मन ने ईश्वर शूँ न्यारो मत समझो, कोई केवे दोयाँ दोयाँ ने ही न्यारा न्यारा समझो, इत्यादि वचन विरुद्ध दीखे, तो भी याँ में विलकुल फरक नी है। वे समझ वृथा वादविवाद में पड़ ऊमर पूरी करे। ज्यूँ समझ में आवे ज्यूँ ही समझो, पर विपरीत अर्थ मत करो। विचारो, तो थोड़ा ही घणो, नी विचारो तो घणो ही थोड़ो।

(१२)

१—एक रोगी ओखद खाई, सो वणो ने ओखद में प्रेम व्हे'गयो, सो खायाँ ही कीधो, सो पाछो माँदो व्हे'गयो।

२—एक रोगी वींरी या हालत देख दवा खावणो छोड़ दीधो सो बीमार हीज रियो।

यूँ ही साधन में ही तत्पर रे'णो भी बुरो ने नी रे'णो भी बुरो। रोग मिटवा पे तो स्वतः ही दवा शूँ अरुचि व्हेवे है. पर घणा खरा रोग रो निर्णय नी करे, ने दवा छोड़ देवे, ने घणा खरा दवा ने भी खाद्य समझ शोख (शौक़) कर लेवे, वणारी हीज पे'ला रोगी में गणना है, रोग मिटवा

शूँ प्रयोजन है, चित्त विर्त्ति लय शूँ प्रयोजन है, वढ़ावा शूँ नी।

(१३)

शास्त्र क्यूँ भणाँ हाँ भूलवा रे वास्ते अर्थात् जो शीख्याँ हाँ वो भी भूलवा वास्ते। परन्तु घणा-खँरा तो याद करवाने शास्त्र भणे तो वो ही शास्त्र वणाँ रे मारवा ने शस्त्र व्हे' जाय है। सब भूलवा शूँ ईश्वर याद आवे, ने सब याद राखवा शूँ ईश्वर भूलाय जाय।

"या निशा सर्वभूतानाम्"

—श्री गीताजी

(१४)

प्र०—परमारथ विचार रो यो ४५० मों विचार है। ऊपर जी विचार आया वणाँ में एक वात नी व्हेवा शूँ कदी चित्त जमे, कदी पाछो हट जाय, सो "व्यग्रता" व्हे'णो हीज "अविद्या।" है, सो घणा विचार वचे तो एक हीज विचार व्हेवे तो ठीक सो, अणाँ में सब शूँ कस्यो विचार आछो है, सो ग्रहण कीधो जाय?

उ०—सब रोग री एक हीज ओखध होवे तो ठीक। प्रकृति अनुसार भिन्न भिन्न विचार सम्भव है, अणी तरें रो भ्रम व्हे'जावे, अणी ज वास्ते प्राचीन महर्षि निज निज विचार ने एक होज धारा पे चलाया हा, जी शूँ तो लोग के'वा लागा (के) वणाँ में विरोध हो, ने इकट्ठा किह्या, जठे के'वे वणाँ ने भ्रम हो। पर नी तो वणाँ में विरोध होने नी भ्रम, ई, आपाँणाँ में हीज है। सिद्धान्त सब विचाराँ रो यो है, के मनोमन जो विपरीत ज्ञान है, वो मिटे, ने उत्तम विचार तो नाम स्मरण है।

(१५)

प्र०—सब विचार एक है या अनेक?

उ०—एक विचाराँ तो एक ने अनेक विचाराँ तो अनेक है।

प्र०—आपणाँ चित्त रो वृत्ति एक है या अनेक?

उ०—वृत्ति सामान्य धर्म शूँ तो एक है, ने रज-तम-सत्वरा प्रकार शूँ अनेक। यूँ ही विचार को' वा वृत्ति को' परमारथ विचार सत्य शूँ हीज सम्बन्ध राखे है।

(१६)

भक्त ने जो कर लीधो वींरो हर्ष शोक नी व्हेवे। क्यूँके वो आपरी कुछ भी सत्ता नी समझे, यूँ वर्त्तमान भविष्य रो भी नी व्हेवे, वी तो सर्वदा ही समाधिस्थ है।

"मयि सर्वाणि कर्माणि"

—श्री गीताजी

श्री परम हंसजी महाराज आज्ञा करता के 'मुझे चालीस वर्ष हुए कुछ भी नहीं करता हूँ, सब मां करती है।' यूँ ही श्री हरनाथजी महाराज भी आज्ञा करे, के कृष्णजी करे है, सब कृष्णजी का है।

(१७)

पृथुशास्त्रकथाकंथारोमन्थेन वृथैव किम्।
अन्वेष्टव्यं प्रयत्नेन तत्तज्ञै ज्योंतिरान्तरम्॥
शास्त्रगर्ते विलुह्यताम्ः—
इदं श्रेय इदं श्रेयो न स श्रेयोऽधिगच्छति
कल्पकोटि शतैरपिः—
अन्त समय में यों तजि दे हैं जैसे नमक हराम।
करनी बिन कथनी कथे अज्ञानी दिन रात।
कूकर ज्यों भोंकत फिरे सुनी सुनाई बात॥

केवल शास्त्र पाठ शूँ ही ज मुक्ति व्हेवे तो सारा

पण्डित मुक्त व्हे' जाय "यः क्रियावान् स पण्डितः" कोई श्रश्यो शास्त्र नी के जीं ने वाँचवा शूँ मुक्ति व्हे' जाय, ने श्रश्यो पण कोई शास्त्र नी, के जींने विचारवा शूँ मुक्ति नी व्हेवे। तात्पर्य यो है, के शास्त्र री श्राज्ञा माफिक चालणो। श्रवण शूँ ही मनन व्हेवे, ने मनन शूँ ही निधिध्यासन व्हेवे। केवल एक जगा' हीज नी श्रटक रे'णो। शास्त्ररी प्रशंसा करी है, वठे श्रवण नीकरे वणाँ ने श्रवण करवा री चेष्ठा करी है, ने शास्त्र री निन्दा केवल श्रवण करे ने मनन नी करे वणाँ ने ऊँचा खेंच-वाने है, ने मनन निन्दा निधिध्यासन पे पहुँचावा रे वास्ते है। घणाँ खरा री या राय है, के श्रवण वतरा तक करणो के मनन नी व्हेवे, ने मनन वठा तक करणोजतरे निधिध्यासन नी व्हेवे, या वात भी ठीक है, पर श्रवण करने घणा खरा दूसरा ने के'वा लाग जाय, ने संसारी काम में ले आवे यूँ नी चावे। दूज्यूँ निष्काम श्रवण शूँ अर्थात्, मोत्त वास्ते श्रवण शूँ स्वतः ही मनन व्हे'वे ने यूँ हो निधिध्यासन भी स्वतः ही व्हे' जावे, पर मान बड़ाई वास्ते श्रवण मनन निधिध्यासन शूँ मान बड़ाई ही प्राप्त व्हेवे, ने वा भी चली जाय।

(१८)

शिवोऽहं । ईं रो अर्थ यूँ नी है, के म्हूँ हूँ जो शिव (ब्रह्म) हूँ, किन्तु म्हूँ, है जो शिव है। यो विचार करणो "म्हूँ" तो ठीक पण "हूँ" खोटो।

(१९)

बालक खेले जदा कोई राजा बणे, कोई चोर। पछे चोर रे जरबा पड़े ने राजा ने खमा खमा करे, यूँ ही पाप में दुःख ने पुण्य में सुख। कदी चोर पाछो राजा बणे, ने राजा चोर। पर महात्मा खेल देखे।

(२०)

बाळक गारा रो खेलकणयो बणाय, बणी ने चोर बणाय ने कूटे। "ब्रह्मण्याधाय कर्माणि"

—श्री गीताजी

यूँ ब्रह्म में कर्म अर्पण व्हेवे। यूँ ही परमात्मा जड़ अहङ्कारने बणायने कूटे बाळक ने भी या भावना व्हेवे, अबे योयूँ के'वे, अबे अणोरे दो जरबा फेर लगावो, फेर सामो बोले, ने यूँ केवे थूँ म्हारो कई कर सके, फेर पाँच जरबा लगावो। पर बापड़ो वो, तो कई नी बोले, आपही जरबा लगावे ने आप ही

चोर वणायो, आपरो हीज खेलकण्यो है। मुरजी व्हे' जरवा लगावो, मुरजी व्हे' चंवर करो।

"राजी है उस ही में जिसमें तेरी रजा है।
या यों भी वाहवा है और यों भी वाहवा है॥"

(२१)

रबर रो डोरो ज्यूँ वधे, जद लांबो व्हे' जाय, ने पाछो समेटाय जदी छोटो व्हे' जाय। यूँ ही ब्रह्म रो वधणो संसार समेटावणो, चैतन्य वृत्ति रो फेलणो ने समेटावणो चैतन्य है, एक ही है।

जो पदार्थ दीखे सबहो जड़ है। देखे जो चैतन्य। जो पदार्थ दीखे जो मन है। अणी तरे' शूँ मन प्रत्यक्ष है, ने देखे सो आत्मा चैतन्य है, सो आप हो है। अब अणी सिवाय प्रकट प्रत्यक्ष कई? ज्ञान, जड़=मन, चैतन्य=आत्मा।

(२२)

अलख की पलक में खलक है सारा।
खलक की पलक से अलख है न्यारा॥
देखत देखत ऐसा देख
मिट जाय धोखा हो जाय एक।

—जमनालालजी

(२३)

श्री गीताजी रो सिद्धान्त हरिदासजी री टीका शूँ श्री गीताजी में योग और सांख्य दो नाम आवे है। वणा ने ही सगुण निर्गुण, वा सविकल्प निर्विकल्प वा भक्ति ज्ञान, अन्वय व्यतिरेक, वा कर्म सन्यास, आदि अनेक नाम शूँ के' शकाँ हाँ। अवार प्रायः (अकसर) प्राणायामने वा नेती धोती षट् कर्म ने योग माने है, ने घणा खरा प्रतिमा पूजन ने ही भक्ति माने है ने घणा खरा "अहं ब्रह्म" बकवाने ज्ञान माने है। पर गौण में, ने मुख्य में भी फरक व्हेवे, जदी गौण भी नी व्हेवे केवल प्रतिष्टारे वास्ते जदी ईकाम कराँ हाँ, जद उलटी श्री भक्ति, योग, ज्ञान, री बुराई कराँ, वणी व्हो' ने अणीज वास्ते शास्त्र में बुराई आवे सो सदोष कर्म री ही है, निर्दोष ने दोष तो सामान्य मनुष्य भी देणो अनुचित समझे, जदी तरण तारण आप्त पुरुष अश्यो कदी करे। वणाँ जो बुराई करी वींरो यो ही भाव प्रतीत व्हेवे के अणी उत्तम सिद्धान्त री बुराई (निन्दा) नी व्हे' जाय।

श्री गीताजी में सर्वसिद्धान्त सार श्रीभगवान अर्जुनजी ने निमित्त करने अधिकारी जीवाँ रे वास्ते

आज्ञा कीधी है ! चावे जणी जात, देश, मत, रो मनुष्य व्हेवे परमारथ में चालवा में ई सिद्धान्त चणी ने अंगीकार करणा पड़ेगा या बात "श्री कुराण" श्री बाइबल, आदि दूसरा देश रा महात्मारे मान्य पुस्तकाँ शूँ भी प्रमाणित व्हेवे है। क्यूँ के दूसरा देश, जात, रो ईश्वर दूसरो नी है। ईं शूँ ईश्वरीय ज्ञान एक है और मायिक ज्ञान रो तो पार नी है।

श्रीगीताजी रे वास्ते लोग केवे के अर्थशास्त्र है अर्थात् नीति है, सो नी है। केवल अर्जुनजी रा शोक-मोह-अज्ञान निवृत्ति रो गीताजी में उपदेश है, लड़वा रो नी। लड़णो तो अर्जुनजी रो प्रारब्ध कर्म है। सो ही श्री भगवान आज्ञा करी के लड़। "*स्वधर्ममपिचावेद्य*" शूँ प्रभु रो सिद्धान्त नी है, या साबित व्हेवे है। क्यूँ के यूँ तो "*अथचैनंनित्यजातं*" यो भी कोई अज्ञानी प्रभु रो मत मान लेवेगा, पर नी व्हे' शके। क्यूँ के यो तो पक्षान्तर है अर्थात् अज्ञान में भी शोकादि नी करणा चावे। फेर ज्ञान री तो के'णी ही कई। "योग" शूँ गीताजी में यो अभिप्राय है, के "प्रत्येक पदार्थ में परमात्मा ने मिल्या थका देखणा", या ही बात

समग्र गीताजी में है "रसाहमप्सु कौन्तेय" इत्यादि शूँ पदार्थ रो न्यारो प्रतीत व्हे'णो ही माया है, ने प्रतीति प्रत्येक पदार्थ री आत्मा रा अस्तित्व (योग) शूँ है, ने दीखे न्यारा अणोज वास्ते ईने योग माया केवे है, और अठे या शंका करे के पदार्थ तो न्यारा है, ने वणाँ में ईश्वर रो योग (मेळ) व्हियो, ज्यूँ नी है। ज्यूँ घडा में मृत्तिका रो योग है, यूँ प्रभु रो सर्वत्र योग है, माया या हीज है, के केवल घट हीज समझणो ने घट में मृत्तिका देखताँ देखताँ घट रो दीखणो बन्द व्हे' ने मृत्तिका रो हीज भान रे' जाणो "सांख्य" है, सो सांख्य पे'ली कठिन है, योग शूँ सहज में सांख्य री प्राप्ति है। अणीज वात ने अनेक प्रकार शूँ श्री भगवान आज्ञा करी है। श्री हरिदासजी कृत, ज्ञानामृत टीका में या वात खूब समझाई है। श्री परमहंस रामकृष्ण देवकृत तत्वोपदेश में भी या हीज वात है। अणीज योग री प्रशंसा भगवान स्थान स्थान पर कीधी है। अणी योग री पूर्ण स्थिति ही योग प्राप्ति वा सांख्य है, सो आज्ञा है, के "तदा योगमवाप्स्यसि" "यो माम् पश्यति सर्वत्र" दृष्टा रो स्वरूप में अवस्थान (स्थिति) ही योग है,

ने नाना भाव शूँ ही वृत्ति सारूप्य व्हेवे, अणी वास्ते एक भाव शूँ ही वृत्ति स्थिर व्हेवे और वास्तव में नानात्व कुछ नो है। सच्चिदानन्द आत्मा में चित् शक्ति ने न्यारी मानवा शूँ दो प्रतीत व्हे' गया। वास्तव में सत् के'वो, वा चित् के'वो, वा आनन्द के'वो, एक ही है। वा चित् शक्ति ज्ञान स्वरूप है, जीं शूँ जदी वणी आपणो ज्ञान छोड़ दीधो, जदी प्रकृति नाम पड्यो, पर है वा एक ही। फेर वणी में शूँ त्रिगुण, अहं, बुद्धि, मन, इन्द्रियादि पदार्थ व्हे'ता गया, सो कणी में विहया, आत्मा में। क्यूँके वेद में एक रो एक में स्थिति बताई है, पर आत्मा नो आपरी महिमा में हीज स्थित है, या ही व्यवसायात्मिका बुद्धि है। अणी में ही सब एक है। अणी रो ही संक्षेप भूतशुद्धि है। नवीन साइन्स भी कतराई अंश में ईं ने माने है, जदी वणा रो साइन्स पूरो व्हे' जायगा, जदी वी ईंने पूरी मान लेगा। श्री भगवान भी आज्ञा करे है, के "*व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह-कुरुनन्दन*" के निश्चयात्मिका बुद्धि तो या एक ही है, के सर्वत्र श्रीकृष्ण रा दर्शन करणा, ने अनिश्चयतारी तो अनन्त शाखारी; फेर अनन्त बुद्धि

है। वणाँ रे भावे तो गारो न्यारो, घड़ो न्यारो, ने चुकल्यो न्यारो,ने कळशो न्यारो,ने मटको न्यारो ने कूळकी, कूळको, तूती, कुञ्जो, पातो, कूँडो, दीवाण्यो, फेर हाथी, घोड़ा वगेरा (न्यारा) गारो भी काळो. पीळो, भूरो, खड़ी ने यूँ अनन्त भेद व्हे' शके है, ने वी मूर्ख या हीज माने है, के गारो नी है। किन्तु न्यारा है "नान्यःस्तीतिवा.दिनः"। क्यूँ के कामात्मा है, कामना हो वाँ री आत्मा है। अशी बुद्धि ने छोड़ यथार्थ बुद्धि अङ्गीकार करणी जो कोई मतवाळा यूँ के वे, के यो तो भक्ति रो मत नी है, तो वणाँ ने पूछणो जदी भक्ति रो मत फेर कस्यो है। घणाँ खरा सात पदार्थ माने, घणाँ खरा छः ने घणाँ खरा दो इत्यादि। पर वणारो यो सिद्धान्त नीं है, वणारो तो यूँ समझा-वणो है। ज्यूँ न्याय शूँ या वात समझ में आय जाय, के उपरोक्त घटआदि सब मृत्तिका है, ने जो ईश्वर शूँ न्यारा माने है, वी ईश्वर री निन्दा करे है यूँ तो अनादि नरो वस्तु है, ईश्वर हीज अनादि नी है, या साबित व्हे'गा, ने ईश्वर में भी शक्ति कोय, नी। जदी पदार्थ शूँ सृष्टी वणावणी पड़े, ज्यूँ आपाँ ने गारा भाटा शूँ मकान वणावणो

पड़े। पर अतरोक फरक पड़ेगा, के आपाँ गारो भाटो लावाँ, ने वठे मूँडा आगे पड्यो रे'वे। पर स्वतंत्रता तो नी री', और सब में ईश्वर मानवा में विकारीपणो ईश्वर में नी आवे जी। क्यूँ के विकार तो द्वैत में है, एक में नी। श्री गोस्वामीजी महाराज भी आज्ञा करे है—

"सिया राम मय सब जग जानी।"
"जेहि जाने जग जाहि हिराई।
कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं।"

धन्य है वणाँने, जो श्री भक्ताधिराज दयाल गोस्वामी जी रा वचनाँ रो भी अनादर करे है। महाराज तो श्री शङ्कर गुरु रा-भगवान रा-वाक्य आज्ञा करे है—

"उमा जे राम चरण रत, विगत काम मद क्रोध।
निज प्रभुमय देखहिं जगत, के सनहिं करहिं विरोध॥

म्हाँ जो भाटा लोड़ी मय तो जगत देखाँ ने केवा के प्रतिमा में प्रभु है। जणी समय थाँने प्रतिमा में प्रभु रा दर्शण व्हे'गा। जदी तो लोग थाँने के'वे के प्रतिमा मत पूजो, तो चरड़णो नी।

क्यूँ के म्हें तो प्रभू ने पूजा हाँ, प्रतिमा भाव कठे रियो, ने यूँ केवाँ के माधुर्य भाव नी रेवे है. सो भी नो। क्यूँ के "*न तत्र महात्म्य विस्मृतिरपवाद.*" श्री नारद जी "*अन्यथा जाराणामिव*" जो गोपिका वणाँ में महात्म्य ज्ञान भूल प्रेम करती तो जाराँ (दूजा पतियाँ) री नाँई प्रेम व्हे' तो। क्यूँ के जाराँ रो तो मामूली भक्ताँ जश्यो प्रेम परस्पर व्हे' है, पर वठे महात्म्य नी है। महात्म्य युक्त माधुर्य में माधुर्य अतरो वन्धणोचावे, के महात्म्य भी वी में लीन व्हे' जाय। ज्यूँ श्री व्रज गोपिका रा वचन है, के भगवान आप गोपिका ने हीज सुख देवा वाळा नी हो, पर सम्पूर्ण प्राणियाँ रा अन्तरात्मा हो। अणी महात्म्य ज्ञान में वणाँ ने अतरो माधुर्य वढ्यो के "अहो! ई प्रभु म्हाँने प्रत्यत्त दर्शण दे' रिया है और प्रेम शूँ आलिङ्गन प्रदान कर रिया है। वणी महात्म्य में अशी मत्त व्ही' और अश्यो माधुर्य वढ्यो के कितव (हे धूर्त-कपटी) के'वा लागी। क्यूँ के महात्म्य विना माधुर्य रो प्रादुर्भाव व्हेवे ही नी। कोई ग्रन्थ अश्यो नी जी में महात्म्य नी व्हेवे, ने मुसलमान और नास्तिक मताँ री वणाई थकी श्रीमद्भागवत

जी वा राम चरितादि में महात्म्य रो वर्णन नी व्हे' वाशूँ वीं में माधुर्य भी प्राप्त नी व्हेवे, ने महात्म्य शूँ ही म्हें अबार श्री कृष्ण कृपाल री भक्ति कर शकाँ हाँ। दूज्यूँ जणाँ ने महात्म्य ज्ञान नी है, वो अब प्रभु ने भी याद नी करे। रावण जाण ने भी प्रभु ने नर कि'या। जणी पे श्री अङ्गद जी आज्ञा करी "राम मनुज कस रे शठ बंगा" महात्मा जो माधुर्य री बड़ाई कीधी सो वास्तव में सत्य है और महात्म्य रो फल माधुर्य है। पर अबार भ्रम में पड़, विना वृत्त ही फल ने खावणो चावे, ने ईश्वर में महात्म्य है, ने वो भक्त भी जाणे, पर माधुर्य में लीन व्हेवा शूँ वो वरया ही व्हे' जाय। विना महात्म्य रे निश्चय व्हियाँ या किस तरे' निश्चय व्हेवे, के प्रभु अबार म्हाँने अठे दर्शण देवेगा, पर वणी रा महात्म्य शूँ ही भक्ताँ ने निश्चय व्हेवे, के स्वामी म्हाँणा हीज है, वी प्रभु तो त्यार ऊभा है, अणी वास्ते प्रभु ने सर्वशक्तिमान् समझणा चावे। महात्म्य री दृढ़ता में ही माधुर्य है। माधुर्य तो कणीक बड़भागी ने मिले है।

श्री परम दयालु भक्त शिरोमणि श्री गोस्वामी जी महाराज कृत अणाँ चौपायाँ ने विचारवा शूँ

भ्रम मिट जायगा, के माधूर्य कई है, माहात्म्य कई है। अद्वैत कई है, ने द्वैत कई है, (या बात समझ में आय जायगा)

चौ०—"अस तव रूप बखानों जानों।
फिरि फिरि सगुन ब्रह्म रति मानों॥
जो कोशल पति राजिव नयना।
करहु सो राम हृदय मम अयना॥
तेहि समाज गिरिजा में रहहूँ।
अवसर पाय वचन अस कहेहूँ।
हरि व्यापक सर्वत्र समाना।
प्रेम ते प्रकट होत में जाना॥
विश्ववास प्रगट भगवाना।
"जेहि चित हीं परमारथ वादी॥......"
"देखहि हमसो रूप भरि लोचन।
कृपा करहु प्रणतारति मोचन॥"
"वाम भाग शोभित अनुकूला।
आदि शक्ति छवि निधि जग मूला॥"

(छन्द)

"पश्यन्त जेहि जोगी जतन करि करत मन गो वश जदा।
सो राम रमा निवास सतत दास वश त्रिभुवन धनी।
मम उर वसहु सो समन सस्रति जासु कीरति पावनी॥

॥ चौपाई ॥

राम परम प्रिय तुम सब ही के ।
प्रान, प्रान के जीवन जी के ॥
सुनहु राम तुम कहँ सब कहहिं ।
राम चराचर नायक अहहिं ॥
सुत विषयक तव पदरति होहु ।
मोहिं बड़ मूढ़ कहे किन कोऊ ।
विषय, करन, सुर, जीव, समेता ।
सकल एक ते एक सचेता ।
सब कर परम प्रकाशक जोही ।
राम अनादि अवध पति सो ही ।

(छन्द)

जे ज्ञान मान विमत्त, तव भव हरनि भक्तिन आदरी ।
सो पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी ॥

दोहा

सुनि प्रभु वचन विलोकि मुख, गात हरषि हनुमन्त ।
चरण परेउ. प्रेमाकुल, त्राहि त्राहि भगवन्त ॥ १ ॥

छन्द

सब रूप सदा सब होहिन सो ।

इति वेद वदन्ति न: दन्त कथा।
रवि आतप भिन्न न भिन्न जथा।

दोहा

गिरा अर्थ जलबीचि सम, कहियत भिन्न न भिन्न।
वन्दों सीताराम पद, जिनहिं परम प्रिय खिन्न॥

"यत्सत्वादमृषैव भाति सकलं रज्जौ यथा हे र्भ्रमः।" (जणी रा व्हेवा शूँ यो संपूर्ण संसार सत्य ही ज दीखे है, जणी तरे रस्सी ने साँप समझणो।) इत्यादि अनेक वचन है।

(२५)

सगुण निर्गुण, सोना, ने भूषण ज्यूँ है। सोनो निर्गुण, भूषण सगुण। सोना शूँ भी सोना रो मूल्य और शोभा विशेष है। पर सोना रो भाव भी भूषण में चावे।

(२६)

श्रद्धा दो तरे री व्हेवे। ज्यूँ कणी राजा आज्ञा कीधी, के ऊपर शूँ नीचे पड़जा, सो वणी री आज्ञा मान पड़ गयो श्रद्धा शूँ, या प्रथम है। दूजी उत्तम, या है, के राजा आज्ञा कीधी के सूरज नीं

है। यो चंद्र है, ने वींने सूर्य दीखे सो चन्द्र मान ले' या उत्तम है। प्रथम शूँ दूसरी आय जाय है। गुरु साधन बतावे सो करवा शूँ गुरु केवे सो दीखे है।

(२७)

शास्त्र अनन्त है, पर निश्चय एक है। साधक पे'ली वणाँरो एक निश्चय करवा जाय, जठे अनेकता प्रतीत व्हेवे। क्यूँके मायिक बुद्धि है। संध्या समय एक मकान में एक सींदरी पड़ी देख कोई केवे माळा है, कोई साँप, कोई सींदरी, कोई पाणी री रेलो केवे। ईं री अनुमान कर नक्की करे ने फेर हवा शूँ हाले ने फेर मनखाँ री भ्रम वध जाय, अशी हालत में दीवो लावणो चावे, सो पछे भ्रम नी व्हेवे। अणी तरे' शूँ श्री नाम स्मरण करवा शूँ सहज में निश्चय व्हे' जाय ने यूँ तो 'कल्प कोटि शतैरपि' निश्चय नी व्हेवे सो ही।

"रामहिं भजिय तर्क सब त्यागी।
राम भजिय सब काम बिसारी॥"

या विधि भजन री श्री दयानिधान आज्ञा

करो है। दूज्यूँ शास्त्र रो विचार अन्त काल में उखड़ जाय है।

(२८)

तकलीफ शूँ कोई आदमी घबराय जाय, कोई नी घबरावे। ज्यूँ चीरो देवावे, जदी कोई हाका करे कोई सहन करले'। हाकाकरवा शूँ पीड़ा घटे नी, कुछ फायदो नी, प्रत्युत नुकशाण व्हे' अर्थात् पीड़ा बढ़े, ने सहन शूँ घटे। यूँ ही प्रारब्ध भुगतती समय कोई घबरावे, जो दूजा प्रारब्ध वण जाय, ने कोई सहन करले' वी धीर, या जाणे भुगत्याँ ही छूटकारो है। यूँ ही घणा खरा सुख में अद्वैत भाव राखे दुख में द्वैत कर लेवे, कोई धीर महात्मा सर्वत्र अद्वैत भाव ही राखे, चावे द्वैत दीखो चावे अद्वैत, है वो ही। श्री कृष्णचन्द्र, चावे मारो चावे तारो। क्यूँके वणी विना और कुण है। कई दो ईश्वर है। और वो ही है, जदीज तो भक्त सर्वदा सुखी रेवे।

सब सन्त सुखी विचरन्त मही।
दुख में सुख मानि सुखी चरिये॥

(२९)

ज्ञानी अज्ञान रो अनुभव चावे, तो भी नी व्हेवे।

अज्ञानी ज्ञान रो अनुभव चावे तो भी नी व्हेवे।

यो ही पूरा ज्ञानी अज्ञानी रो लक्षण है।

(३०)

एक वैश्य श्री गोस्वामीजी महाराज नखे जाय ईश्वर दर्शण करावा री प्रार्थना करी तो आप आज्ञा करी "नीचे बरछी रोप ऊँचा शूँ वणी ऊपर पड़ जा, भगवान दर्शन देदेगा।" वो बरछी रोप घणो ही पड़णो चायो पण नी पड़ शक्यो। जदी एक क्षत्री वींने पूछ्यो तो वणी सब हाल कियो। जदी वणी आप्त वाक्य पे विश्वास करने वाण्या ने द्रव्य दे विदा कीधो। क्यूँके वाण्या रे द्रव्य री कामना ही; ने वो बरछी पे कूद्यो, सो श्री रामचन्द्र भगवान वच्चे ही झेल लीधो। यूँ गुरु वाक्य पे विश्वास चावे। अश्या ने प्रभु दर्शण किस तरे' देवे, ज्यो धन रे वास्ते प्रभु ने चावे। वास्तव में ईश्वर प्राप्ति करणो ऊँचा शूँ बरछी पर पड़्या जश्यो ही दीखे है। क्यूँके अहंकार छोड़णो अर्थात् वासना त्याग करणो शरीर

त्याग करवा शूँ भी कठिन है। जणी चाल शूँ पड़वां में अनेक संकल्प व्हेवे, लागवा कटवा रा। यूँ ही कामना त्याग में भी। क्यूँके आँपाँ यूँ जाणाँ कामना विना काम नी व्हेवे, पर जो एक दम कामना छोड़देवे,वींनेएक दम प्रभु दर्शण दे'देवे। अणी में स्थीपणा (दृढ़ता) रो काम है, ने असी दृढ़ता नी आवे, जतरे दृढ़ता रा साधन करतो रेवे। तात्पर्य कामना त्याग ही (बरछी पर) पड़णो है। काच में चे'रो दीखे ने काच ने चे'रो दोई जणी में दीखे सो ही आतमा हृदय, भूमा है।

(३१)

एक इच्छा पूरी नी व्हेवे जदी तो अतरी अबखाई आवे,सब ही इच्छा पूरी नीव्हे' जदी कतरी अबखाई आवती व्हे'गा। मरती वगत तो देखवा री बोलवा री हालवा री इच्छा भी पूरी नी व्हेवे ।

(३२)

आपो भूलणो ही आत्म-निवेदन है। जो करे सो श्री प्रभु करे है, यो ही कर्मार्पण है। या वात हर

बगत याद व्हे'णी चावे, के जो करे प्रभु करे, 'अहं' भी प्रभु करे, विस्मृति भी प्रभु करे, पदार्थ भी प्रभु करे, पछे वणी शूँ प्रभु करवा लाग जाय।

(३२)

मूरख रे मन मॉयने, होवे नीं सन्तोष।
शुद्ध सच्चिदानन्द ने, जीं शूँ देव दोष॥
अहङ्कार ही 'तू' बने, अहङ्कार किन कीन्ह।
अहङ्कार के निकट ही, निराकार को चीन्ह॥
मन ही में संसार है, सपने दीखे सोय।
मन जाही के मॉयने, ताहि सके को जोय॥
न्यारो दीखे तो तने, फिर सोचत किहि काज।
नहिं दीखे तोभी तने, हूओ अनामय आज॥
मुरजा व्हे' तो एक गए, मुरजी गणो अनेक।
एक दोय की कल्पना, जा में है सो देख॥
मैं हरि को देखन चहूँ, तू अरु हरि हैं कौन।
देखे ताको देखले, समरथ दूजो मौन॥
सारो जग प्रभु माँयने, तू न्यारो क्यूँ जाय।
सुधा सिन्धु में बैठ के, करे हाय तूँ हाय॥
डूब जाय हरि रूप में, निकळे होय अकाज।
सन्ताँ नवी निकाळ दी, या तरवा की जाज॥

वही करे, लेवे वही, तू क्यों नट गँवार ।
जाही की सच खीचड़ी, ताहिं न चाँवल चार ॥

बकरा ज्यूँ मैं मैं करे, कान पकड़िया काळ ।
कड़ी न्हाक अमरयो करे, वींने अबे सम्हाळ ॥

मरवा शूँ डरपे घणो, करे मरण रा काम ।
इण दुनियाँ रे मॉय यो, लख्यो अचम्भो आम ॥

अहङ्कार जो यूँ करे, तो तूँ कोण विचार ।
आप कियो आप हि व्हियो, गियो भरमरो भार ॥

राम नाम में राख मन, तन शूँ जग बेवार ।
या बिन तरवा को नहीं, डूबन कूँ संसार ॥

सन्त वेद सत् गुरु कहे, देख लेहु सब कोय ।
कृष्णापण जो ना भयो, सो तृष्णार्पण होय ॥

कान फूटवा शूँ डरयो, हियो फूट ग्यो हाय ।
अमरयो बकरयो ना भयो, मरयो हरयो जब खाय ॥

अरे बकरा कान फोड़ कड़ी पे'रावे वणी शूँ भाग ने जवारा खवाय माथो काटे वणी नखे मती जा। सात्विक सु मत छोड़, राजसी सुख में मत दौड़। अर्थात् 'अरे मन' प्रभु शूँ विमुख मत व्है'

तू मरता परथा अरे, करता कृष्ण कृपाल ।
सिर धरता है बोझ क्यों, फिरता चड़ा बिहाल ॥

(३४)

ब्रह्म समुद्र में शास्त्र यूँ है, ज्यूँ ठीकरी पाणी पे ठेका खाय है। बाळक जलाशय में तिरछी ठीकरी फेंके सो पाणी पे लाग लाग ने उछळती जाय, जतरा जोर शूँ फेंके वतरा ही ठेका खाय, पर है सब पाणी पे हीज, यूँ ही बुद्धि ब्रह्मरो वर्णन करे है, ने करती करती माँय ने लीन व्हे' जाय। कणी एक (मीमांसा) कणी दो (सांख्य) कणी तीन (योग), कणी छः (वैशेषिक), कणी सात (न्याय), ठेका खवाया यूँहो अनेक (मीमांसा), दीखे पर वात एक ही है।

(३५)

करवा में बन्ध, नी करवा में मोक्ष। कईनी व्हेंवे वो ही मोक्ष है। कर्तापणो ईश्वर पे राखवा शूँ करणो छूट जाय।

(३६)

श्री भगवान तो हुकम करे, म्हारा में सब

कर्म मेल दे। जीव केवे, नी आप शूँ नी व्हे' शके म्हूँ करूँगा। जदी गुरु पूछे थूँ कठा शूँ आयो ? कई करे ? कणी शूँ करे ? जदी आप ही करणो छूट जाय ने तरणो व्हे' जाय।

(३७)

ज्ञान शूँ सब कर्म एक दम नष्ट व्हे' जाय।

जेहि जाने जग जाहि हिराई।
जागे यथा सपन भ्रम जाई॥

—श्री मानस

'हिराई' गमवा शूँ पाछो लावणो सम्भव जाण महाराज स्वप्न भ्रम रो दृष्टान्त आज्ञा कर्‌यो। ज्यूँ रस्सो ने सांप जाणे जतरे साँप है, पर रस्सी रो ज्ञान व्हे' ताँ ही साँप रो अभाव व्हे' जाय। यूँ ही थाँरो, म्हाँरो, म्हूँ, थूँ, यो वो आदि सब एक दम भस्म व्हे' जाय। ज्यूँ शोर (बारूद) शूँ हाथी माँडे, वणी पर मा'वत, राजा, पालकी, झूल, गेणो, दाँत शूँड, पग, सब अवयव दीखे, पर थोड़ी अग्नि रो स्पर्श व्हे' ताँ ही सारा ही अग्नि रूप व्हे' जाय। यूँ ही चित्त ही

संसार है अर्थात् है सो सब विचार है। एक दो भी विचार है, ने विचार भी विचार है। फेर न्यारो कई रियो।

मया ततमिदं सर्वं, जगदव्यक्तमूर्तिना ।

श्री गीताजी (अ: ९, श्लो: ४)

ज्ञानामृत टीका

(३८)

परि जे हों इत उत कहूँ, जो न मम्हे हो हात ।
सुखमय अपनें अंक ते, मत बिनगावो मात ॥

(३९)

ख्याल में झूठ बोलवा रो पाप नी है। क्यूँके झूठ रो हीज नाम ख्याल है। ज्यूँ शतरञ्ज में हाथी घोड़ा नी व्हेवे ने केवे हाथी लावो, पेदल चलावो, दूजो के'वे वजीर ने आड़ो मेल दो। ज्यो कणीरे आड़ो मेले, लकड़ी है, के वजीर, पण अणी में झूठ में यूँ बोलणो ही साँच है। अगर यूँ केवे अणी लकड़ी ने अठी मेल दो, तो ख्याल बिगड़ जाय, ने प्यादी ने पाँच घर चलाय दे, तो भी अनीति व्हे'। अर्थात् दूणो झूठ व्हे' जाय। अणी

तरे शूँ संसार झूठो है, पर अणी ख्याल में ज्ञान रा अनधिकारी ने उपदेश करणो, ने नियम रो भंग करणो अनुचित है ("न बुद्धिभेद जनयेत्" तानकृत्स्न विदो मदान् कृत्स्न विन्न विचालयेत्) श्री गीताजी अ: ३ का २६ ओ २९ वा श्लो नियमित झूठ शूँ ज्यादा नो बोलणो।

(४०)

मन परमेश्वर ने क्यूँ भूले ? यो भूल रो बेटो है। यो परमेश्वर में संतारो लागे, जो यो परमेश्वर री सत्ताजींशूँ हीज है।

(४१)

श्री भगवान् राम कृष्णजी रो उपदेश है, के हृदय में जीव सुई री नांई है। परमात्मा चुम्बक ज्यूँ मस्तक में है। अज्ञान रूपी कीट सुई रा मूँड़ा पे लाग्यो थको है, सो प्रेमाश्रु शूँ धुप जाय ने जीव ने ईश्वर खेंच लेवे। अणी में स्थूल हृदय में जीव रो वास, ने सूक्ष्म मे हरि बताया है।

(४२)

'हरि स्मरण सर्वोपरि है,' या बात अतरा दिन रा अनुभव शूँ निश्चय व्ही'।

विनिश्चितं वदामि ते, न अन्यथा वचांसि मे ।

श्री मानस

(४३)

यो मन रो छळ है, के फलाणो साधन आछो, फलाणाँ शूँ सीखाँ, फलाणी पुस्तक देखाँ। क्यूँके अणी में देर पड़े है, ने मन रो स्वभाव है, के यो देर न्हाके है, ने नाम स्मरण में देर री कई जरूरत। कणी महात्मा शूँ मिलवा रो, वा विधि पूछवा रो वा विचारवा रो, कई जरूरत नी, नाम हर वगत ले'ता रे'णो, बस व्हे' गयो।

(४४)

ई परमारथ विचार अथवा उत्तम शास्त्र महात्मा रा वचन सत्य है, तो भी हृदय में क्यूँ नी ठे'रे ? ज्यूँ छोटा पात्र में वड़ी वस्तु नी आवे। यूँ ही हृदय ने नाम स्मरण शूँ वढ़ाय लो, स्वतः ही ई विचार वणी में आवेगा, ने निकाळवा शूँ भी नो निकलेगा, और कृतकृत्यता प्राप्त व्हे'गा। करणो भी कई नी, कई ने कई तो याद रेवे ही ज, जद नाम ने याद राखणो। क्यूँके व्यवहार, करवा शूँ व्हेवे, नाम याद राखवा शूँ व्हेवे।

ज्यो कठिन करे, वो सरल शूँ क्यूँ डरे ।

(४५)

कर्ता श्री कृष्ण है ।

यो ही ज्ञान, या ही भक्ति, यो ही साँख्य, योग, कर्म-सब आय गथा, कोई दर्शन वा शास्त्र, मत, परमारथ रा ,या नी केवे, के अज्ञान सिवाय अन्य बन्धन है और अज्ञान, विपरीत भावना रो नाम है। कर्ता जो म्हूँ व्हेऊँ तो विपरीत भावना कई व्ही'। क्यूँ के म्हूँ, 'करूँ हूँ, म्हूँ सुख दुख भुगतूँ' अस्यो विचार तो साराँ ने ही है। ज्यो आपाँ निश्चय कीधो, सो ही मोक्ष व्हे' जदी तो मोक्ष व्हे' गयो, ने नी व्हियो तो आपणो निश्चय यथार्थ नी व्हियो। साँख्य प्रकृति पुरुष ने न्यारा कीधा ने "अहं" गियो और न्याय, पदार्थ सब न्यारा कीधा और कर्ता ईश्वर ने मान्यो, ने "अहं" गियो। यूँ ही वेदान्त अद्वैत कियो, "अहं" गियो। मिमाँसा कर्म ने ही कर्ता मान्यो, ने "अहं" गियो। "अहं" गियो ने काम व्हियो। ने भक्ति में जश्या सुभीता शूँ अहं जाय वीं री तो केहणी ही कई *कर्ता कृष्ण है यो ही मूल मन्त्र है।*

(४६)

जठे रे' वा शूँ मरवा रो भय है, वठे नी रे' णो अर्थात् यो तो मृत्यु लोक है। अणी वास्ते अमरलोक (आत्मा) में रे' णो अठारी वृत्ति में तो मृत्यु है। ऊँदरा री वासना(गंध) शूँ तो घर छोड़ दे, ने अनेक वासना आवे तो भी देह नी छोड़े, आत्म देश, एकान्त, में नी जावे।

(४७)

असल में तो अमृत है, पर बारणे मृत्यु है। अर्थात् पदार्थ दृष्टि ही मृत्यु है, तत्व दृष्टि में नी।

(४८)

एक भगवान् दूसरो काल; एक समझे, जतरे भगवान है, ईश्वर शूँ न्यारी सत्ता मानी के वो ही प्रभु काळ रूप व्हे' जाय।

(४९)

विभूति वर्णन शूँ प्रभुरा ऐश्वर्य रो विचार करणो चावे, भाव—राजा में जो अतरा मनुष्याँ पे अधिकार करवा री, ने राज्य ने नियम शूँ चलावा आदि री सता है सो प्रभु री है। क्यूँके प्रभु

विना स्वतन्त्र वस्तु कठा शूँ आई। जदी एक अंश में भी—तुच्छ ब्रह्माण्ड में भी—एकलोक रा राजा शूँ प्रभु री अतरी मत्ता दीखे है, तो स्वयं सर्व शक्तिमान् में ज्यो शक्ति है, वीं ने कुण समझ शके। यूँ ही सर्वत्र विभूतियाँ में श्री कृपाल कृष्ण रो चिन्तवन कर (चिंतोसि भगवन्मया।) वानगी शूँ सारा धान रो अंदाज बांधणो सब री अवधि प्रभु है।

(५०)

राम आशरे री बोली घणा खरा मनुष्य वा साधु रे व्हेवे है। ईं रो भाव—सदा राम आशरे ही सब है। भाटो भी राम आशरे पड़्यो है, ने गाळी भी राम आशरे दीधी। भाव सब राम आशरे है।

रतनलालजी आमेटा

(५१)

सब रो एक हीज नाम है (कल्पित) यो वा नाम एक ही ज वस्तु है। (नामत्व) सब एक ही ज ईश्वर है। जीं शूँ एक वस्तु रो नाम एक ही ज व्हेवे। क्यूँ के एक रा अनेक नाम तो अनेक

व्हेवे जदी व्हेवे। नाम नराई, ने वस्तु एक, जदी नराई नाम किस तरे' व्हे'। वाच्य एक, वाचक भी एक, ज्यूँ घोड़ो ने अश्व दो नाम है, सो एक ही वस्तु व्हेवा शूँ घोड़ो के'ताँ घोड़ा रो ध्यान बँधे। अश्व के'तां पण घोड़ा रो ध्यान बंधे। नाम नामी ने नी जतावे वो नाम ही नी, ने नामी एक तो नाम भी एक ही व्हियो, क्यूँके वणी एक ही ज वस्तु जताई।

अहं शूँ दुखनी ह, मम शूँ दुःख ह।

ॐकारलालजी

(५२)

थूँ करे तो थने कणी कीधो। एक राजा ने कोई केवे ई मे'ल तो आपरा नी है, तो भी अनुचित है, जदी प्रभु रे वास्ते के'णो अठे नी है, ने यो तो और है, प्रभु रो ही सब है, ने के'णो यो तो म्हारो है। म्हें कीधो, कतरी बुरी वात है। वणी रा सर्व व्यापक नाम मिटावा री कोशीश ई रो हीज नाम है।

देश काल दिशि विदिशिहु माहीं,
कहहुँ सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं!

श्री मानस

तावन्मोहोऽङ्घ्रिनिगडं यावत्कृष्ण न ते जनाः

श्री भागवतजी

(हे भगवान् जठा तक आपरी चरणाँ री जंजीर में नी बंध जावे, वठा हीज तक मोह ने, वठा हीज तक आपरा भक्त नी बाजे है)

"मैं सेवक रघुपति पति मोरे"

"मोरदास कहाइ नर आसा"

करहि तो कहहुँ कहा विश्वासा ।

श्री मानस

(५३)

भागवतजी में हीज कृष्ण चरित नी है, पर यो सब ही कृष्ण चरित है, ज्यूँ भागवतजी में भी लिख्यो है। जदी प्रभु हीज करे तो जीवाँ ने दुःख सुख क्यूँ व्हे? यूँ कोई पूछवा वाळो व्हेवे, जदी तो हुकम करे, थेँ यूँ कीधो, ने वणी यूँ कीधो, ने कोई नी पूछे जतरे आप कई नी करे। खेलवा रो बड़ो शोक है और हुँश्यारी भी असी के सब करे ने कई नी करे।

(५४)

"श्वासा की जमीन पर आशा का तमाशा है, एक के प्रमाद तें अनेक याद आवे हैं।"

(५५)

प्र०—व्यवहार शूँ पतन (बन्धन) व्हेवे है, चावे ज्ञानी करो चावे अज्ञानी। क्यूँके ज्ञानी ने क्यूँनी बाँधे, जद वणी में बाँधवा री शक्ति नी है, तो अज्ञानी ने क्यूँ बाँधे ?

उ०—कोई आदमी पगत्या उतरतो थको जाए ने एक पगत्यो छोड़ दूसरा पे कूद जाय, तो नी पड़े, पर अण जाँण में जो चुकाय जाय तो जाय पड़े, ने दिने खाड़ा खोचरा में व्हे'ने मनख फिरता फिरे, पर राते फोरी ऊँची नीची कोर व्हेवे तो भी पड़ जाय। क्यूँके वींने यो ज्ञान व्हेवे के जमीन समान है, ने नीची निकळे तो भी पड़े, ने नीची जाणे ने ऊँची व्हेवे तो भी पड़े। ज्ञान शूँ ही साँप आदि ने टाळ मनख निकळ जाय, दूज्यूँ श्री जनकादि में दोष आवे।

श्री भारत

(५६)

पदार्थ तो एक ही हरि है, यो भक्ति ने वेदान्त रो मत है। सिवाय श्रीकृष्ण भगवान रे और नानात्व कुछ नी है।

"नेहनानास्ति किञ्चन ।"

"सर्वं ब्रह्ममयं जगत् ॥"

"सर्वं विष्णुमयं जगत् ।"

"वासुदेवः सर्वमिति ॥"

पर न्यारो मानणो ही ज न्यारो है और सो भी प्रभु विना नी है। क्यूँके वणी विना तो कुछ भी नी व्हे' शके।

प्र०—पशु हीज करे तो देखाँ ऊँचा शूँ नीचा पड़ जावाँ ने नी लागे ?

उ०—बड़ी हँसी री वात है, ऊँचा शूँ नीचे तो म्हें पड़ जावाँ ने केवाँ प्रभु करे, ने वो चावे तो कतराई ऊँचा शूँ नीचे पड़े है, कतराई आत्म हत्या भी करले' है। देखाँ थाँरा मन शूँ ही ज थें करता व्हो' तो अवार रा अवार इन्द्र वण जावो, के भंगी भेळो खाय लो, फरक अतरो ही के, थें को' म्हें कराँ, सो भी भगवान करे है। थें कुण, कठा शूँ आया ?

कोऽहं कस्मात्कुत आयातः ।

(५७)

एक राजा रे तीन जागीरदार हा, वी पे'ली कई लायक नी हा, राजा हीज जमीन इज्जत धन वा बुद्धि (विद्या) दे'ने, वणा ने लायक कीधा, और परवाना भी कर दीधा। पर वणाँ में या शरत ही के, "जदी मुरजी व्हेवे, पाछा सब ले लिया जावे," ने एक दाण परीक्षा रे वास्ते पाछो वणारो सर्वस्व राजा लेवा लागो, जदी एक तो प्रसन्नता पूर्वक सब नजर कर दीधो और अरज कीधी आज्ञा में उपस्थित हूँ। जो काम करायो जाय वोही करूँगा।

जैसे राखो तैसे रहोंगो।
कबहुँक भोजन देत दया करि,
कदहुँक भूख सहोंगों।

श्री सूरदासज

क्यूँके आपरा हीज सब है, ने म्हूँ भी आपरो हीज हूँ। या शुण राजा वींने विश्वास कर आपणी नरी विभूति दे' दीधी और निकटवर्ती कर्यो, ने वो भी उपरोक्त विचार शूँ सब काम करतो रियो।

दूसरे कही अतरा दिन शूँ या म्हारी व्हे' गई। अगर देणी, तो पाछी क्यूँ लेणी, कई अणी शूँ आपरो भंडार तो भरे ही नी। खैर शरत है, कई कोशिश तो कराँ यूँ अनेक उपाय कर आखिर दे दीधी। जदी राजा वणी शूँ कुछ कम विभूति वणी ने पाछी दे दीधी। एक जो न्यावटा करावाने तयार व्हियो, ने कियो राजा रो अणी में कई है, या तो म्हारी है। म्हने कई वी नीं जाणे, के अणी नखे अतरो माल है। के म्हारे मूँडा आगे राजा कई कर शके। जदी हुकम व्हियो, के मार ज्यूत्याँ शूँ सब कोश कैद करदो। पर वो तो यूँ ही केवे, म्हारो राजा अन्याय शूँ ले लीधो। राजा=प्रभु; सात्विक; राजस; तामस = जागीरदार; विभूति = शरीर, बुद्धि आदि।

(५८)

प्रभु आनन्द मय, संसार भी आनन्द मय, जरा दुःख शूँ प्रभु सूचित करे के म्हने नीं जाण्यो अर्थात् भक्ति रो अभाव ही दुःख है। मालकाँ रा हुकम में उत्तर कीधो वीं ने दुःख तयार हो। हुकम माफिक काम करवा मे कई दुःख नी, म्हाँ कराँ अणो में दुःख, ने प्रभु करे ने करावे अणी में

सुख। क्यूँके प्रभु, दुःख कई काम करे, वो तो दयालु है। दुःख तो आपाँ कराँ, खोटा आपाँ, आछो प्रभु। सूरज तो उजाळो करे, अंधारो नी; ने वो तो विभु सूरज है, जदी दुःख कठा शूँ आयो, प्रकाश में अंधकार कठा शूँ। हाथाँ शूँ आँखाँ बन्द कर लीधी। श्री परमहंस भगवान्

(५९)

या तो पूरो असमर्थ (भक्त) व्हे' जाव, या (ज्ञानी) समर्थ व्हे जाव। योग वासिष्ठ

(६०)

ज्यूँ कोई भूल जाय, ने याद देवावे, यूँ ही शास्त्र सन्त, ईस्वर ने भूल गयो सो याद देवावे, और यूँ आसे नी आवे तो यूँ ने यूँ नी आवे तो केवे यूँ समझ, यूँ नी समझे तो यूँ समझ, ने मूरख केवे ई तो न्यारा न्यारा है। भला-मामूली सज्जन मनुष्य भी आपस में नी लड़े (विवाद नी करे) जदी महात्मा में विरोध केवे वणाँ री बुद्धि विरुद्ध है।

(६१)

प्र०—जणी गेला पे माथा शूँ चाले सो गेलो कठारो है ?

उ० परमारथ रो।

(६२)

तीन तरे' रा मनुष्य व्है' है-वक्ता, अणुकरण कर्त्ता, अनुभविता। वक्ता=वाळकरी नाँई गुण, के देवे; अनुकरण कर्त्ता=देखा-देखी करे, अनुभविता यथार्थ तत्व समझ लेवे।

(६३)

प्र०—छोड़वा शूँ मिले, ने पकड़वा शूँ परो जाय अस्यो कई है ?

उ०—आत्मा।

(६४)

एक दाण म्हने स्वप्न आयो, के एक तळाव भर्‌यो थको है। वणी में मँगर है, एक राजा है, एक ना'र भी है इत्यादि। वणी वगत म्हने या खबर ही के यो स्वप्न है। जदी एक आदमी म्हने पूछ्यो के यो पाणी कई वस्तु है, ने मँगर, ने राजा, ने ना'र वास्तव में कई वस्तु है ? जदी म्हें कियो।

रसोहमप्सु कौन्तेय।
झषाणां मकरश्चास्मि।
नराणाञ्च नराधिप।
मृगाणाञ्च मृगेन्द्रोऽहम्।

पाण्डवानां धनञ्जय ।
वृष्णीनां वासुदेवोस्मि ।
अथवा बहुनैतेन किंज्ञातेन तवार्जुन ।
विष्टभ्याह मिदंकृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥

जदी सामान्य मनख भी ई वचन के' शके है। क्यूँ के स्पप्न में म्हारे सिवाय दूसरो कुण है? जदी श्रीप्रभुरे वास्ने के' णो, के श्रीकृष्ण सारा ही किस तरे' व्हिया; कतरी विना विचार री वात है। विभूति वर्णन श्री गीताजी में है, वीं ने समझवा वास्ने या कल्पना कीधी।

(६५)

आँख शूँ आँख मिली रे' वे जतरे ना'र हमलो नी करे। पर नारी आँख मिलवा शूँ हीज मार न्हाके।

(६६)

श्री हरिनाथजी

एक स्थान अस्यो है, जठे आपाँ जनम्या ने वठे ही खेल्या, ने वठे ही मर्‌या, सुख दुःख देख्या हजाराँ कोश छेटी गया, पर वठा शूँ रत्ती भर भी नी हट्या। संसार कठे है? मन में; वारणे कुछ भी नी है। म्हें कठे हाँ? मन में, या पुस्तक कठे है?

मन में, मरणो है या भी मन में है, सब ही मन में है। एक ने जाणवा शूँ सब जाण में आवे सो मन। मन सिवाय कुछ नी है, सब मन है, मन में है।

(६७)

एक वस्तु रो भी ठीक ज्ञान व्हे' जाय तो सब संसार रो ज्ञान व्हे' जाय। एक वस्तु रो भी ठीक ज्ञान नी व्हे' तो सब रो ज्ञान नी व्हे'। चावे जणी रो ज्ञान व्हो' चावे पाना रो, चावे स्याही रो, चावे जणी रो व्हो' यो सब ही कृष्ण में है, कृष्ण आप में हीज है। ज्यूँ विचार किहयो' या पुस्तक है, कठे है? मन में। जमीन कठे है? मन में। मनख मरने कठे जावे? मन में। जदी आपाँ नी व्हाँ' तो भी ई तो सब रे'वे है, या भी मन में हीज है।

(६८)

ईश्वर री दयालुता।

एक राजा बड़ा प्रेम शूँ एक छोरा ने पाळ म्होटो कर वीं ने बागवान री विद्या में प्रवीण कर निज बाग रो अफसर कर तनख्वा पूरी कर दीधी। एक दाण राजा बाग में शे'ल करवा आया, जदी वणी

एक छोगो नजर कीधो, जी शूँ बड़ा प्रसन्न व्हे'ने वींने खूब इनाम दीधो। वणो राजा वचे भी श्री कृष्ण बड़ा दयालु है।

श्री भक्तमाल

ज्यूँ पिता पुत्र ने शिक्षा दे'ने वींरी वात पे प्रसन्न व्हे'। वणी शूँ भी कृष्ण कृपालु विशेष है, अर्थात् जीव रां तो कुछ भी नी है, सिवाय अव-गुण रे, वीं ने अपणाय आप वश में व्हे' जाणो ने बन्ध जाणो, छान छावणी, एँठवाड़ो खावणो, चाकरी करणी, या कणी शूँ व्हे' शके।

श्री भक्त माल

अस सुभाव कहुँ सुनो न देखौं
केहि खगेश रघुपति समलेखौं।

श्री मानस

अर्थात्—वृत्ति भारी व्हे'ती जाय। वृत्तिप्रकृति एक है और भारी वृत्ति में ठीक ज्ञान नी रे'वे।

तस्मै नमोस्तु निरुपाधिकृपाकुलाय
श्री गोपराजतनयाय गुरूत्तमाय।
यः कारयन् निजजनं स्वयमेव भक्तिं,
तस्यातितुष्यति यथा परमोपकर्तुः॥

श्री सनातन प्रभु.

(बिना ही कारण दयालु उत्तम गुरु श्री गोपराज नन्दराय रा कुमार श्री कृष्ण भगवान ने नमस्कार है। जो आपणा भक्तों शूँ स्वयं भक्ति करावे, ने अत्यन्त ही। प्रसन्न व्हे' जीं तरे' परम उपकार करवावाला शूँ प्रसन्न व्हे'।)

जो वो सारा ही संसार रा दुःख हीज आपाँ ने दे देवे तो कई वणी ने कोई सजा देवे। पर हर समय कृपा करणो आप ही रे पाँती आयो है। और दुःख तो आप वणाया ही नी, केवल दुख तो याददास्त है। ज्यूँ माँ वाळक ने बुलावे, ने वो नी आवे, जदी प्रेम में विकल व्हे'ने आपणा खोळा में वेठाय ने लाड़ करणो चावे पर मूर्ख वाळक रज में, कीचड़ में, लोटे कुबदां (कुबुद्धां) करे जीशूँ वीं ने तकलीफ व्हे'वे। जदी वीं ने आराम देवा वास्ते के'वे वठी ने शूँ हावू आवेगा। जदी वो भाग ने माता रे अङ्क (गोद) में आय बैठे। यूँ ही प्रभु दुःख शूँ भक्त ने बुलाय निज अङ्क में वैठाय बड़ा प्रसन्न व्हे' ने आज्ञा करे थूँ दुःख (हावू) शूँ डरे मती। थने बुलावा, रे वास्ते कियो हो, देख अब हावू कठे है, यूँ के' आपरे साथे राख सब देखाय देवे जीं शूँ भक्त निर्भय व्हे' जाय।

(६९)

प्र०—यो सब मन में व्हे'रियो है या बारणे ?

उ०—मन में।

प्र०—जो कोई तर्क वितर्क करने या बात साबित कर दे' के बारणे व्हे'रियो है।

उ०—तो या साबित कठे कीधी ?

बारणे व्हे'रियो है, या भी साबित मन में हीज व्ही'। जदी तो वणी रे समेत वणी रो निश्चय भी मन में हीज व्हे' गयो।

अणी शूँ या वेदान्त री बात निश्चय व्ही' के एक ही ब्रह्म है, वणी सिवाय कुछ नी। सब ही कल्पित है। सत् असत् भी कल्पना है। अणी वास्ते विचार करणो उचित है। विचार शूँ सत्य मिले है, विना विचारयाँ आपाँ रा हाथ शूँ आपणो हीज नुकशाण व्हे' जावे है।

आत्मैव ह्यात्मनोबन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।

श्री गीताजी

(७०)

प्र०—प्रकृति कई है ने पुरुष कई है ?

उ०—पुरुष प्रकृति एक ही है, जो आपाँ ने दीखे सो प्रकृति है। ने आपाँ देखाँ जो पुरुष हाँ।

प्र०—दृष्टा ने दृश्य एक किस त'रे व्हे' ?

उ०—ज्यूँ स्वप्न में जड़ ने चैतन्य एक व्हे'। या बात विचारवा री है। परोक्ष ज्ञान शूँ अपरोक्ष विशेष है। प्रकृति पुरुष कठे ही देशान्तर में नी है। आपाँ ही प्रकृति पुरुष हाँ, आपाँ में हीज देखणो चावे। न्यारी-न्यारी आकृतियाँ दीखे ज्या प्रकृति है, ज्या जीं ने दीखे ज्यो पुरुष है। वास्तव में आकृतियाँ कई वस्तु है? विचार ने देखवा शूँ पुरुष है; यो ही विचार श्री गीताजी में है। (सदसच्चाहमर्जुन) सत् है यो भाव भी पुरुष में, ने असत् है यो भी पुरुष में।

(७१)

जणी शूँ सब प्रमाण सिद्ध व्हे' वीं रे कणी प्रमाण री जरूरत है। जो सबाँ ने जाणे अर्थात् जणी शूँ सब जाण्यो जाय, वो कणी शूँ जाण्यो जाय ?

तिन्ह कहं कहिय नाथ किमि चीन्हे ।
देखिये रवि दीपक कर लीन्ह ॥

श्री मानस

जणाँ श्री आदि शक्ति रो पाणि ग्रहण कीधो वी ही श्री भगवान भूतभावन है ।

(७२)

आपाँ रो ही ज्ञान आत्म ज्ञान है । आपाँ कई हाँ? जो चीज दीखे है, वींरा देखवा वाळा आपाँ हाँ वा आपाँ शूँ दीखे और आपाँ शूँ भिन्न नीहै । वृत्ति एक ही है, पर वा भारी पड़े ज्यूँ ही स्थूलता प्रतीत व्हे' । ज्यूँ बम्बई में प्लेग सुण्यो जदी भी प्लेग रो ज्ञान व्हियो, पर वणी वगत वृत्ति री हालत सतोगुण री समझणी, ने पाड़ोश में प्लेग व्हेवे जदी वृत्ति रजोगुणी व्हेवे' ने खुद शरीर में व्हेवे जदी तमोगुणी; वाही वृत्ति ने वो ही प्लेग, तीन आकार धार लेवे ।

(७३)

प्र०—सब एक अद्वैत ब्रह्म है, जदी द्वैत प्रतीति क्यूँ व्हे' ?

उ०—शतरञ्ज रा लाल मोहरा राख ने खेल्याँ करो पछे एक दाण हरया (रंग रा) राख ने

खेलो, कतरी दाण हार जाओगा जदी हरथा शूँ खेल सकोगा।

(७४)

माया क्या है इसको अब तुम खूब तरह पहिचानो।
बिन पहिचाने बचा न कोई, यही सत्य कर जानो॥
कल्पना माया है भाई, बात नुक्ते की बतलाई।
ज्यों ज्यों मन में फुरे कल्पना, उस पर ध्यान लगाओ॥
द्रष्टा होकर देखो उसके, चक्कर मे मत आओ।
कल्पना बीज एक तिल भर बढे तो चढ़े गगन ऊपर॥
औरत औरत एक तरीखी क्या माता क्या नारी।
एक कल्पना के बल ने, दो करदी न्यारी न्यारी।
जब मन में मन लीन हुआ फिर तू ही तू प्यारे।
सकल जगत का कर्ता धर्ता फिरे विश्व को धारे॥
मन के मारे सब फिरते हैं जिसने मन को मारा।
सो ही सच्चा शूर जगत में हुआ गगन का तारा॥

श्रीमंत बलवन्तराव ग्वालियर पदमाला शूँ

अर्थ—नारी नारी एक समान है, परन्तु एक ने माता व एक ने पत्नी जाणा हाँ, सो माता पणो ने स्त्री पणो स्त्रीरे कणी जगा' है, यो भाव है।

ने यो भाव आपाँ में है। भाव रो ही नाम भाव है, बुद्धि है, अथवा यूँ समझणो चावे, के आपाँ (आत्मा) चैतन्य (ज्ञान स्वरूप) है, वणी में जतरी ज्ञान री तरङ्गाँ जणो २ तरे' शूँ पैदा व्हे' वणी रो ही नाम माया है। ज्यूँ शुद्ध ज्ञान में यूँ दीखणो के चित्त है या प्रकृति व्हीं'। फेर म्हूँ चित्त हूँ, यो सात्विक अहंकार व्हियो। अणी तरे' शूँ जतरी भावना है, चित्त में है, ने चित्त स्वरूप है, वी कतरो ही प्रकार शूँ मानी जाय ज्यूं तत्व दीखे सो कुछ भी नी है, भावना है; मनखभाव ही माया केवावे। वास्तव में मनख कई वस्तु है? चित्त सिवाय कुछ भी नी है। श्रीमत बलवन्त राव कृत लावणी विचारणी चावे। तात्पर्य-न्यारो न्यारो भाव जो प्रतीत व्हेचे सो माया है। ने यो प्रतीत आत्मा रो हीज स्वरूप है। ईं शूँ माया ने ईश्वर न्यारा नी है, ने अणीज-भेद भाव-प्रकृति शूँ संसार वण्यो सो भी प्रभु शूँ न्यारो नी है, ने भेद ने कोई न्यारी चीज मानणो ही बन्ध है जड़ता है, माया है, मिथ्या है, अव्यवसायात्मिका बुद्धि है। एक मानणो हीज मोक्ष आदि है। भेद भाव हीज कारण शरीर है, अणी शूँ सूक्ष्म ने स्थूल वण्यो है।

अणी री ही ज शास्त्र में-चित्त वृत्ति, ने पाँच प्रकार प्रसुप्तादि ने, त्रिगुण, ने चोईस तत्व, आदि-संज्ञा है। भाव ही भव है, भाव ही बन्ध मोक्ष कुल है। एकादश स्कन्द में उद्धवजी ने प्रभु आज्ञा करी के म्हारी माया ने अंगीकार कर, जतरा पदार्थ माने वतरा ही व्हे' शके है, वणारो अन्त नी है। (बहुशाखाह्यनन्ताश्च) गीताजी

अणी रो ही नाम संसार है। ज्ञान सिद्धान्त यो है, के भाव कुल मिथ्या है, सो भी सत्य है, भक्ति सिद्धान्त यो है के सब ही चैतन्य है, सो भी ठीक है, ने सांख्य जड़ चैतन माने सो भी ठीक है। कोई मत न्यारो नी है, सिद्धान्त सब रो एक है, याने "अनेक सयाने एक मत, एक अयाना अनेक मन री," के' णावत यूँ ही ज चरितार्थ व्हेवे है। भाव—चित्त सिवाय कुछ भी नी है, या बात विचार ने समझवा री है।

(५५)

शुणी चा'र नी चढ़णो।

ज्यूँ कोई के'वे चोर आया, परन्तु पत्तो लगावणो, कणी कियो कई चोर्यो, कठो गया, फेर दौड़वा री जरूरत ही नी पड़े। ज्यूँ—अहङ्कार है,

या कुण केवे। अहङ्कार आयो कठा शूँ, कीधो कई इत्यादि।

कोहं कस्मात्कुतआयातः का मे जननी को मे तातः ।

म्हूँ कुण हूँ, कणी शूँ हूँ, कठा शूँ आयो हूँ, म्हारी माता ने म्हारो पिता कुण है-यो विचारणो चावे अणी रो नाम वेदान्त राजयोग है। ने खूब दोड़ने थाक ने पछे रुकणो दूसरा साधन है। अहङ्कार ने मिटावा रे वास्ते विचार री आवश्यकता है, अहङ्कार री नी, क्यूँ के अविचार शूँ अहङ्कार व्हियो सो यो अविचार शूँ किस तरे, मिटे।

भक्ति सिवाय कोई उपाय परमारथ प्राप्ति रो नी है। भक्ति कई है, या जाणवा रे वास्ते शाण्डिल्य सूत्र ने श्री गीताजी रो मिलाण करणो चावे।

(७६)

मानस रामचरित भेज दीधो, मंगाई तो तुलसीकृत रामायण।

यूँ ही तुलसीकृत ने मानस एक ही है, पर भिन्न मानवा शूँ भय व्हियो। यूँ ही प्रभु, ने संसार एक है, पर न्यारा जाणवा शूँ भय व्हेवे।

(७७)

केनोपनिषद् ।

अणी नाम रो ही ज विचार करे तो ज्ञान व्हे' जाय "केन" "कणोशूँ" "अहं केन" 'म्हूँ कणी शूँ' जणावे है। जड़ 'केन,' 'त्वं केन,' 'इदं केन,' प्रत्येक पदार्थ रे साथे-स्मरण व्हे' तो रेवे तो, सब ही अणी आत्मा शूँ यो ही ज्ञान सनभ्काय "केन" में कियो है, भक्ति रो आछो प्रति पादन है।

(७८)

सब में एक ही आत्मा है। भोक्ता व्हेवा शूँ स्त्री पुरुष रा संयोग में भी भोक्ता एक ही है। स्त्री में भी भोक्ता है, पुरुष में भी, स्त्री और पुरुष दो ही भोग्य है अर्थात् समग्र विश्व ही भोग्य है, और चैतन्य भोक्ता है।

प्र०—जदी कोई दुःख भुगते, कोई सुख भोगे फेर एक किस तरे, व्हे' शके ?

उ०—सुख दुःख दो है पर भोक्ता दोनी व्हे' शके। आपाँ एक दाण बाळपणो भोग ने जवानी भोगाँ सो कई बाळक और हो, जवान और हाँ।

प्र०—परन्तु एक समय में दोई एक किस तरे' व्हे' शके। एक जन्मे वणीज वगत दूजो मरे जदी मृत्यु रो ने जन्म रो भोक्ता एक किस तरे' व्हे' शके ?

उ०—समय ने और जन्म मरण ने भुगतवावाळो एक होज है, जन्म मरण एक नी मानाँ तो कई हर्ज नी, परन्तु भोक्ता तो एक मानणो होज पड़ेगा। जन्म मरण बुद्धि में है, भोक्ता में नी है। भोक्ता बुद्धि रे द्वारा निश्चय करे है। कणी री एक आँख फूटे ने एक शूँ दीखे, जदी यूँ नी के' शकाँ के एक आड़ी शूँ दीखणो ने एक आड़ी शूँ नी दीखणो, दो ही एकमें किस तरे' व्हिया। अणी तरे' शूँ जदी एक में बुद्धि, मृत्यु रो, ने एक में जन्म रो कर शके है। परन्तु चैतन्य भोक्ता दो नी व्हे' शके। बुद्धिरा भेद शूँ आत्मा में भेद भासे है। अनुमान करलो, के ई सब शरीर एक चैतन्य रा है। वणी चैतन्य राजा रे अनेक नौकर है। वी अनेक काम करे, कोई चोर ने पकड़े, कोई साहूकार ने इनाम देवे, कोई लड़ाई रो प्रबन्ध करे,

कोई धर्माध्यक्ष धर्म रो प्रबन्ध करे, जणी शूँ राजा नराई नी व्हे' शके, परन्तु सब ही क्रिया राजा रे वास्ते है, ने राजा यूँ ही ज है। यूँ ही समग्र विश्व रो एक अद्वितिय भोक्ता श्री कृष्ण है। व्रज में श्रीकृष्ण सिवाय और कोई पुरुष नी है, सब ही वणाँ री स्त्रियाँ है।

श्री नरसिंहाचार्यजी

(७९)

व्यवहार शूँ व्यवहार शुधरे ने विगड़े। ज्यूँ ई रुपया म्हारा है, यो व्यवहार, कोई चोर ले' जदी विगड़ जाय, ने वणी रे (चोर रे) सुधर जाय, पर विचार शूँ व्यवहार परमारथ दो ही सुधरे। घणी खरी व्यवहार री वाताँ सत्य मानवा शूँ ने परमारथ शूँ मिलान करवा शूँ भ्रम व्हेवे। कोई के'वे देखाँ व्यवहार झूठो है, तो थाँणो हाथ काटाँ सो कई नी कटेगा ? अथवा दुःख नी व्हे'गा ? वी या, जाणे दुःख व्हे'णो ने हाथ कटणो परमारथ में है। (सत्य है), पर यूँ नी जाणे म्हारे भावे सब ही सत्य है। थापाँ ने तो उपन्यास रा भी सपना आवे। परन्तु कई महात्मा भी आपाँणी नांई हाथ

कटवाने सत्य माने है। वणाँ रे जदी अहङ्कार ही नी है, जदी हाथ पग कणो रा व्हियां। जदीज शिबि, दधीचि, हरिश्चन्द्र, रन्तिदेव, मोरध्वज आदि अणी शरीर रो कतरो निरादर सहज में कर्‌यो। सपनो जाग्या पे स्वप्न-दुःख नी व्यापे।

(८०)

प्र०—सब संसार कठे है ? बारणे है, के माँयने ?

उ०—बारणे जो विचाराँ तो मेवाड़ ही हद शूँ अजमेरो माळवो आदि अवार बारणे है, ने गिरवा शूँ मेवाड़ भी बारणे है, ने मायला गिरवा शूँ बारलो, ने शे'र शूँ मायलो गिरवो बारणे है, ने यूँ ही मोहल्ला शूँ शे'र, ने गवाड़ी शूँ मोहल्लो, ने घर शूँ गवाड़ी, ने शरीर शूँ घर, ने मन शूँ शरीर, ने बुद्धि शूँ मन, चैतन्य शूँ बुद्धि (प्रकृति) बारणे है। अणी व्यतिरेक रा हिसाब शूँ सब ही बारणे है। केवल आत्मा चैतन्य री अपेक्षा सब ही बारणे है। परन्तु एक तरे' शूँ सब ही माँयने है। ज्यूँ बुद्धि (प्रकृति) चैतन्य में है। क्यूँ के चैतन्य रा आधार पर बुद्धि है, ने यूँ ही मन

इन्द्रियाँ आदि मव ही विरव माँयने है, यो अन्वय विचार है। अणी अन्वय विचार रो नाम भक्ति ने व्यत्तिरेक रो नाम ज्ञान है। व्यत्तिरेक विना अन्वय नी व्हे' शके, सो ज्ञान भक्ति रो साधन है। पंच कोप वेदान्त में, ने प्रकृति रो साँख्य में वर्णन है।

(८१)

"मिथ्या" (झूँठ) यो भाव-सत्य है, वा मिथ्या। अगर 'झूँठ' यो भाव सत्य है, जदी तो झूँठ कई नी व्हियो। क्यूँ के मिथ्या में मिथ्या पणा रो अभाव ही सत्य व्हियो। झूठ है तो झूठ अभाव रो नाम है, सो झूठ कई वस्तु व्हे' ही नी। अणी शूँ भी सत्य ही साबत व्हियो। भाव—सत्य ही (प्रभु) है।

श्री स्वप्नेश्वरकृत शाण्डिल्य सूत्र री टीका

प्र०—जद यो संसार सत्य है वा झूठ ?
उ०—सत्य है, और सत्य रो अर्थ चैतन्य ब्रह्म ईश्वर है।
प्र०—तो मनुष्य मर जाय तो सत्य व्हे' तो जद तो वीं रो नाश नी व्हे'णो चावे, ने महा

प्रलय में कोई नी रे'गा अणी शूँ संसार असत्य व्हियो ?

उ०—कोई नी रे'गा यो भाव सत्य है, या मिथ्या। मिथ्या है, जदी तो खुद मंजूरी व्हे' गई, ने सत्य है, जदी यूँ क्यूँ के'णो के मिथ्या है। मतलब, मरणो ने नी मरणो यो भाव है। ज्यूँ आविर्भाव, तिरोभाव। अणी वास्ते भाव रो हीज विचार करणो, अणी भाव सिवाय अन्य भी कोई वस्तु है।

प्र०—वेदान्ती संसार ने मिथ्या के' वे है सो ?

उ०—वेदान्ती, ने भक्त, दो नी है। वी मिथ्या भाव ने मिथ्या के' वे, जीं शूँ पूर्वोक्त ही सत्य रो प्रतिवादन करे है।

प्र०—जदी तो म्हें भी संसार ने सत्य जाणाँ हाँ सो बन्ध क्यूँ व्हे' ?

उ०—आपाँ संसार ने सत्य नी जाणाँ हाँ, जाणता तो मृत स्त्री आदि रो दुःख नी व्हे' तो और मिथ्या जाणता तो भी नी व्हे' तो, आपाँ हाल कई नी जाणाँ हाँ, कुछ भी जाणाँगा तो दुःख नी व्हे'गा। आश्चर्य यो ही ज है,

के लोक में हाेश में आवा पे दुःख व्हे' पर-
मारथ में बेहोशी में दुःख व्हे' ।

(८२)

प्र०—श्री गीताजी में भगवान विश्व रूप रा दर्शन दीधा जठे अर्जुणजी क्यूँ घबराया, ने श्री भगवान यूँ हुक्म क्यूँ कीधो के यो दर्शण तो बड़ो दुर्लभ है, दुर्लभ दर्शण में दुःख क्यूँ ?

उ०—सर्वात्म भाव, अनन्य भक्तिमें एक आपणो इष्ट ही दीखे, नानात्व नो दीखे । अणी री ही नाम पराभक्ति है । परन्तु विश्व रूप में नाना पणो दीखवा लाग्यो, जदी अर्जुन जी ने निज स्थान यूँ छूटवा रो भय व्हियो और ईश्वर रो ने विश्व रो दोई भाव परा भक्ति नखे पहुँचवावाळा ने व्हियाँ करे है । ईं यूँ अणी री प्रभु तारीफ करी के अश्यो भक्त म्हने प्राप्त व्हे' जाय, ने नानात्व छूट जाय सो ही १२ वाँ अध्याय में स्पष्ट व्हो' के केवल एकत्व वाळो उत्तम या नानात्व में एकत्व भाव व्हेवे सो उत्तम ? जदी हुकम दीधो केवल एकत्व में शुरू में क्लेश ज्यादा

न्हेवे, ने विश्व रूप में सुगमता है, या ही वात कतरी ही दाण अर्जुनजी पूछी—

"सन्यासः कर्मणां कृष्ण पुनर्योगंच शंसति" (अ५ श्लो १)
और "व्यामिश्रेणेव वाक्येन" (अ० ३ श्लो० २)
"सन्यासस्तु महावाहो ।"

श्रीगीताजी

ने पाछा यूँ ही उत्तर मिलता गया के सांख्य, योग, एक ही है पर

"सन्यासस्तु महा वाहो दुःखमाप्तुमयोगतः"
(अ० १२ श्लो० ६)
"क्लेशोऽधिकतमस्तेषा" (अ० १२ श्लो० ५)
"नै कर्मण्ये वाधिकारस्ते ।" (अ० २ श्लो० ४७)
"एपातेऽभिहिता सांख्ये ।" (अ० २ श्लो० ३९)
ने "स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य ।" आदि शूँ सगुण

भक्ति री सहज प्राप्ति ने निर्गुण री कठिनता वताई गई है । "सिद्धिमाप्नोति" । "योगा रूढ़ स्तदोच्यत्ते" शूँ पराकाष्टा रो वर्णन है, ने "तत् स्वय योग संसिद्धः काले नात्मनि विन्दाति" इत्यादि शूँ विचार करवा शूँ स्पष्ट है । आपाँ ने भी अर्जुण जी री नांई विश्व

रूप रो नाना भाव शूँ घबरावणो चावे। क्यूँ के यो काल रूप प्रभु रो है।

"कालोऽस्मि लोक क्षयकृत्" ११ वाँ अध्याय। श्रीगीताजी इत्यादि शूँ

प्र०—जदी कई अर्जुणजी ने एकत्व भाव हो?

उ०—श्री कृष्णार्जुन, नरनारायण अवतार है, अणी शूँ वणारो एकत्व भाव सिद्ध है।

प्र०—जदी शोक मोह क्यूँ?

उ०—लीला शूँ उपदेश रे वास्ते अथवा नर नारायण रो भाव जीवेश्वर है श्रोर ज्ञान स्वरूप व्हेवा शूँ दोई एक है। परन्तु माया ने अंगीकार करवा शूँ जीव ने मोहादि व्हेवा लागा, जदी प्रभु आपरो ज्ञान देवा रे वास्ते माया "काल" स्वरूप रा दर्शण दे' जीव ने वणी में लय ने आत्मा में अभयता देखाई, सो अर्जुणजी ने व्हो' ने वणी वड़भागी ने हीज व्हे' है, जदो अर्जुणजी कियो अबे वो ही पूर्व रूपमालुप सौम्य दर्शन देवे। म्हूँ वीने अबे सखा यादव इत्यादि माया रा भाव (लीला) शूँ नी देखूँगा, किन्तु स्तुत्य एक सर्वव्यापक देखूँगा, अबे निज माया ने संहार

करजे। अणो शूँ म्हूँ घबराऊँ हूँ, सौम्य स्वरूप रा दर्शण चाऊँ हूँ। इत्यादि माधुर्य ऐश्वर्य चायो।

(८३)

प्र०—संसार में आश्चर्य कई है ?

उ०–श्रीमद् भगवद्गीता तो है ने लोग नरक में जावे। सूर्य नारायण रे आगे अन्धारो दीखे, अणी सिवाय कई आश्चर्य व्हे' शके। श्रीगीता द्वारा भगवान आपाँ शूँ बोले, ने आपाँ कानाँ में आँगळ्या देवाँ। परन्तु मृत्यु रा वचन, संसार वासना, प्रेम शूँ शुणाँ। अणी सिवाय कई आश्चर्य व्हे,' के श्री गीताजी हाथ में है, ने तरवा रो उपाय हेरताँ फिराँ। ज्यूँ कोई नाव में सुख पूवक बैठो थको पाणी वच्चे कूद पड़े, के या नाव तो आछी नी है, ने सात सौ मनख बचावा री कोशीश करे ने हेलो पाड़े ने एक आदमी तरवार हाथ में ले ने के' वे, के थने मार न्हाकूँगा अब आव ने आपणे देखताँ कतराई ने मार न्हाके, सो वणी नखे मरवाने तो चल्या जाणो ने सात सौ मायला एक री भी कयो नी

मानणो, अणी सिवाय कई अचम्भो व्हे' के सपना में पाई गम गी, जींरो जन्म भर विचार करणो, ने जागता में पारस मिले वणी वास्ते एक घडी भी विचार नी करणो संसार में सब ही अचम्भो है। कोई साधक ज्ञान देणो चावे, ने वणी नग्वा शूँ कोई ज्ञानले'णो चावे सो अपाढ़ में करपा नखां शूँमक्यो लेणो चावे है। अर्थात् खेत नी हाँक्यो ने मक्या री अभिलाषा कीधी। चो तो खेत हाँकवा रो वगत है, मक्या खावा रो नी। जूना पाणी री मक्की तो दूजी मक्की रे पे' लो ही खाय जाय है, पर मे'नत विना तो फल खावणो खवावणो तो मन मोदक हीज है, ने खेत पाक्याँ केड़े तो एक-एक कण रे नराई मक्या मिले।

विज्ञापन

(८४)

संसार अद्भुत रस रो नाटक है। क्यूँ के सब ही आश्चर्य मय है। जो नी देख्यो नी शुण्यो सो सब अद्भुत देखे।

"*वर्णि कवन विधि जाय*" श्रीमानस
"*आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेनम्*" श्रीगीताजी

"शृंगार यूँ है, के प्रकृति पुरुष रो संयोग ही संसार है।

"*यावत्सञ्जायते किञ्चित्*"
"*क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्*"
श्रीगीताजी

वीर रस यूँ है, के, देवी आसुरी सम्पत्ति में लड़ाई व्हे'ती ही रे'वे।

रजस्तमश्चाभिभूय सत्वं भवति भारत ।
रजसत्वं तमश्चैव तमः सत्वं रजस्तथा ॥
श्रीगीताजी

एक री पराजय में वणी हारया थका रा पक्ष वाळा नें करुणा व्हे' हीज; और भयानक पणो तो अणी री वियोग में व्हेवे हीज है।

अवश्यं यातारश्चिरतरमुषित्वापि विषयाः ।
श्री भर्तृहरि शतक

बीभत्स तो घणो हीज निकट है अर्थात् शरीर। आज काल घणा खरा भूल शूँ बीभत्स ने

श्रृङ्गार रा नाम शूँ बतळावे है। हास्य रस तो मुख्य चीज ही ज है (*मायाहास*)

श्रीमानम

रौद्र रस तो रति री शाड़ी ओढ्याँ रे' है, सो मौका पे प्रकट व्हे' जाय है। "*कामात् क्रोधोभिजायते*" शूँ नव रस मय संसार है। संसार रूपी ग्रन्थ घड़ो है, जीं शूँ देख वा री फुरसत नी लागे, तो "नवरस सार" नाम री पुस्तक, जींरो दूजो नाम "शरीर" है, बहुत निकट मिले है, वा देख लेणी। अणी में भी खबर नी पड़े तो "मानस" "मन" सुलभ मूल्य है, ने मनुष्य शरीर मिलवा रा उत्सव में सत्संग प्रेम में विना मूल्य मिले है। परन्तु शर्त अवधि या है के "*यावत्स्वस्थमिदशारीरमरुज यावज्जरा दूरतः*" (जठा तक शरीर यो स्वस्थ है, नीरोग है ने बुढ़ापो दूर है) और प्रेस रो मैनेजर चावे तो हर वगत दे' शके है। परन्तु प्रत्येक ग्राहक ने अणी नोटिस द्वारा सूचित करवा में आवे है, के यो अमूल्य समय हाथ शूँ नी ग्वोवे। समय निकळ जावा पे खाली पछतावणो पड़ेगा। पछे प्रेस अणी बात रो जिम्मेदार नी व्हे'गा। या पुस्तक बड़े भारी कवि

आपणी पूरी बुद्धि रो परिचय देवा रे वास्ते ही मानो वणाई है। विशेषता या है, के "नवरस संसार" और "नवरस सार" (शरीर) रो भी अणी छोटी सी पुस्तक में खुलासो आय गयो है। विश्वपति नाम रा कवि री या कृति है, जी बड़ा प्राचीन और प्रसिद्ध कवि है। प्रेस री मुहर (सतो गुण) देख पुस्तक खरीदवाशूँ धोखो नी व्हे'गा। विना मुहर री पुस्तक चोरी री समझी जायगा, ने ग्राहक लाभ री आशा में हानि उठावेगा। "विज्ञेपु किमधिकम्"। ठिकानाः-मैनेजर सत्सङ्ग प्रेस, सुबुद्धिपुर, शान्ति अद्धा रेलवे विचार नं० ४४२ में अणां कवि री कुछ तारीफ़ है।

(८५)

अनेकता रो निश्चय

मनुष्य ने बाळक पणा शूँ ही अनेकतारो वुद्धि कर दीधी जाय है, दूज्यूँ वाँ ने एक ब्रह्म रो भी ज्ञान नी व्हे' शके। बाळक पणाँ शूँ हरेक वस्तु रो, रूप रो, अर्थात् आकाररो ज्ञान व्हेवे। वणी रूप रे साथे नाम री ज्ञान कराय दीधो जावे। ज्यूँ या गाय, भैंस, कूलको दीवाण्यो। जदी वणी री वुद्धि

ठीक व्हे' जदी वीं ने समझ लेणो चावे, के, ई, फलाणी वस्तु रा परिणाम है। वास्तव में गारो है, ने गारा शूँ न्यारा-न्यारा नाम व्हिया। पर घणा खरा तो बाळपणा रा अभ्यास शूँ वणी विना विचार री बुद्धि ने जन्म भर नी छोड़े ने जन्म शूँ जन्मान्तर पावता रे'वे।

> "व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन।
> बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम्॥"
>
> —श्री गीताजी

(८६)

प्रार्थना—

हे प्रभु जो म्हूँ स्वतन्त्र हूँ, जदी तो अहंकार शूँ म्हने दुःख नी व्हे'णो चावे। क्यूँ के साँचा ने दुःख क्यूँ, ने आपरे आधीन व्हे' ने अहंकार करूँ, तो भी दुःख क्यूँ, पराधीन ने?

साधन तो ब्रह्म विद्या की प्राप्ति में यूँ है, ज्यूँ श्री (जानकीजी) री प्राप्ति में वाँदरा, । भाव-राक्षसाँ रो तो वाँदरा भोजन है। परन्तु प्रभु वणां ने निमित्त करने लंका विजय कीधी। यूँ ही प्रभु ही करेगा। जीवज्ञानयोग।

'नर कपि भालु अहार हमारा'
'राम प्रताप प्रबल कपि जूथा'

अर्थात् महा मोहरे आगे ज्ञान वैराग कई ठे'र शके।

'एक-एक जग जीति सक, ऐसे सुभट निकाय'

क्रोध लोभ द्वेपादि अनेक है, के एक ही ज, अनेक जन्म तक नी छोड़े। परन्तु प्रभु री कृपा शूँ वणाँ में सामर्थ्य आवे जदी राक्षस भागे ई शूँ ज्ञान वैराग्य रो घमण्ड नी करणो।

'शिव चतुरानन जाहि डराई।
अपर जीव केहि लखे माही॥'

श्री शंकर भगवान काम ने नाश कीधो। परन्तु क्रोध व्हे'गयो, ने नारदजी काम क्रोध ने नाश कीधो, पर अहंकार आय गयो, ने अहंकार शूँ पाछा काम क्रोध आय गया। अणी शूँ अहंकार ही सब शूँ दुष्ट है, ई ने मिटावा रो वार-वार प्रभु ने प्रार्थना करणी। प्रभु सिवाय ई ने कोई नी हटाय शके।

(८७)

चित्त वृत्ति रबड़ री पीपाड़ी (बाँकफाँ रे बजा-

वारी चीज) जशी है। ज्यूँ वणी में फूँक भरे म्होटी व्हे'ती जाय, ने (फूँक) निकळे जदी पाछी भेळी व्हे'ती जाय। परन्तु फूँक भरने, वा निकाळ ने, तोलवा पे बोझ में फरक नी पड़े। परन्तु दीखत में यूँ दीखे जाणे या फूली पोपःड़ी संकुचित शूँ कतराई गुणी भारी व्हे'गा। यूँ ही वृत्ति में अन्तर दीखवा पे भी एक रस ही रे' है। क्यूँ के हवा बारणे रे'वे जतरे संकुचित, ने माँय आवा पे विस्तृत दीखे। यूँ ही वासना मन में शूँ निकळे जदी तो संकुचित ने माँय भरावे जदी विस्तृत दीखे। जणी तरे' एक सामान्य व्यक्ति रे नखे राजा वेप वदल ने वैठो व्हे' ने वो निःशंक वाताँ कर तो जाय। परन्तु ज्यूँ ज्यूँ वीं ने राजा रो ज्ञान व्हे' तो जाय, त्यूँ त्यूँ वृत्ति फूलती जाय। अहंकार छूटवा शूँ फूटी पीपाड़ो ज्यूँ पाछी हवा वासना नी भरावे।

(८८)

रावजी री व्हापसी

एक म्होटा ठिकाणा रा रावजी हा। वी निसन्तान परलोक वासी व्हिया। जदी वणाँ रा

भाई छेटी रा छोटा गाम रा ठाकर हीज हा। वणाँ ने बैठाया, ने रावजी रो करन्यावर कीधो। जदी ल्हापसी उगरी जणी ने मेलवा री लोगाँ इरादो करवा लागा के कठे मेलाँ। जदी नवा रावजी कियो के म्हूँ शुवूँ जठे ऊँचा कड़ा है वणाँ में कढ़ाई बाँध दो। जदी कामदाराँ वणाँ ने शूता रा शूता उठाया ने पाछा वणा रे गामड़े मेल आया; के छाती पे ल्हापसी राखने शूवे जो ओछा मन रो ठाकर कई काम रो। यूँ ही विषय (रूपी) ल्हापसी ने जो जीव ब्रह्म ऐक्य री वगत भी छाती पे राखे वो पड़े हीज।

कवि हि अगम जिमि ब्रह्म सुख अहमम मलिन जनेषु।

श्रीमानस

(८९)

दारू वाळी चुप नी करणी

दारू नी पीवा वाळी जातरा नराई जणा एक मकान में भेळा व्हे'ने छाने दारू पीवा लागा। जदी वणाँ नक्की कीधी दारू पीने बोलवा शूँ मनख जाण जाय सो चुप रे'णो। जदी दारू रो नशो आयो जदी एक आदमी कियो चुप फेर दूसरे, तीसरे,

यूँ ही आखा मकान में चुप-चुप प्रकट व्हे' गई। यूँ ही ब्रह्मोपदेश एक दूसरा ने के' देवे। परन्तु आप नी आचरे जदी निष्फल व्हे' जाय, ज्यूँ लिफाफा पोस्टकार्ड रो कागद फिरतो फिरतो जणी रा नाम रो व्हे' वीं ने ही वणी रो अनुभव व्हे'ने हाथ में तो नराँ रे ही निकळे।

'पर उपदेश कुशल बहुतेरे।
जे आचरहिं ते नर न घनेरे॥'

श्रीमानस

(९०)

अर्जुणजी री आवश्यकता है।

श्रीगीताजी में श्रीकृष्ण भगवान रा वचन यूँ रा यूँ विद्यमान है। परन्तु वणाँ ने समझे अश्या अर्जुण री आवश्यकता है। श्री कृष्ण री आवश्यकता तो श्री भगवद्गीता पूरी कर रो' है। परन्तु अर्जुन री आवश्यकता पूरी कुण करे ? साधक मुमुक्षु।

श्री ज्ञानेश्वरी

"ध्यायतो विषयान् पुंस" इत्यादि

मनन करवा शूँ वणी में आसक्ति व्हे' जाय

है। ज्यूँ शिकार रो, शतरंज रो, पोलु, आदि रो। परन्तु जणी रो ध्यान नी कीधो व्हे वणी री आसक्ति नी व्हे। ज्यूँ वाण्या ने शिकार री वगैरा। तात्पर्य-ध्यान शूँ शौख ने, शोख शूँ शोक व्हे है। अणी वास्ते विना मनन री वस्तु जशी है, वशी ही मनन री है। परन्तु वीं में हर्ष शोक नी व्हे, ने वीं में दोई है।

परमार्थ विचार

छठो भाग
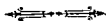
(१)

"सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो ।
मत्तः स्मृति ज्ञानमपोहनञ्च ॥
वेदैश्च सर्वैरह मेववेद्यो ।
वेदान्तकृत् वेदविदेव चाहम् ॥"

—श्री गीताजी

'देश काल दिशि विदिशि हु माही ।
कहहुँ सो कहा जहां प्रभु नाहीं ॥
राम कीन्ह चाहहि सोई होई ।
करे अन्यथा अस नहिं कोई ॥'

—श्री मानस

'जड़ चेतनहिं ग्रंथि परि गई
चेतन मे जड़ यह गाठ पड़ गई ।'

—श्री मानस

अर्थात् जड़ कोई अन्य वस्तु है, अशी चेतन में स्फुरणा व्हे' गई। सो वास्तव में झूठी है, तो भी छूटवा में कठिनता है। क्यूँके भे'म री दवा लुकमान हकीम नखे भी कोय नी, सिवाय स्वयं ही विचारवा रे, और जड़ ने चेतन रे माँयने गाँठ पड़गी'। यो यूँ नी व्हे' के एक सरीखी वस्तु री गांठ पड़े, विपरीत में नी। ज्यूँ डोरा डोरा में, डोरा ने भाटा रे बचे गाँठ नी पड़े। यूँ ही वृत्ति ही री वृत्ति में गाँठ पड़ गी' वींरो नाम जड़ व्हे' गयो।

(२)

जो दूसरा री निन्दा स्तुति नी करे, वीं ने भी निन्दा स्तुति शूँ हर्ष शोक नी व्हे' भावना रा अभाव शूँ।

श्री महा भारत शान्ति पर्व

(३)

शे'रबीन रा पाना ज्यूँ संसार है

शे'रबीन रा पाना पे सब चित्र बरोबर हीज मंड्या व्हे' परन्तु शे'रबीन पे देखवा शूँ छेटी नजीक दीखे। यूँ ही प्रभु में सब सम है, परन्तु

मायाशूँ न्यारा न्याराछेटो नजीक दीखे। ज्यूँ सब हो मन में व्हेवा पे भी कोई नजीक कोई दूर, कोई माँयकोई बारणे दीखे।

(४)

अतिपुराण बहु कहे उपाई।

छूटिन अधिक २ अरूभाई॥

अहङ्कार शूँ वी उपाय करवा शूँ "*जीव हृदय तम मोह विशेषी*" हृदय = बुद्धि, तम = अहङ्कार सो चित्त ने गुरूपदिष्ट मार्ग शूँ एकाग्र करवा में तम प्रत्यक्ष व्हे' वीं ने धूम्री के'।

(५)

'अहं' कल्पना मात्र है।

जणी तरे' शूँ रूँख रा पाट्या, ने पाट्या री पालकी, कल्पी जाय है। वास्तव में वो रूँख है। यूँ ही पञ्च तत्त्व रो शरीर 'अहं' रा नाम शूँ, वो ही चैतन्य कल्पे है। न्यारा देखवा शूँनी, पालकी नी, 'अहं' मिलाया थका री संज्ञा पाड़वा वाळो चैतन्य।

श्री विष्णु पुराण

(६)

"एक के प्रमाद ते अनेक याद आये हैं।"

(७)

अभ्यास करवा में चित्त रोकवा में अर्थात् चित्त ने ब्रह्म में लगावती वगत मन खंच ने जबरदस्ती विषय में चल्यो जाय तो घबरावणो नी। क्यूँ के यो अभ्यास रो ही कारण है, के रोकताँ रोकताँ मन विषय में परोजाय है, यूँ ही अभ्यास शूँ रोकवा पे भी ब्रह्म में, विषय में, शूँ जावणो साबित व्हे'। सो अभ्यास में अणीज प्रमाण शूँ दृढ़ श्रद्धा राखणी चावे।

(८)

म्हूँ ब्रह्म ने जाणणो चाऊँ हूँ।

अणी प्रश्न शूँ जाणी जाय, के एक दूसरा चैतन्य री जरूरत है। जदी पाणी पृथ्वी आदि तत्व भी दूसरा नी मिले, तो दूसरो चैतन्य कठा शूँ आवे। श्री शंकर भगवान हुकम कीधो है, के जो प्रमाण शूँ ब्रह्म ने जाणणो चावे, वो लकड़ो शूँ वाश दी ने बालणो चावे, अर्थात् "विज्ञानतारंकेन विजानीं यात्" जाणे जीने कणी शूँ जाणे।

(९)

प्र०—कूटस्थ प्राप्ति किस तरे' व्हे' ?

उ०—युगल स्वरूप श्री राधाकृष्ण री प्रतिमा रो ध्यान करणो, जणी में ध्यान व्हे' वो कूटस्थ

—श्री बालमहात्मा

'जग में दो तारक हैं नीका,'
"क्लेशोधिकतर स्तेषाम्"

(१०)

एक आदमी दो तसवीराँ देख रियो हो। वणी वगत एक दूसरो आदमी आयो ने पूछ्यो। कई देखो हो ?

वणी कियो—अणा दो तसवीराँ में म्हारी तसवीर कशी है, या देख रियो हूँ।

जदी वणी कियो–या तसवीर प्रत्यक्ष बिलकुल थाँरी मिले है। नी मानो तो काच में थाँणो मूँडो देखलो, ने पछे तसवीर देखो सो कई भी फर्क नी दीखेगा।

जदी वणी कियो–के या ही ज तसवीर म्हारी है, यूँ क्यूँ मानूँ। पाँच रंग अणी में ने पाँच ही रंग अणी में, फेर या म्हारी ने या देवदत्त री क्यूँ ?

वणी कही-हाथ पग चे'रा में फरक है।

वणी कही, हाथ पग तो अणी में नी दीखे सिर्फ पाँच रंग अठोरा अठी लिख राख्या है।

दूसरे कही-जणी तरे' शूँ यो थाँणो शरीर है। यूँ ही या थाँणी तसवीर है।

पे'ले कही-म्हने तो अणी में भी सन्देह है, के यो होज म्हारो शरीर है, वा यो सनमुख बोलरियो सो म्हारो शरीर है।

जदी वणी एक सुई चुभाई ओर कियो अणो सुई चुभवा रो दुःख थाँने व्हियो, जी शूँ यो ही ज थाँणो शरीर है।

जदी वणी सुई पाछी दूसरा रे चुभाय ने कियो दुःख तो (दोयाँ ने) एक ही सरीखो व्हियो, फेर एक ने ही ज म्हारो शरीर किस तरे मानूँ। कई अणी शरीर ने सुई शूँ दुःख नी व्हियो?

वणी कही-पे'ली थाँने व्हियो, पछे म्हने व्हियो अंतः करण रा भेद शूँ।

जदी वणी कही-अगर पे'ली अणी (दूसरा रा) शरीर रे चुभावे जदी तो यो भी म्हारो मान्यो जातो। ई कई नियम, के पे'ली चुभे सो दूसरो ने, पछे चुभो सो दूसरो।

तात्पर्य—सव रो साक्षी चैतन्य म्हूँ एक ही हूँ और म्हारी कल्पना (माया) रो पार म्हने भी नी आवे, परन्तु म्हारे सिवाय कल्पना रे अन्य आश्रय भी नी है। ज्यूँ काच में प्रतिबिम्ब यूँ ही म्हाँ में कल्पना। ज्यूँ स्वप्न पुर अत्यन्त विस्तृत है, परन्तु म्हारा शूँ बड़ो कोय नी।

(१०)

सतयुग में एक दाण श्री नारदजी मनुष्याँ ने कियो के कलियुग रा मनुष्याँ री ऊमर नीयत नी व्हे'गा। और वणाँ मनुष्याँ ने मौत भी याद नी रे'गा। या शुण वणाँ सतयुग रा मनुष्याँ ने अत्यन्त अचम्भो विहयो, और कियो के साक्षात् देवऋषि रा वचन है, जीं शूँ मानवा योग्य है, दृज्यूँ या वात असम्भव दीखे, के अणचींती मोत भी मनुष्याँ ने याद नी रे'।

सतो गुण युक्त मनुष्य सतयुग रा, नारदजी प्रत्यक्ष प्रमाण।

(१२)

एक मुमुक्षु कणीं महात्मा नखे जाय कियो, म्हने ज्ञान कदी और किस तरे व्हे' है ? जदी

महात्मा आज्ञा कीधी, थने अज्ञान कदी ने किस तरे व्हे' है। अतराक में होज, वो मुमुक्ष जीवन मुक्त व्हे' गयो। भावः—ज्ञान तो सदा ही शूँ है ही ज, अगर ज्ञान जो नी व्हे' तो, यो प्रश्न किस-तरे करतो, ने जो थूँ के' के ब्रह्म ज्ञान, तो ब्रह्म तो ज्ञान ही ज है। ज्ञान शूँ ब्रह्म कुछ भिन्न नी है और अज्ञान ज्ञान रा अभाव रो नाम है, सो ज्ञान रो अभाव जो मान्यो' तो अज्ञान रो अभाव पे'ली ही व्हे' गयो। ज्ञान विना अज्ञान रो व्हे'णो ही साबित नी व्हे'। यावत् जगत् ज्ञान मय है, अज्ञान कोई वस्तु नी व्हे'। यावत् जगत ज्ञान मय है अज्ञान कोई वस्तु ही नी।

(१३)

कोई के' के आचार्य प्रभु संसार ने मिथ्या आज्ञा करे है, सो या बात झूठी है। श्री शङ्कर भगवान तो अज्ञान (मिथ्या) ने ही ज मिथ्या हुक्म करे है, सो संसार मिथ्या ने ब्रह्म सत्य, यो ही भगवान रो सिद्धान्त व्हे' तो द्वैत मत व्हे' गयो। क्यूँके एक मिथ्या ने एक (ब्रह्म) सत्य, ने आप तो अद्वैत आज्ञा करे है, अणी शूँ जाणी जाय के प्रभु तो कणी ने ही मिथ्या हुक्म नी करे है।

(१४)

"वेदान्त रो रीत शूँ ब्रह्म रो पतो कई नी लागे, अणी शूँ यो शून्य वाद है" यूँ भी घणा खरा अविचारी के' है। परन्तु भलाँ, जणी शूँ आप री मूर्खता रो पतो लाग रियो है, वणो रो पतो किस तरे लगावा री इच्छा है "*देखिय रवि कि दीप कर लीने*" ब्रह्म रा जी सत्‌चित् आनन्द स्वरूप कथन है, वणो ने तो नो विचारे, ने कल्पना रो निषेध कीधो, जी शूँ शून्य समझ लीधो, सो आपणी बुद्धि रो दोष है। भगवान भाष्यकार भास्कर तुल्य (सूरज रे समान) है। वणाँ ने अंधकार तो दिवान्ध ने दीखे। हाँ, श्रवण मनन निधिध्यासन विना जो समझ में नी आवेतो, वो आपणी बुद्धि रो दोष है। परन्तु परम उदार दया रा समुद्र शङ्करावतार पे दोष भूल ने भी आरोपण नी करणो। यूँ ही सब परमेश्वरावतार श्री रामानुजाचार्य, श्री माधवाचार्य, श्री वल्लभाचार्य आदि अनेक अवतार व्हिया ने व्हे'तारे' गा।

"*यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।*"

श्री गीताजी।

वर्णां में तर्क चलाय निन्दा करणो बुरो है। अणाँ कुछ भी अनुचित आज्ञा नी कीधी। केवल अधिकारी परत्व उपदेश है, ने अधिकारी ने जणी सम्प्रदाय रो व्हे' शोक मोह शूँ मुक्त व्हे' जाणो चावे, ने शोक मोह शूँ मुक्त नी व्हे' जतरे वणी ने या ही ज समझणी चावे, के हाल म्हारे अणी सम्प्रदाय रा सिद्धान्त ठीक समझ में नी आया। यो ही सब सम्प्रदायाँ ने एकता में लावा रो सूत्र है। अगर अणी माफिक सबाँ रा विचार व्हे' जाय तो सबाँ रा मत एक व्हे' जाय।

मन उपजी जग कर पड़े उपजी करे न साध ।
राम चरण उपजे नहीं, ज्याँरा मता अगाध ॥
वाद विवाद विष घणा, बोले बहुत उपाध ।
मौन गहे सब की सहे जिनका मता अगाध ॥
मुख शूँ भजे सो मानवी स्वासाँ भजे सो साध ।
मन शूँ भजे सो सन्तजन, सुरता मता अगाध ॥ ३ ॥

(१५)

प्र०—संसार रा पदार्थ कई है?

उ०—विष रा खेलकराया है, ज्यूँ खांड व्हेवे। अणाँ री आसक्ति राखणो ही ज अणाँ ने खाणो है।

(१६)

कर्मण्यकर्म य पश्येत् ।

कर्म में अकर्म जो देखे, अर्थात् जतरा कर्म व्हे' है, वणां में अकर्म है, अर्थात् वी कणीरा कीधा नी व्हे' स्वाभाविक ईश्वर कृत व्हे', ज्यूँ जळ अग्नि आदि। कोई के' मनुष्यां रेल आदिक वणाया है। सो रेल आदि में ज्यो ज्यो पदार्थां री शक्ति स्वतः ही, वा ही ज है, वणो में नवो कई व्हियो? ने वणी मनुष्याँ री बुद्धि री शक्ति ही सो वी पदार्थ री शक्तियाँ दीख गई। अणी में नवो कई व्हियो। कोई गँवार रेल में मनखाँ ने हँसता देख अचम्भो माने, कोई बाबू ने तार दे'तो देख, कोई गार्ड ने फरतो देख के' नवी वात है, परन्तु वो कानून जाणतो तो कदापि वीं ने यो अचम्भो नी व्हे' तो। क्यूँके यो तो कायदा माफक ही ज व्हे' है। विना कायदारे ईश्वर रो प्रवन्ध किस तरे' के' शके। जतरो व्हे' सब नियमित ही ज है। परन्तु नी समझे जदी नवो के'वे। अणीज शूँ वी ने बुद्धि-मान मनुष्य हुकम कीधो है। अर्थात् जतरा कर्म आपाँ कीधा मानाँ, वी आपाँ नी कीधा, परन्तु

अनादि नियमित है। यूँ ही अकर्म में कर्म ने, अर्थात् ईश्वर ने देखणो अर्थात् आपाँ ही जदी कीधा थका हाँ, तो नवो आपाँ कईं कर शकाँ।

—श्री महाभारत

(१७)

ब्रह्म में ने जगत् में कई फरक है?

ज्यूँ घड़ो ने गारो एक ही है, यूँ ही ब्रह्म ने जगत भी एक है। परन्तु घट ने ओळख ने घटाकार ही ज गारो समझ ले' जदी वो कूलका ने गारो नी मानेगा। क्यूँके घड़ा शूँ वो भिन्न है। यूँ ही गारा रा अनेक प्रकार ने वो अनेक मानेगा। परन्तु गारा रो ज्ञान जींने है, वो सबने एक ही मानेगा। अणी वास्ते ब्रह्म रा ज्ञान शूँ मुक्ति व्हे' पर जगत रा ज्ञान शूँ नी।

गीतारी श्री ज्ञानेश्वरी टीका

(१८)

स्मरण रो सहज उपाय।

श्वास जो आपो आप निरंकुश आवे जावे अणाँ में अंकुश राखणो ही स्मरण है—

निरंकुशाना श्वसनोद्गमानाम्

—श्री आचार्य

श्वासा खाली जात है, तीन लोक का मोल ।

—श्री कबीर जी

खाली नी जाणो चावे, अणी पे चावे जिसतरे' सुरता रेवे, वो ही अंकुश है ।

(१९)

विकार मन में है ।

मृतिका ही घट है, घट रो आकार मृत्तिका व्हीं' जदी मृत्तिका में कई विकार व्हियो ? मृत्तिका तो है ज्यूँ री ज्यूँ है, ने आकाश (पोल) शूँ वाँकी चूँकी दीखे, सो कई आकाश में विकार व्हियो ? क्यूँके आकाश में भी विकार नी व्हे' शके, यूँ ही सर्वत्र ।

(२०)

बा'रणे ब्रह्म ने माँय ने माया (जगत्) ।

क्यूँके माया, ने ब्रह्म ओत-प्रोत मिल रिया है । जदी यूँ काँ' के माँय ब्रह्म ने बा'रणे माया, जदी अणी शूँ विपरीत बा'रणे ब्रह्म ने माँय ने माया भी व्हे' शके है, अर्थात् यो अन्वय व्यतिरेक विचार है । माया महाराणी तो गुप्त ही ज अन्तः-पुर (अन्तःकरण) में विराजे, ने ब्रह्म महाराज तो प्रायः बा'रणे ही ज विराजे है । ब्रह्म तो माँय भी

पधारे दिने बा'रणे भी परन्तु माया तो बा'रणे आय ही नी शके।

प्र०—जदी बा'रणे घट पट आदि जगत दीखे सो कई ब्रह्म है ?

उ०—बा'रणे जो घट पटादि जगत् दीखे सो वास्तव में ब्रह्म ही ज है। परन्तु यो घट, ने यो पट, या वात बा'रणे नी है, माँय ने माया में है "*ययेदं धार्यते जगत्*" ज्यूँ कणी राजारी सवारी निकळी। घणो ने नराई मनख स्त्रियाँ बाळक देख रिया हा। जदी बा'रणे जो घट पटादि व्हे' तो सब ने एक सरीखा दीखणा चावे, परन्तु स्त्रियाँ तो घोड़ारा ने सरदाराँ रा गे'णा री सुन्दरता देख री' है। बाळकाँ ने हाथी घोड़ा मनख ही ज दीख रिया है। कतराई मनखाँ ने उमराव सरदार ने घणाँ रो कुरब दीख रियो है। अबे बाळक जो राजा ने माँय ने (मन में) नी जँचायो, वीं ने पूछे के अणाँ में राजा कस्यो है ? तो वो घड़ीक चपरादार ने के' यो राजा है, घड़ीक हाथी घोड़ा पालकी या छवा छत्र छड़ी ने के'। क्यूँके बार'णे विकार नी है। विकार मन में है,

परन्तु जणी'थाळक या निरचय कर राखी व्हे' के राजा तो मनख व्हे' है, तो वो मनखाँ ने राजा वतावेगा। यूँ ही, जशी माँय ने दृढ़ व्हे'री' है, वशी ही वा'रणे दीखे है। परन्तु विचार ने देखवा शूँ तो वा'रणे ब्रह्म ने माँय ने माया है, ने यूँ भी समझ शकाँ के माया (कल्पना) ब्रह्म ने निज संकल्प विकल्प रूपी हाथाँ शूँ अनेक प्रकार रा शृंगार करावे वा स्वाँग करावे अथवा ब्रह्मरूपी गृहस्थी माया रूपी स्त्री रे वास्ते वा'रणे अनेक उद्योग चेष्टा कमाई हुनर करतो दीखरियो है, ने माया स्त्री, ब्रह्म पुरुष रे वास्ते घर में ही अनेक प्रकार रा भोजनादिक कार्य कर री' है। वा ब्रह्म जळ माया रूपी घड़कल्य (रहटरे लगावारो कूड़ामें शूँ जळ निकाळवारो मृत्तिकारो पात्र) में आयरियो है,ने घड़कल जळ में आय री' है। वा स्त्री ने पुरुष में सुख दीखे ने पुरुष ने स्त्री में सुख दीखे। तात्पर्य ब्रह्म माया री वात ब्रह्म माया जाणे। समझवा तावे ई काम माया माँ कर री' है। ब्रह्म पिता ने तो सन्तान ने शिक्षा देवारी आवारी आवश्यकता नी दीखे। परन्तु शिक्षित सन्तति ने आपणाँ खोळा में वेठाय "सोऽहम्" "सोऽहम्" शब्द के' ने आप

जश्यो करले' ने माया के "तत्वमसि" जदी बाळक माता शूँ शिक्षा पायो थको पिता री गोद में लीन व्हे' जाय, ने वठे कई करे सो राम जाणें।

(२१)

न्याय सांख्य वेदान्त रज-प्रकृति
बुद्धि सत
तम ब्रह्म
कर्म वैशेषिक योग भक्ति
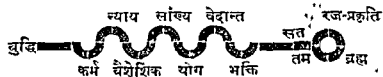
शास्त्र, बुद्धि रो वळ (वाँक) काढ़े है! क्यूँ के वाँकी बुद्धि प्रकृति री (परम) महाकारण अवस्था तक ही नी पों'च शके, तो ब्रह्म में किस तरे' पों'च शके। अणी'ज वास्ते अनेक प्रकार रा उपदेश शास्त्राँ में दीखे, परन्तु बुद्धि रो जगत विषयक विपरीत निश्चय मिटावा रो ही यो प्रयत्न है, भ्रमावा रो नी। बुद्धि रूपी लकीर है, त्रिगुण शूँ वाँक पड़ गयो, सो शास्त्र काढ रिया है। जदी भक्ति द्वारा सरल शुद्ध सतो गुणी व्हे' ने परात्पर प्रकृति ने प्राप्त व्हे' ने तम रज ने दो ही बाजू शूँ टाळ ब्रह्म बिन्दु में लीन व्हे'गी'। अणी बिन्दु में ही ज आखी पुस्तक आय गो' यो पानो बिन्दु है

(२२)

पर ब्रह्म प्रत्यक्ष ।

प्रभु सूक्ष्म हृदय में प्रत्यक्ष विराजे है, हृदय रो जो हृदय, वो ही प्रभु है। यथा-अणी अखिल जगत रो हृदय यो शरीर, अणी शरीर रो हृदय त्रिकूट, त्रिकूट रो श्री हट, श्री हट रो गुल्हाड़, गुल्हाड़ रो पीठ, ओर पीठ रो पुण्याद्रि, भ्रामरी गुहा भ्रांमरी रो ब्रह्म रन्ध्र ने ब्रह्म रन्ध्र, रो ब्रह्म हृदय है (जीव) है।

(२३)

पवन रूपी (श्वास) वन रो हाथी है। अणी ने शनैः शनैः हेवा करणो चावे, ने सुरता रो महावत वेठवा लाग जाय, भावना रूपी फारकी वन्ध जाय, ने श्रद्धा री अंकुश मानवा लाग जाय, जदी आत्मा रूपी राजा रे सवारी रा काम रो व्हे'।

(२४)

'रेलगाड़ी तो आवताँ देर नी लागे, पर सड़क पटस्याँ पुल तार त्यार व्हेवा री देर है। यूँ आत्मा तो स्वयं प्राप्त ही है, परन्तु श्रवण मनन निदिध्यासन अर्थात् अभ्यास वैराग्य री कोशिश करणी चावे।

(२५)

जीव अभिमानी है, जतरा व्हे' सबरो (गर्व) (अभिमान) करे, ने अभिमान रूपी रोग तो सन्निपात ज्यूँ ही है। ज्यूँ सन्निपात में रोगी में ताकत भी दीखे, घर में शूँ निकळ निकळ भागणो चावे, तो भी अशक्त है। यूँ परमार्थ में भी घो अभिमान सहित जाणो चावे, पण वो रस्तो आरोग्य निरभिमानी रो है अर्थात् भक्ति रो है। क्यूँ के मनुष्याँ ने ज्ञान में 'अहं' ब्रह्म री भावना करवा में 'अहं' रे साथ में ब्रह्म रो नाम ले' तो भी अन्तर में देह री याद रेवे। परन्तु भक्ति में तो अहन्ता रो बिलकुल त्याग है।

श्रेयः श्रुतिः

(२६)

'जड़ चेतन जग जीव जन, सकल राम मय जानि।'

—श्री मानस

प्र०—जड़ कीने के,' ने चैतन्य कीने के' ?

उ०—जड़ गेणा ने के' ने चैतन्य सोना ने के'। यूँ ही जड़ कपड़ा ने के' चैतन्य कपास ने के'। यूँ ही जड़ घड़ा ने के' ने, चैतन्य गारा ने

के'। यूँ ही जड़ मन ने के' ने चैतन्य आत्मा ने के'।

(२७)

"करम वचन मन छाँडि छल, जब लगि जनन तुम्हार।
तब लगि सुख सपनेहुँ नहीं, किये कोटि उपचार॥"

यो परम सिद्धान्त है, के छळ छोड़ हरिजन व्हे'णो।

प्र०—अणी में हरिजन–प्रभु रो–व्हेवा में कई छळ करणो पड़े जो छोड़ूँ? कई छापा तिलक लगावणा छळ है, अथवा अन्य कई (छळ) है?

उ०—कर्म में छळ यो व्हे' के कर्म में अहन्ता राखणी, वचन में भी या रे के म्हूँ बोल रियो हूँ, मन में भी या रे' के म्हूँ बोल रियो हूँ, मन में भी या रेवे के म्हूँ विचार कर रियो हूँ। यो ही छळ है, के प्रभु रा तो के' वावणो ने स्वतन्त्र भी वणणो। या ही आगे भी आज्ञा कीधी है, के

"मनक्रम वचन छाँरि चतुराई।
भजत कृपा करि हैं रघुराई॥"

याही बात 'जो न छाँटि छल हरि जन होई।'

यूँ जगा' जगा' भक्ताधिराज आज्ञा कीधी है। ने स्वयं प्रभु भी आज्ञा कीधी है—

"मय्येव मन आधत्स्व" (म्हारामें मनने मेल)
"यदहंकारमाश्रित्य,"
"ईश्वरः सर्व भूतानाम्,"
"ये तु सर्वाणि कर्माणि"

इत्यादि समग्र गीताजी में याही बात है। गोस्वामी जी महाराज भी छळ अणीज ने हुकम करता हा कि ऊपर यूँ तो के' णो म्हूँ आपरो दास हूँ और मन में आपरो अभिमान राखणो यथा *'होइहिं कोउ इक दास तुम्हारा'* आगे *छल तजि कराहिं शिवद्रोही* इति अभ्यासात् (?)

प्रभुरा अस्या के आपणों आपो रत्ती भर भी बाकी नी रे' म्हूँ प्रभु रो व्हियो अतरो भी नी रे'। श्री वल्लभ प्रभू हुकम करे है *"श्रीकृष्ण शरणं मम"*, दूसरा अवार कनक कामणी आदि मायारे शरण रे' ने के' *"श्रीकृष्ण शरणं मम"*।

(२८)

अर्जुण जो शुरू में ही जो युद्ध कर काढता तो भी बन्धन व्हे' तो, ने श्री भगवान रो उपदेश नी

व्हे' तो, ने वी युद्ध शूँ विरक्त व्हे' जाता, तो भी बन्धन व्हे' तो। क्यूँ के ई दोई काम मोह (अहन्ता) शूँ व्हे' ता, ने श्री परम दयामयी जननी गीता शूँ वणी मोह रो नाश व्हे' आत्मस्मृति व्हे' गई। यो ही श्री गीताजी रो (फळ) सार है, यथा "नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा" अर्थात् कर्म में अकर्म दृष्टि व्ही'। नमुमाई कृत श्रीगीतारी टीका। शुरुयाँ केड़े युद्ध करवा शूँ वा नो करवा शूँ भी बन्ध नी व्हे' तो "नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन।

(२९)

ज्ञानी ने संसार कस्यो दीखे ? काच (दर्पण) जस्यो।

एक प्राचीन श्लोक है, के संयोगी ने चन्द्र प्रिय लागे परन्तु वियोगी ने अप्रिय "शशि शीतल संयोग में तपत विरह की बेर" परन्तु म्हांने तो दर्पण तुल्य दीखे है। तात्पर्य-दर्पण में जस्यो आपणो चेरो' व्हे' वस्यो ही दीखे। यूँ ही जस्यो आपणो भाव वस्यो ही भव (संसार) है। वो तो दर्पण स्वयं निर्विकार है।

प्र०-यूँ यथेच्छाचारी व्हेवा रो भय है, के

आत्म निवेदन कीधाँ केड़े वो अधर्म में जाता मनने किस तरे' रोकेगा ?

उ०—"कौन्तेय प्रति जानीहि।" "क्षिप्रं भवति धर्मात्मा।" "अपि चेत्सदुराचारो" आदि अनेक प्रमाणाँ शूँ अणी शङ्कारो निरास (निराकरण व्हे' शके) है, ने यूँ के'वा शूँ अभिमान दीखे के पाप शूँ म्हें मनने रोक रियाँ हाँ, ने सदाचरण कराय रियाँ हाँ। परमेश्वर नी कराय शके, ने मुख शूँ केवाँ आछो भगवान करे, खोटो म्हाँ कराँ, अणी रो ही ज नाम छळ है।

(३०)

काळ रा वेग री काळ आवे जदीज खबर पड़े। सौ वर्ष रो व्हे' ने मोत आवे, वणी समय भी वीं ने जन्मताँ ही मोत आई व्हे' ज्यूँ दीखे। रेल, तार, आदि कुल समय रा वेग रो अनुकरण करवा लागा, पर पाय नी शक्या अर्थात् ई दोड़े अणाँ शूँ भी समय आगे दोड़ रियो है। ई काम भी समय पे ही व्हे' रिया है। यो समय लिखवा लाग्यो ने वो समय निकळ गियो। अणी वास्ते ई समय रे वास्ते यो समय अश्यो नी के'णी आवे, वो समय ही ज के'णी आवे। 'यो के' ताँ ही वो व्हे' जाय जीं शूँ। ज्यूँ परमवेग री सवारी में रूँख काँकरा।

(३१)

चार तरे' रा मनुष्य व्हे' है, हंस (माँयने बारणे पवित्र), कोकिल (माँयने पवित्र), बगुला (बारणे पवित्र), कागलो (माँयने बारणे अपवित्र) मव शूँ महात्मा बुगला ने खोटो कियो है।

'हंस काक बक कोकिला नर के चार प्रकार।
शुद्ध मलिन अन्तर मलिन बाहिर मलिन विचार॥'

(३२)

श्री मुमुक्षु योग इत्यादि।

श्री नामाँ रो उच्चारण कर एक महात्मा बात (उपदेश) करता हा। जदी कणी कियो उपदेश रे आदि में अणी री कई आवश्यकता? आप कियो ई म्हारा उपदेश बन्द लिफ़ाफ़ा में रा कागद है, सो मुमुक्षु रा नाम रा है। और तो पोस्टमैन (डाकवाळा) री नाई लीधाँ फिरे है।

(३३)

एक में अनेकता किस तरे' दीखे?

ज्यूँ माटो हो स्लेट (पाटी), बरतणो भी माटो, माटा शूँ माटो मिलने माटा रा अनेक अक्षर दीखे। ज्यूँ चेतन ही ब्रह्म पाटी, चेतन ही ईश्वर बरतणो, चेतन ही वृत्ति, मन, माया, अक्षर।

(२४)

है तो खरी, पण वास्तव में कई है ? या खबर नी।

एक स्त्री है, वणी ने कोई माता के', अर्थात् पुत्र के' या माता है। पिता के' या पुत्री है। भाई के' या बे'न है। पति के' या पत्नी है। श्वसुर के' या बहू है। देवर के' या भाभी है। परन्तु सब ही वणी री स्त्री जाति समझे। परन्तु जनावराँ में वाँ ने देख स्त्री है, यूँ भी ज्ञान नी व्हे'। गाय जाणे यो बाँटो खवावे जो है, (जीव) जाणे म्हारे रे' वा री जमीन है। ना'र, कुत्ता, शृगाल खावा रो माँस, कोई शत्रु कोई मित्र समझे। परन्तु वास्तव में सब रो ही समझवो अनुचित नी है। क्यूँ के वा सबांरे अनेक प्रकार शूँ उपयोग में आवे है। वास्तव में कई है, सो खबर नी, परन्तु है जरूर। यो प्रकृति देवी रो स्थूल स्वरूप स्त्री ने केवे सो वास्तव में सत्य है। स्त्री ही नी, सम्पूर्ण वस्तु गवोळा में पड़ी थकी है। सिवाय है, के है ही, है और कुछ नी है। 'अस्ति चैवोपलब्धव्यम्।'

(२५)

थूँ ही सर्वाधार है।

एक बाळक ने जदी वो संसार री कथा ने, पिता आदि ज्ञान ने शुरू में जाणवा लागे जदी वणी रा मन में यो स्वाभाविक प्रश्न व्हे' के म्हारा माता पिता ई है, तो अणाँ रा कुण, ने फेर वणाँ रा कुण। यूँ आगे शूँ आगे पूछतो ही जाय है। फेर वणी ने यो भी विचार व्हे' या पृथ्वी कणी रा आधार पे है, ने हवा कणीरा आधार पे है। श्री आचार्य्य प्रभु जो "कोऽहं कस्मात्" आदि रो विचार करवा रो हुकम कीधो, वो प्रायः बाळक कर्‌यां करे है। परन्तु जदी वी लौकिक में समझणा व्हे'ता जाय है, ज्यूँ ही अणा परमार्थ विचारां में बाळक, मूर्ख, (अज्ञानी) व्हे'ता जाय है। वणां री बुद्धि प्रत्येक वस्तु ने स्वतन्त्र मानवा लाग जाय है। क्यूँ के वणाँरा गुरु जन भी वणाँरा प्रश्न रो उत्तर नी समझ्या व्हे'वे, जद दूसरां ने कई समझावे। जद वी तो (अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः) व्हे' जाय। यूँ ही एक बाळक वींरा पिता (बाप) शूँ प्रश्न कीधो, के सब रो पिता कुण, अर्थात् सबरो आधार कुण? जदी पिता कियो के थूँ। या शुण वणी बाळक ने आश्चर्य व्हियो। वणी कियो म्हूँ आप रो पुत्र हूँ। पिता कही, म्हूँ भी आप रो पुत्र हूँ। क्यूँ के

जंदी थूँ अणी स्थूल शरीर ने ही पिता पुत्र माने, जदी तो यो स्थूल रो पुत्र, ने यो भी स्थूल है, सो स्थूल रो पुत्र है। तात्पर्य स्थूल-स्थूल सब एक ही है। रक्त माँसादि रा व्हेवा शूँ। जदी पुत्र कियो; अणी स्थूल शूँ म्हूँ कई न्यारो हूँ ? कई म्हूँ दश वर्ष रो नी हूँ ! क्यूँ के यूँ तो आप रो पिता व्हेऊँ तो कम शूँ कम म्हूँ सौ वर्ष रो व्हेऊँगा। पिता कही वास्तव में थूँ अनंत वर्ष रो है। थूँ यो स्थूल नो है। वर्ष रा ही हिसाब स्थूल शूँ लगाया जाय है। थूँ तो अणी शूँ न्यारोहै, जदी अणी स्थूल ने देख रियो है। ज्यूँ थूँ घड़ा ने देखे, यूँ ही अणी शरीर ने देखरियो है सो थूँ ईं शूँ न्यारो है। जदी पुत्र कही, म्हूँ मर जाऊँगा, तो अणी ने नी देख शकूँगा, वणी वगत म्हूँ न्यारो कणी शूँ रेऊँगा। पिता कही, हे पुत्र ! मरेगा जदी थूँ शून्य शूँ न्यारो रे'गा अर्थात् शून्य ने देखेगा। ज्यूँ अबार सुषुप्ति (नींद) ने थूँ देखे है ज्यूँ। पुत्र कही, नींद में तो म्हने कई ओशान नी रेवे। पिता कही, हे प्रिय ! थारो ओशान कदापि नाश नी व्हे' (नहष्टुद्रष्टेर्विपरि लोपा भवति।) हे सुशील ! थूँ विचार ने देख के थने वाताँ करताँ करताँ मन में कई विचार व्हे'जाय,

जदी थूँ के' अवार यूँ विचार व्हे' गयो, तो वणी विचार ने थें देख लीधो। यूँ ही विचार करताँ करताँ स्वप्न आवे जदी पाछो जाग ने केवे म्हने यूँ स्वप्न आयो। तो स्वप्न ने भी थें देख्यो, परन्तु स्वप्न में देखती वगत. थने खबर नी ही के म्हूँ स्वप्न देख रियो हूँ, परन्तु जाग्यो जदी तो खबर पड़ी ही ज, ('कतराक ने यूँ भी दीखे') फेर जदी थने नींद आयगी, तो नींद ने भी, थें स्वप्न ने देख्यो ज्यूँ ही देख लीधी। अणी शूँ यो देखवा वाळो थूँ है, ने सो ही सर्वाधार सर्व रो पिता, माता, धाता है।

(३६)

प्र०—मनुष्य रात दिन संसार रा विचाराँ में क्यूं लागो रे' ?

उ०—अणी ने संसार में सुख मिलवारी आशा है, जी शूँ। अणी'ज वास्ते तैत्तिरीय में' पंच कोष रो वर्णन है, के पेली अन्नमय कोष शूँ सब ही अन्न है। अन्न शूँ ही ज स्थित है, ने फेर प्राण मय कोष तो प्राण रे आधार पे अन्न है (अन्न मय) है, ने मन विज्ञान, ने आनन्द मय, ने अणी' ज वास्ते कियो के आनन्द रे ही आधार पे सब री स्थिति है, ने वो सब शूँ पृथक है। परन्तु मनुष्य

भूल शूँ अन्यत्र आनन्द ने हेरे है। मनुष्य जाणे, यो काम यूँ कर लेवां शूँ यो सुख व्हे'गा, ने यो व्हे' जाय, तो पछे सुखी व्हे' जावां। परन्तु या वात बाळक पणा शूँ ही खेलकण्या पतंग नी कटवा शूँ चलाई, सो हाल तो पूरी व्ही' नी। जदी आपाँ यूँ जाणां, के यूँ व्हेवा, शूँ सुख है, तो चश्या व्हिया थकां कई सुखी है? यूँ तो दो प्याला दारू पी ने भील कई सुखी नी व्हे'? ऊंदरी रा हींदा ज्यूं वणी ने सुख मान पकड़े ने वो भी रळक जाय ने चक्र लागो ही रे'। सुख जो प्राप्त व्हे' जाय, तो फेर दूसरी आड़ी मन क्यूँ जाय? असंख्य काम असंख्य समय शूँ असंख्य जीव सुख रे वास्ते कर रिया है, परन्तु संसार में तो हाल सुख रो पतो नी लागो। कोई कोने ही, कोई कीने ही, सुख केवे, वास्तविक सुख तो परमार्थ में है।

प्र०— परमार्थ में भी सुख नी व्हे' गा यूँ ही ज व्हे' गा तो?

उ०—विधियुक्त प्रत्यत्न कर देखणो चावे, के वणी सिवाय पछे दूसरा करया सुख पे मन जाय है "यं लब्ध्वा चापर लाभं" "प्रत्यक्षे किं प्रमाणम्।";

विपयी परमार्थ ने विना जाएया वीं री निन्दा करे, परन्तु परमार्थी विपय ने यथार्थ जाण, देख, निज सुख री प्रशंसा करे। दो ही जाणे ज्यो सांचो, के एक जाणे ज्यो।

(३७)

शतरंज रा शोकीन ने शतरंज सत्य ने उत्तम दीखे पर संसारार्थी ने तो विना काम री दीखे। यूँ ही संसार भी संसारी ने दीखे, पर ईश्वरार्थी ने तो फोकट दीखे।

(३८)

संसार देखतां आवे के नी ?

ज्यूँ कणीने ही पूछे के थने घड़ी देखतां आवे के नी, जदी घड़ी तो सब ने ही देखतां आवे। परन्तु वास्तव में घड़ी देखणों वीं ने के' के मिनट, सेकण्ड, घण्टा वगेरा री खबर पड़े। यूँ ही संसार तो सब ने ही देखताँ आवे, परन्तु अणी रो तात्पर्य विरला देख जाणे। ज्यूँ घड़ी देखने टाइम शूँ निज कार्य कर ले'णो ही फल है। यूँ ही संसार देख सचेत व्हे जाणो ही फल है। ज्यूं घड़ी देख पाछी देखे जतरे सेकण्ड रो कांटो स्थान छोड़ दे है, यूं ही वणीं शूं भी विशेप संसार रो परि-

वर्त्तन व्हे'रियो है। ज्यूं सेकण्डरो कांटो फिरतो दीखे, पर वो मिनट रा कांटा रो एक भाग है, ने मिनट रो कई, घण्टा रा कॉंटा रो भी वतरो समय ओछो व्हियो अर्थात् घण्टारो कॉंटो भी वतराक अंश में फरयो। यूं ही आपणो शरीर भी प्रतिक्षण फर्यो है, परन्तु सूक्ष्म दृष्टि शूं ही खबर पडे, दूज्यूं नी।

(३९)

वेदान्त में मिथ्या कोई चीज नी है। वेदान्त में जो के' के संसार नी है, अणीरो यो ही ज भाव है, के मिथ्या कुछ भी वस्तु नी है।

प्र०—जदी मिथ्या यो भाव किस तरे' उत्पन्न व्हियो?

उ०—एक मृत्तिका ही ज है, वणी में घट कल्पणो घट भी गारो है, फेर वणीरो कूल को विचारयो, सो वो भी गारो ही ज है, पर जद एक गारो ही ज है, अश्यो विचार है, सो तो सत्य है, ने घट, कूल को, यो विचार है, अणां में शूं मिथ्या प्रकट व्हियो। ज्यूं घड़ो है, सो कूल को नी है, ने कूल को घड़ो नी है, यूं "है" में "नी" घुस गई। अणी "नी" रो नाम ही ज माया ने "है"

रो नाम ब्रह्म है। गारो जाण्यो ने ज्ञान व्हियो, ने न्यारो घट रो समझणो ही ज माया है। द्वैत माया, अद्वैत ब्रह्म है।

(४०)

लकड़ी रो वळीतो वणाय दो।

कणी कियो या म्हारे हाथ में राखवारी लकड़ी है। म्हूँ चाऊं के अणीरो वळीतो व्हे' जाय तो ठीक, परन्तु किस तरे' व्हे'? जदी एक समझणे आदमी कियो, भाई! यो तो वळीतो ही ज है, खाली वासती में मेलवारी देर। यूं ही जतरे 'अहं'रो न्यारो ज्ञान रे' जतरे वणी रो नाम 'अहं' है, ने ज्ञानाग्नि में तो वो भी ज्ञान स्वरूप व्हे' जायगा, वो तो पे'ली ही ज्ञान स्वरूप है। 'अहं मम' एक ही व्हे' जाय जाणे तो भी ने नी जाणे तो भी। ज्यूं टोळा ने भाटो करवा री हजार वर्ष मेहनत करे तो भी नी व्हे'। केवल यो ज्ञान व्हियो के टोळा ने भाटो एक रो ही ज नाम है, ने टोळा रो भाटो व्हे' जाय। यूं ही ब्रह्म (ज्ञान), ने जगत (अज्ञान) एक ही वस्तु है, केवल समझवारी देर है, विना समझ्यां करोड़ कलाप करणा पड़े है।

(४१)

ज्यूँ आपांरा मन में सन्देह आपां विचार शूँ मिटावाँ, जणी वगत द्वैत भाव (दूसरो) नी दीखे। यूँ ही शिष्य रो सन्देह मिटावतो समय गुरु ने शिष्य न्यारो नी दीखे, ने ज्यूँ आपणां स्वप्न में एक आदमी आपाँ ने ही ज दूसरो दीखे, यद्यपि वो आपणो विचार है, यूँ ही शिष्य ने गुरु न्यारो दीखे।

(४२)

चड़कली उड़ जाणे तो भी नी उड़ जाणती व्हे' ज्यूँ थोड़ी थोड़ी उड़ बच्चा ने उड़णो सिखावे। यूँ ही महात्मा ज्ञानी व्हे' तो भी अज्ञानी शिष्य रे वास्ते अज्ञानी ज्यूँ वणी रा अधिकार रे अनुसार उपदेश करे, ने श्री शंकर प्रभु परम उपदेश कीधो परन्तु अज्ञानी वतरो उपयोगी नी समझ्यो। श्री विवेकानन्दजी लिख्यो के शंकराचार्य में रामानुजाचार्य जतरी उदारता नी ही। तात्पर्य-वणा अद्वैत आज्ञा कीधी, जीं शूँ सब नी समझ शके। ज्यूँ बाळक ने सोना रो अश्यो डळो दे दे, के वणीं शूँ ऊँच नी शके, ने रामानुजाचार्य ऊँचतो बोझ

दीधो है, ने वणी ने ऊँचावा रा अधिकारी वी ने भी ऊँचा वे ही ज है।

(४३)

प्र०—रस्सी में सांप नी व्हे' तो भी बिल में तो सांप व्हे' ही ज है, जदी ई पदार्थ नी किसतरें है, नी व्हे' सो तो दीखे ही नी, व्हे' जी हो ज दीखे है ?

उ०—लकड़ी रूप शूँ वृक्ष दीखे, वींने लकड़ी के' सो अण व्हे'ती है, के नी, ने लकड़ीरा शतरंज रा हाथी घोड़ा करे सो दीखे, के नी, ने वणां रो जदी स्वप्न आवे तो वो तो वृक्ष है, सो वृक्ष तो नी दीखे, ने अढ़ाई घर चालतो घोड़ो दीखे के नी, यूँ ही झूठ में झूठ दीखती रे' है। ज्यूँ लकड़ी झूठ, ने हाथी घोड़ा झूठ, ने वणारो चालवो मरवो झूठ, यूँ ही दृढ़ भाव रे अनुसार ही प्रभुरा अनेक रूप दीखे है। तात्पर्य-पदार्थ, कल्पनारो ही नाम है, ने कल्पना ब्रह्म रो ही नाम है, ने ब्रह्म, ज्ञान स्वरूप, सच्चिदानन्द रो नाम है।

(४४)

मन भी अणी नखे शूँ सुमिरण मांगे, जदी छः तरे' शूँ नटे है।

मौनं कालविलम्बश्च प्रयाणो भूमिदर्शनम् ।
क्रोधश्चान्यमुखीवार्ता नकारं षट्विधं स्मृतम् ॥

चुप व्हे' रेवणो, देर शूँ जवाब दे'णो, वठा शूँ उठने चल्यो जाणो, नीचो देखवा लाग जाणो, क्रोध कर ले'णो, दूजा शूँ बात करवा लाग जाणो अथवा बात टाळाय देणी, यूँ छह तरे' शूँ इनकारी व्हे' है ।

भजन में उदासीनता (बेपरवाही), यूँ करलाँ, यूँ व्हे' जाय ने पछे कराँगा । अन्यत्र विषय में चल्या जाणो । शून्य निद्रा व्हे' जाणो । भजन रा दुख (अवगुण) विचार घबरावणो । सिद्धयाँ ने चावणो ने यणाँ ने उळझणो ई' री पाय ।

(४५)

"I" आई माने "मैं" । प्र०—"मैं" माने ?

एक विद्वान् भक्त जिज्ञासु ने उपदेश करता ने कोरा पद् शास्त्रीवाद री इच्छा शूँ आवता, वणाँ शूँ अतरोक ही ज पूछ ने मौन व्हे' जाता के "उक्त शास्त्र शूँ आप (खुद) रे बाबत आप कई निश्चय कीधो है" । बस, पछे चावे जतरी वो पण्डित मानी अभिमानी कटु वाणी कें' वे वा तर्क

वितर्क करे, तो भी नी बोलता, वणाँ रो यो अभिप्राय व्हे'गा के आपरो निश्चय व्हे'गयो, जठा केड़े कई भी बात री ऊहापोह शूँ कई प्रयोजन, जो आपरो ही निश्चय कोधो, तो फेर ऊहापोह, तर्क वितर्क व्यर्थ ही है, नें जिज्ञासु शूँ तो वार्ता उपदेश करता ही हा, वणाँ रो तात्पर्य हो के सब ही शास्त्र मोक्ष प्रद है, नास्तिक तक भी मोक्ष-प्रद है। वणी शूँ भी आपरो निश्चय कर ले' तो। ज्यूँ शरीर ही आत्मा, तो सब ही शरीर आत्मा है वा पंच तत्व रो संयोग ही व्हेवा शूँ यूँ म्हूँ, व्हेवे सो वास्तव में यौगिक है। वास्तव में 'म्हूँ' कुछ भी नी विहयो। उक्त निश्चय शूँ वृत्तिलय व्हे' चैतन्य प्राप्ति व्हे'जाय। यूँ न्याय, वैशेषिक ज्योतिष, कर्म, वैद्यक, सर्वत्र विचार व्हे'णो चावे।

(४६

आचार्य अहंकार रा ज्ञान शूँ आत्म ज्ञान मान्यो। जीं रो यूँ दीखे के अन्य वृत्ति चंचल है, ने अहँवृत्ति स्थर है, ने स्थिर में ही ठीक दीखे, जल में चन्द्र री नाँई।

(४७)

वासना विना अहंकार ईश्वर रो रूप है। ममता रो नाम ही माया है। इच्छा, द्वेष, ममता शूँ व्हे'। अहन्ता कोरी चैतन्य रो ही ज नाम है। ज्यूँ सुषुप्ति में अहन्ता साक्षी मात्र रेवे यूँ ही सर्वदा।

(४८)

ब्रह्म नानो बाळक है, माया म्होटच्यार।

ज्यूँ नाना बाळक में भी चैतन्यता व्हे' परन्तु वणी री कणी वस्तु पे ममता नी व्हे' ज्यूँ वणी रे मूंडा आगे चोरी करो सोनो, गारो आदि चावे ज्यो ही लावो, वणी ने नी सोनो दीखे, नी गारो, ने वो ही ज ज्यूँ ज्यूँ कल्पना वढ़ावतो जाय, ने म्होटो व्हे'तो जाय, ज्यूँ ही सब में आगला जश्यो व्हे'तो जाय। बाळक रा अणी'ज गुण री तारीफ़ है, ने ईं शूँ ही वो प्रिय है।

(४९)

दत्तात्रेयजी अजगर व्रत राख्यो ज्यूँ म्हें भी कदी व्हाँ'। या शुभ वासना है, अणी शूँ वणी वृत्तिरी शोध जिज्ञासा व्हे'। पर दत्तात्रेयजी कोई अजगर व्रत राख्यो नी हो, नी जनकजी व्यवहार कीधो हो।

तात्पर्य-यूँ कराँ तो ठीक, यूँ नी कराँ तो ठीक है, विकल्प, इच्छा, द्वेष, वणाँ में रे'ता तो व जीवन्मुक्त किस तरे'व्हे'ता। वणाँ में केवल ब्रह्म भाव हो ने वो ही ब्रह्म भाव सब में है, परन्तु जाण्यो नी।

(५०)

मन घणो भटके।

यो तो मन रो काम है। सुख जाणे, जठी जाय ने दुःख री दीखे वठा शूँ पाछो फिर जाय। श्रणी रो काम यो करे श्रापणो काम श्रापाँ।

गोपाल छींपो

(५१)

सत् चित् श्रानन्द।

सच्चिदानन्द है ज्यो कुछ है, सच्चिदानन्द है। असत् यो भ्रम है। असत् रो अर्थ सत् है, सत् रा श्राधार पे असत् भासे, ने चित्त रा श्राधार पे जड़, सो चित ही है, ने श्रानन्द रा श्राधार पे दुःख, यो सम्पूर्ण विश्व ही सच्चिदानन्द है। या वात विचारवा जशी है, विना विचार ही विपरीत भाव है, ने ई भाव, दो चीजाँ रो मिलान करवा शूँ दीखे

है, ने वी दीखे सो भी सच्चिदानन्द है। ज्यूँ राजा, ने कङ्गाल। सो राजा विना कङ्गाल नी, ने कङ्गाल विना राजा नी, ने दोयाँ में ही सच्चिदानन्द तो है हीज। सर्वत्र संसार भाव अपेक्षित है, आत्मा निरपेक्ष है।

(५२)

विचार कराँ जदी तो उळझाँ, ने नी कराँ रो विचार करवा शूँ अहङ्कार व्हे', ने वड़ो श्रम जणाय। अर्थात् कर्म करवा में तो अहन्ता है, हीज ने, नी करवा में भी है जदो कई व्हे' ?

जदी प्रभु रे आश्रित व्हे'णो ही ज उत्तम है। भोक्तार इत्यादि शूँ यूँ विचार करणो के भोक्ता भगवान्, ईश्वर, समर्थ भगवान् ने सबरी भलाई रो कर्ता भगवान है। फेर आपणे विचार री जगा' कठे री' अर्थात् आपाँ में आपो कणी जगा' है वो ही रत्ती भरी जगा' ने भी आप शूँ खाली नी राखे, ज्यूँ-बर्फ में पाणी; यूँ ही सब अहन्तादि में प्रभु है।

(५३)

दुःख सुख केवल भावना मात्र है, जो वास्तव

में व्हे' तो वणी'ज में सबने ही सुख री प्रतीति व्हे'णी चावे, ने दुःख में दुःख री, सो तो व्हे'नी, जदी सब ही आपणी इढ़ता है (*"इक के सुख सों दुःख दूसरे के किहि शोच करे किहि सोंह रखे)"* (*"अनिष्ट निष्ट मिश्रंच)"* शूँ भी या ही बात साबत व्हे' है।

(५४)

प्र०—जो ब्रह्म जीव व्हे' तो ब्रह्म तो संसार वणाय काढ़े, देखाँ ? जीव भी वणावो।

उ०—जो हवा हीज साँस व्हे तो हवा तो रूँख तोड़े, देखाँ साँस भी रूँख तोड़ो।

(५५)

"वासों यह विचरे फिरे, वापि न वाहि न हान।
आतम अरु अज्ञान है मणि अरु फणी समान॥"

ज्यूँ साँप ने अँधारा में वणी री मणि रा प्रकाश शूँ ओळखणी आवे। यूँ ही अज्ञान भी आत्मा शूँ ही जाण्यो जाय ज्यूँ साँप मणि विना मर जाय। यूँ ही ज्ञान विना अज्ञान रो भी अभाव हीज, परन्तु मणी तो साँप विना भी रे' यूँ ही ज्ञान तो अज्ञान विना भी रे'। परन्तु अज्ञान

ज्ञान विना नी रे' शके। साँपरो स्वभाव मारवा रो है, ने मणि रो जिवावा रो है। यूँ ही चैतन्य साव-धान करे, अज्ञान मोहित करे। साँप में काळो अँधारो मणि में प्रकाश उजाळो सो ही श्रीगोस्वामी जी दयालु आज्ञा करे है—

विधि वस सुजन कुसंगत परहीं
फणि मणि सम निज गुण अनुसरहीं।
'सुजन जीव कुसंगत माया, निज गुण चैतन्यता।'

(५६)

'रोवे तो खोवे समय, हँसे तऊ निकसे
अहा (अगम) काल कीजाल में सब ही जीव फंसे॥'
'न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम्।'

(५७)

चाहे साँच उचार कर, चाहे कहदा व्यर्थ।
मेरो गुरू गुमान इक, सकल शब्द को अर्थ॥ १॥
या संसार असार में, हरि को भजन विसार।
सूकर नाम धराय के, को नाव अतिसार॥ २॥

(५८)

नळ रे नाड़ा छोड़ रा छाँटा लाग्या, सो तो कळजुग व्याप्यो ने नाड़ाछोड़ रो शरीर बण्यो सो

रात दिन धारण राखे वीं ने क्यूँनी व्यापे। ईं रो तो लेश भी नी अटकणो चावे।

(५९)

श्री नरसिंह भगवान हिरण्यकश्यपु ने मार्‍यो वणी रो जन्म भी (निपेक) संध्या में व्हियो, ने मर्‍यो भी संधि में, ने सन्धि नर+सिंह, स्वरूप शूँ मर्‍यो। यूँ ही अज्ञान हिरण्य कश्यपु ज्ञान अज्ञान री सन्धि में उत्पन्न व्हियो, ने सन्धि में ही नाश व्हियो ने सन्धि स्वरूप जो नर+सिंह वणारा हाथ शूँ मरयो अर्थात्

"निद्रादौ जागरान्तेस्यां यद्भावमुपजायते।
तं भावं भावयन्विद्वान् को न मुच्येत बन्धनात्॥"

नर शूँ दैवी सम्पत् सिंह शूँ आसुरी सम्पत् अणाँ दोयाँ ने धारण करवावाळा नरसिंहचैतन्य।

(६०)

जो हरि स्मरण याद करवा री कोशीश करताँ करताँ भूलाय जाय, तो भूलवा री खूब कोशीश करणी, सो याद रे' जाय। वा याद रेवे जदी भूलवा री याद रेवे अणी शूँ याद ही है, भूल कुछ नी है, यो तो अपेक्षाकृत है।

'सुमिरण विसरण जाहिते, ताकों विसरे कौन ।
वाचा हू की वाच जो, मौन हुकी जो मौन ॥'

(६१)

अतरो संसार पर्वत पाणी वगेरा एक ही ब्रह्म किस तरें व्हें शके। ज्यूँ-'पिण्डे सो ब्रह्माण्डे'। एक पाणी री बूँद शूँ यो शरीर आँख, नाक अस्थि आदि मय किस तरें व्हियो, वा वटवृक्ष बीज नें छोड़ ने वणी में चैतन्य है, वणी शूँ ई समग्र ही बीज आदि व्हिया है, वो बीज रो बीज है *"संसार महीरुहस्य"* व्हें जाय।

(६२)

दुःख सुख शूँ उदासीन रे'णो। ज्यूँ ब्राह्मण सुशर्मा रा जवान पुत्र रे एक पुत्र व्हियो, तो क्षत्रिय रणवीर रा पुत्र ने वणी रो हर्ष शोक नी व्हियो। यूँ ही जो जो दुःख सुख आवे वाँ ने दूजा देखे ज्यूँ ही आपाँ भी देखणो, ने आपणो ही ज जाणवा शूँ सुख दुःख व्हें अर्थात् रणवीर रा सुख दुःख ने रणवीर ने यूँ समझणो चावे के अमुक देश रो ठाकर रणवीर है, वणी ने अमुक वात री

हर्ष शोक व्हे'रियो है, ने वो के' रियो है, के म्हने घड़ो हर्ष वा शोक है। भगवत् री माया शूँ है यूँ जाणणो।

(६३)

वास्तव में म्हूँ कुण हूँ।

म्हूँ बालक वणूँ हूँ, युवान (जवान) वणूँ हूँ, वृद्ध वणूँ हूँ, म्हूँ जावूँ हूँ, सूवतो वणूँ हूँ, सुषुप्त वणूँ हूँ। रोगी आरोग्य मूरख, ज्ञानी, दूबलो त्यार, सुन्दर, कुरूप, धनाढ्य, दरिद्री, धाप्यो, भूखो आदि अनेक प्रकार रो वणूँ सो वास्तव में कुण हूँ, ? चैतन्य ! चैतन्य !! चैतन्य !!! क्यूँके चैतन्य बिना कई नी वणणी आवे। जदी वास्तव में म्हूँ चैतन्य हूँ या बात निर्विवाद सिद्ध है।

(६४)

आपाँ व्यवहार में भी रात दिन आपाँ ने भूल्या रेवाँ हाँ, ने दृश्याकार रेवाँ हाँ। अणी'ज रो नाम बाह्य वृत्ति है। आपरी याद रे'णो ही अन्तर वृत्ति है, परन्तु भूल ने भी आपाँ, आप (खुद) ने नी भूलाँ हाँ, या ही वणी री सत्यता है, चैतन्यता है। ज्यूँ—"वृत्तिसारूप्यमितरत्र" यो: सू: ४

(६५)

ईश्वर री (ज्ञानरी) सृष्टि में दुःख नी है। जीव (अज्ञान) री सृष्टि में दुःख है। जीव री सृष्टि म्हूँ, म्हारो, थूँ, थारो, ईश्वर री सृष्टि है यो सारो। जीव री सृष्टि घट, ने ईश्वर री सृष्टि गारो। अणी शूँ या निश्चय व्ही' के जन्म मृत्यु जरा व्याधि आदि ईश्वर री सृष्टि में वण्या ही नी। भलाँ आनन्द रूप में चिरानंद कठे।

(६६)

रेल गाड़ी तो ऊभी ने म्हे भी वणी में बैठा, परन्तु वा ऊभी ऊभी ने म्हें बेठा बेठा अनेक शे'ल देख लीधी भाव-रेल गाड़ी ने मनख के' के चाले, परन्तु रेल गाड़ी ज्यूँ री ज्यूँ ऊभी रेवे। परन्तु पेड़ा फिरे सो भी वणी ही ज कील पे जणी रे वी लाग्या व्हे'। जदी चाली कई, वी पेड़ा तो वणा रे वच्चे खीलो चेंठाय राख्यो वणी पे चक्कर खाय रिया है अर्थात् एक ही जगा चक्कर खाय रिया है ने जमी भी नो चाली जदी अठी रा अठी कूँकर चीलाँ रे चेंठ परा गिया; यूँ ही चैतन्य पे मन चक्कर लगाय अनेक शे'लाँ कराय रियो है। जदी यो चठे ही ज चक्कर खाणो बन्द करदे' तो रेल तो

ठे'री ठे'राई है, ने जमीन भी स्थिर है ने आपाँ भी बेठा ही हाँ। पण यो वेग शूँ चक्कर खाय ने चक्कर खावा शूँ वेग वधे, यो वेग भी अणी पैदा नी कीधो, तो घमण्ड क्यूँ करे।

मांडूक्य कारिका अशान्त शान्त प्रकरण।

६७)

प्र०—देवा शूँ लागे ने लागवा शूँ दुःख व्हे' जो संसार भावना मात्र है तो देवा शूँ हर्ष भी व्हे'णो चावे ?

उ०—वास्तव में संसार भावना मात्र है, ने यो नियम है के अणी भावना शूँ या भावना व्हे' सो वीर भाव वाळा रे लागवा शूँ हर्ष, ने कायर ने शोक प्रत्यक्ष है—ब्यावरी गाळ ने शत्रु को व्यंग। आपाँ रा जतरा विचार व्हे' सब ही भावना शूँ है। एक भावना शूँ दूसरी ने घणी शूँ घणी हो व्हे' यूँ ही कोई देखणो चावे तो पूर्व जन्म रो ज्ञान भी व्हे' जाय—

¹ संस्कारसाक्षात्करणात् पूर्वजातिज्ञानम् । यो० सू०
न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम् ॥

गीताजी अ० २, श्लो० ६६

कोई वात भूल जावाँ तो याद व्हे' वणी शूँ पे'लो री ने फेर आगे अर्थात् यूँ विचारे या वात कणी विचार शूँ आई ने वा कणी शूँ ?

(६८)

उत्तम सोना पे यूँ लिख दे' के यो सोनो खोटो है, तो कई परीक्षक भी वींने खोटे के'गा । यूँ ही चैतन्य में जड़ना है अश्यो फुरे, जणी शूँ कई चैतन्य जड़ व्हे' जायगा ।

(६९)

घड़ी ने देख गँवार यूँ नी के' शके के या इस तरे' चाले, वो तो कोरो चालणो ही देखे । यूँ ही संसार चाले सो सब देखे परन्तु चलावा वाळा री खबर नी करे ।

(७०)

"म्हूँ" यूँ कियो सो चैतन्य ब्रह्म है ।
भाव-जगत में 'थूँ थूँ' तो सब ही आपाँ ने

केवे, पर श्रापाँ ने 'म्हूँ' यूँ के' ने कोई नी बुलावे। ज्यूँ यज्ञदत्त ने देवदत्त "थूँ" के' ने देवदत्त ने भी यज्ञदत्त "थूँ" के'—जदी सबरो प्रकट नाम "थूँ" है और खुद रे वास्ते लोग केवे 'म्हूँ' सो यो 'म्हूँ' कियो सो ही एक चैतन्य है, जो श्राप खुद श्रापरो श्रसलो नाम ले रियो है "अहं सर्वस्व प्रभवो०

'थूँ थूँ तो सब ही कहे, म्हूँ यूँ कहे न कोय !
विनाँ कियाँ म्हूँ म्हूँ करे, अन्तर आतम सोय ॥'

(७१)

यो वस्त्र है, अश्यो भाव प्रत्यक्ष है, पर वस्त्र कई है यी तो तन्तु है, जदी वस्त्र कई व्हियो? "चैतन्य"। तन्तु तो कपास है, जदी तन्तु कई व्हिया? चैतन्य। अर्थात् वस्त्र ने तन्तु यो चैतन्य रो नाम है, यूँ ही सब ही नाम रूप चैतन्य है।

चैतन चैतन एक सम, चेतन सब व्यवहार।
चैतन ही के नाम है, जड, दुःख असत्त असार ॥
निरगुण नाल सुनाकि कर, बामन पण्डित राय।
सगुन माकि शिव सदन पे, दीन्हो शिखर चढाय ॥

(७२)

प्राचीन दोहा—

नयनों की कर कोठरी पुतली पलंग बिछाय ।
पलकों की चिक डार के, पिय को लेहु रिझाय ॥

रहस्य-दूसरो नी आवे, कोठरी शूँ सुचित्त, चिक शूँ बिलकुल अमूझणी नी आवे, पड़दा ज्यूँ, पलंग शूँ सुख सहित्त, पिय ने यूँ एकान्त में रिझावा शूँ स्वयं ही सुखी व्हेवे । आप तो पिय पे रीझ री है । क्यूँ के *"आत्मनः कामाय सर्वं प्रियं भवति"* परन्तु पिय रे रीझयाँ विना सुख नी है, सो यूँ सुख पूर्वक रिझाय लो । *"द्वैताद्भय भवति"* यो शृंगार मय ज्ञान है । ज्यूँ *"आधी साखी सिर कटे जो कोई लेवे जान ।"* यो भी अणी'ज दोहा लारे शुण्यो परन्तु *"गुरु विन हो हि न ज्ञान ।"*

(७३)

तूँ हेरो का को कर, आप निबेरो नाय ।
तेरो ही वरणन करे, श्रुति करो समुदाय ॥
तू है सिंह सकात क्यों अजा खात ह पात ।
क्षुधित क्षुद्र को चरन दे, जरा ग्रसित जड़ गात ॥

(७४)

वुद्धी है तो तू अहो जिद्दी है यह लोग ।
जात रूप के पात में, यहाँ लोह को योग ॥

वास्तव में यो है कई ?

जदी एक वस्त्र ने देखाँ तो सब रा मन में यो भाव व्हे' यो कपड़ो है। परन्तु वणी में भी मलमल, नेनसुख, रेजो वगेरा देखां तो यूँ भाव व्हे' यो रेजो है ने यो नेनसुख है। अब एक आदमी रेजो देख ने पूछ्यो यो कई है, तो दूजो केवे यो रेजो है। फेर विचार ने वो केवे वास्तव में या कई वस्तु है ? तो विचार शूँ वा कपड़ो जाणे, के यो वास्तव में तो कपड़ो है। फेर विचार देखे कपड़ो वास्तव में कई चीज है, तो डोरा रो निश्चय व्हे' यूँ विचार जठा तक पहुँचे, वींने ही मनुष्य मानं ले' के वास्तव में तो डोरा है, ने ई' ज डोरा कपड़ा व्हे' है। कपड़ो कई भी स्वतन्त्र वस्तु नी है, ने वी'ज कपड़ा नेनसुख रेजा वगेरा व्हे'। परन्तु मुख्य डोरा हीज है, अब डोरो कपड़ा, ने रेजा ने नेनसुख ने अंगरखी कुड़तो पायजामो वगेरा नराई

नाम शूँ कियो जाय है, तो ई सब ही नाम डोरा रा ही ज है। चावे जतरा भेद भाव व्हेवा पे भी डोरो न्यारो नी व्हियो, परन्तु डोरा रा ही आधार पे रूप सब ही नाम रूप खेल रिया है। यूँ ही ब्रह्म ही ब्रह्म है, परन्तु जो न्यारा न्यारा मान ने असली बात रो ज्ञान नी कराँया ही अविद्या माया है, ने ठीक ज्ञान व्हे' जाणो ही विद्या है। सब वगत यो विचार राखवा रे योग्य है।

> "कोहं कस्मात्कुतः आयातः को मे जननी को मे तातः ।
> इति परिभावय वारंवारं सर्वं त्यक्त्वा स्वप्न विचार ॥
> भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढ मते ॥"

यो ही गोविन्द रो भजन है। जो इन्द्रियाँ शूँ जाएयो जाय सो सब ही गोविन्द है।

प्र०—जदी गोस्वामीजी महाराज तो आज्ञा करे के—

> गो गोचर मन जहं लगि जाही ।
> सो सब जानहु माया भाई ॥

उ०—माया रो अर्थ केवल कपड़ा अंगरखी रेजारो भाव है, चैतन्य ज्ञान रो अर्थ डोरा रो भाव

है। कपड़ा रो भाव रे' तो भी डोरा ने डोरा रो रे' तो भी डोरा। परन्तु कपड़ो जाणे सो डोरा रा भाव शूँ वंचित रे' ने डोरा जाणे सो कपड़ा अंगरखी ने भी जाण ले। ज्यूँ वदन दीखे पर या खबर नी पड़े के यो कणी वस्तु रो वण्यो थको है यूँ ही यो संसार दीखे सो कणी वस्तु रो वण्यो थको है? या खबर नी पड़े जाणे सो ही जाणे, के यो चैतन्य मय है?

(७५)

कई फायदो व्हे'गा।

यूँ ही हरे'क काम करती वगत विचार कर ले'णो। ज्यूँ यो काम करवा शूँ लोक में मान्य व्हे'गा, तो कई फायदो, अणी काम शूँ धन व्हे'गा तो कई फायदो, वो तो पाछो नष्ट व्हे' जायगा। अणी वास्ते अविनाशी सुख व्हे'णो चावे के जो मिटे नी। यूँ तो एक दिन पतंग काट दे'णो यो ही मुख्य काम समझ आखोही उनाळो वणीजमें व्यतीत करता ने कूकड़ा कबूतराँ में थाळ पणो विताय दीधो। परन्तु कई फायदो व्हियो, जो भण ने

मान धन पायो, तो भी मरती वगत तो ई भी अश्या ही शूना लागेगा। ज्यूँ गारा रा खेलकण्याँ में समय खोवा वाळा रो व्यवसाय, बुद्धिमान ने लागे अर्थात् यूँ लागेगा के अतरा दिन यूँ ही व्यर्थ खोया (म्हाँ) कई नी कीधो सिवाय भजन रे च्यावे जो काम करलो अन्त में पछतावणो पड़ेगा।

(७६)

'मैं सो सोधे ना मिले मैं मे ह भगवान ।
आध दोहा में आयगे, आगम निगम पुराण ॥
मैं तुमको हेर न सकी तुम गइ मोहित जौन ।
अवे आविद्या हाथ ते आख मुदावे कौन ॥

भाव—आँख मिचावणी रा ख्याल में एक आँख मींचवावाळो ने एक आँख मिचावा वाळो ने और छुपवा वाळा व्हे' । अणी में अविद्या आँख मींचवा वाळी है जीव मींचवाळो है और श्रीकृष्ण चैतन्य भगवान छुपवावाळा है, ने और भी अनेक सत्कर्म छुपवावाळा है। जदी जीव री आँख्याँ खोली तो अणी श्रीकृष्ण ने ही हेरवा रो विचार

कीधो, अन्य सत्कर्म अणी रे मूँड़ा आगे व्हे' ने भाग गया ने ज्यो भाग ने आँख मूदवा वाळा रे स्पर्श करले' वीं ने नी पकड़े, सो सब सत् असत् कर्म अविद्या रो स्पर्श कर लीधो ने अणी जीव वणाँ ने नी पकड़्या ने श्रीकृष्ण शुद्ध चैतन्य ने हीज हेर तो हेरतो घबराय गियो। जदी भगवान स्वयं नजीक शूँ ही छुप्या हा सो निकळ अणी ने पकड़ लीधो। अर्थात् जीव में जाणवा रो सामर्थ्य कोय नी, अबे यो न्यावटो व्हियो के जींने पकड़े सो आँख मूदावे सो जीव तो कृष्ण प्रभु ने पकड शक्यो, ने पाछो अविद्या कने (पास) भी जाय ने यूँ नी कियो, के म्हने नी लादे जो यूँ व्हे' तो तो फेर जीव री ही ज आँखाँ बन्द व्हे'ती, सो भी नी व्हियो। अबे जीव तो आँख नी मुँदाय शके। क्यूँ के भगवान मिल गया, ने भगवान आँख यूँ नी मुँदावे के जीव ने नी लाधा और दूसरा सत्कर्म गेले चालताँ आँख क्यूँ मुँदावे। जदी अविद्या भी आँख मूँदणो बन्द कर दीधो ने ख्याल ही बन्द व्हे'गयो। प्रिया प्रीतम ने तो दूसरो ही आनन्द मय ख्याल दीख गयो। अबे शूना ख्याल कई काम खेले। जदी पापड़ी अविद्या भी वाट न्हाळती-न्हाळती नी आया जदी

हार पछताय ने परी गई। क्यूँ के दोयाँ में शूँ कोई वणी कने नी आया। प्रभु अशी जगा छुप्या के सिवाय जीव रे कणी ने ही वठारो पतो ज्ञात नी हो, ने जीव वठे गयो तो भी देख तो नी शक्यो ने देख्याँ विना किस तरे' पकड़े, जदी स्वयं प्रभु ही वीं ने पकड़ लीधो ने आनन्द मय ख्याल प्रारम्भ व्हे' गयो। यथा—"जीवभूता महाबाहो" रास में स्वयं प्रकट व्हिया हेरवा शूँ नी लाधा ज्यूँ।

प्र०—जदी "जीव भूता प्रकृति" है जदी जीव में जाणवा री शक्ति नी है, तो वा हेरतो-हेरतो भगवान नखे कूँकर गई?

उ०—जदी आँख मींचावणी में छुपे है, तो वो छुपने हेलो (डायली) दे' है। वणी अन्दाज शूँ गई अर्थात् प्रभु रा चैतन्य अंश शूँ ही गई। वठे गयाँ केड़े तो जड़ चैतन्य विभाग ही नी रियो, अर्थात् हेरवावाळी, ने जींने हेरे सोई दोई नी रिया। क्यूँ के हरि वींने हेर (देख) लीधी जदी वणी हरि ने हेर लीधो दोई एक ही चैतन्य (आनन्द) रो अनुभव लेवा लागा सो एक ही व्हे' गया क्यूँ के

वृत्ति सारूप्य व्हेवा शूँ आनन्द मय वृत्ति व्हे' गई जी शूँ।

प्र०—जद अविद्या जायने वणी आनन्द में विघ्न क्यूँ नी कीधो ?

उं०—आँख मूँदवावाळा रो यो काम नी है, जो वठा शूँ ऊठ ने अठी रो अठी हेर तो फिरे।

प्र०—तो दूसरा सत्कर्म लुपवा वाळा माया शूँ कोई जाय ने क्यूँ नी हेर लायो ?

उ०—हेरवा ने जाय ने हाथ नी आवे, तो जो जाय वणी री ही आँख मूँदाय सो कुण आँख मूँदावे। और वा जगा' जठे श्रीकृष्ण प्रभू लुप्या ज्या असी गुप्त ही के दूसरो जाय नी शके 'ज्ञानमय' जगा' निकुञ्ज में दूसरा रो प्रवेश ही असम्भव है। जदीज तो जीव भी वठे जाताँ ही स्वयं तदाकार व्हे' गयो।

(७७)

एक गुरू, दो चकरा दो मनुष्याँ ने दीधा के कोई नी देखे जठे, (मारो) आँखाँ बाँधवा पे भी जो देखतो सो ही आत्मा (है, जद) अपरोक्ष ज्ञान रो उपदेश कीधो। या कथा यूँ है—

एक महात्मा नखे दो मनख ईश्वर री पहचाण वास्ते चेला व्हे' गया। जदी महात्मा वणाँ ने एक एक बकरो देखायो और कियो के कोई नी जाणे जठे अणीं ने मार लावो। सो एक तो जंगल में जठे कणी मनख ने नी देख्यो वठे मार लायो। दूजो एकान्त जंगल में नराई जीव जन्तु देखे यूँ जाण एक खाड़ा में उतर्‌यो, वठे भी यो बकरो म्हने देखे ने म्हूँ ईं ने। यूँ जाण खुदरी ने वणी बकरा री आँखाँ पे पट्टी बाँध मारवा लागो। जदी विचारी तो भी कोईक तो जाणे है, म्हारे माँय ने शूँ कोई देख रियो है "न दृष्टु दृष्टे विपरा लोपो भवति" देखवा वाळा रो देखणो बन्द नी व्हे'। यो ही आत्म ज्ञान रो उपदेश है। 'जाणे सो ह आत्मा जावे सो मन जाण" देखे जीं रो ही डर है। जदी तो मनखाँ में मारतो तो भी यो जाणवावाळो तो वठे भी जाए तो, ने मनख तो खाली हाड़ माँस रा है, वी तो कई नी देखे, ने जणी देखवा वाळा शूँ परे'ज है, वो तो जठे जाऊँ वठे हो तैयार है। वणी यूँ विचार बकरो नी मार्‌यो, ने गुरू रे आगे या वात समझाय ने कही। जदी गुरू कियो के अबे थने ज्ञान कुण दे' थूँ ही स्वयं ज्ञान स्वरूप है। "अय मात्मा ब्रह्म, विज्ञानं

मस, 'तत्वमसि' "सोहं" रो यो ही अर्थ है ।

(७८)

"अहं" तो परमेश्वर रो मुख्य नाम है । ज्यूँ मनुष्य आपरा नाम ने नी भूले ज्यूँ चैतन्य भी नी भूले । परन्तु अहंकार अहंकृति, अहंकृत भाव, अहन्ताई नाम भूलवा रा नाम है । ज्यूँ छोगो नाम व्हे' पछे छोगल्यो छोगमल, छोगसिंह ने वणी साथे यूँ ही चन्द्रलाल आदि लगावा थूँ और व्हे' ज्यूँ दीख जाय वा नशा में आप रो नाम भूल जाय तो कई वो मनख नी रे' ।

(७९)

बाहिर को बहके वृथा, अभ्यन्तर आप निवेर ।
चेतन ही के चौक में, जडता की जड हेर ॥
पलटि जात दुख सुख बढत, हियो जानि बहार ।
चित गति ज्ञानी की जथा, आगत पति का नार ॥
कोटि उपाय लहे नहीं, रावण रूपी काम ।
गीता सीता के सरिस, पावे आतम राम ॥

(८०)

प्र०—जदी एक ही ब्रह्म सब में है तो सब व्यवहार एक सरीखो क्यूँ नी व्हे' ।

(८१)

'जल हिम उपल बिलग नहीं जसे ।'

तो कड़ा में तो करड़ापणा रो कारण ठंड है। ब्रह्म में जगत पणा रो कारण कई है ? चित चैतन्यता।

(८२)

"तत्त्वमसि" रो अर्थ किस तरे समझणी आवे ? ज्यूँ ही अक्षर व्ल्युल्लेक स्याही रा है ई करया ?

ई पाना पे लिख्या थका है जी, ई जो थें अणी वगत वाँचरिया हो जी, यूँ ही यो थूँ बोल रियो है सो। ईश्वर चैतन्य ब्रह्म है। ज्यूँ ई अक्षर प्रत्यक्ष है, यूँ ही आत्मा प्रत्यक्ष है, ई अक्षर तो आप शूँ प्रत्यक्ष है, ने आप आप शूँ ही प्रत्यक्ष है।

यो अणाँ अक्षराँ रो विचार कर रियो सो थूँ आत्मा है यो तो मन है, तो मन रो विचार कर-रियो सो थूँ है, तात्पर्य ज्ञान स्वरूप है, ने सब ही ज्ञान स्वरूप है। अणी वास्ते आत्मा स्वयं सिद्ध है।

"देखिय रविहिं दीप कर लीन्हें।"

(८३)

प्र०--जीवात्मा ने परमात्मा एक है के न्यारा न्यारा ?

उ०—कई थाँ जीवात्मा या परमात्मा में शूँ कणी ने ही देख्यो ? जो देख्यो तो पूछवा री आवश्यकता नी, ने नी देख्या तो पूछवा शूँ कई प्रयोजन ? अणी वास्ते मुख्य देखवा रो उपाय करणो जीं शूँ पूछणो नी पड़े। वींने देखवा रो उपाय योग है। अणाँ शब्दाँ शूँ तो खबर पड़े के आत्मा दोयाँ में है एक। सो पर में जीव न्यारा न्यारा दीखे। राम जाणे—

कूए करे ई न्यावटा, सब ही जाणे राम।
अण जाण्याँ काण्या कहे, ऊँधो शूधो काम ॥ १ ॥

(८४)

प्र०—नास्तिक, देह ने हीज आत्मा माने ?

उ०—जणी रो जणी पे अधिक प्रेम व्हे' वो वणी ने ही आत्मा माने। ज्यूँ कोई धन ने ही आत्मा माने अर्थात् घणो प्रेम करे। वणी री मानसिक क्रिया भी धन रे साथे ही घट बढ़ व्हे'ती रे'गा।

प्र०—परन्तु देह विना तो ज्ञानी रा ज्ञान रो भी प्रत्यक्ष नी व्हे' जदी वो आत्मा पे ही प्रेम

राखे तो शरीर रे साथे साथे वणी री आत्मा में भी विकार क्यूँ व्हे' ?

उ०—वणी री आत्मा में विकार नी व्हे' है, वो एक रस ही रेवे है। विकार तो देहात्मवादी रे व्हे' है। ज्ञानी ने मृत्यु रोग आदि रो भय नी व्हे'। अणी रो कारण वीं री चैतन्य स्थिति है, ने देहात्मवादी नामेक (थोड़ी सी) वात पे घवराय जाय तो वणी री जड़स्थिति रो कारण है।

प्र०—परन्तु मरयां केडे तो देहात्मवादी रो के'णो सत्य प्रतीत व्हे' के ज्ञानी रा ज्ञान रो पतो भी नी लागे ?

उ०—जणी वगत नींद आवे वणी वगत भी अशो ही हालत व्हे' है, ने दवा शुँघावा पे भी अशी ही हालत व्हे', समाधि में भी वाही हालत दीखे, जणी शूँ चैतन्य रो मरवो साबित नी व्हे। क्यूँके वणी रो पदार्थ ज्ञान प्रत्यक्ष नी दीखे जतरे ज्ञान नष्ट व्हे' गयो, यूँ नी के' शकाँ। ज्यूँ अणभण्यो अक्षर नी वाँचे, जणी शूँ वो मरयो नी वाजे। यूँ ही इन्द्रिय ज्ञान रहित व्हेवा शूँ आत्म ज्ञान

रहित नी व्हे' ज्यूँ चिल्हो (धनुष री डोरी) टूट जावा शूँ कवाण टूटगी, यूँ नी के'णी आवे। परन्तु वीं पे नवो चिल्हो चढ़ावा शूँ तीर छूट सके, दूज्यूँ नी। कई काच में दीखे जतरे ही ज आपणो मूँडो है?

—श्री ज्ञानेश्वर

(८५)

आसन सिद्ध रो उपाय।

नाम ठाम अर्थात् साधन रीं समय हीज आसन दृढ़ करवा शूँ अबखाई आवे। क्यूँके मनः शूँ लड़ाई न्यारी करणी व्हे', शरीर शूँ न्यारी, जद जीव घवराय जावे। अणी वास्ते जणी व्यवहार रा काम में आपणो मन ज्यादा लागे, वणो वगत मेरू (मोरां री शाँकल) शूधी राखणी, ने पछे वो काम करणो। ज्यूँ किताव में मन ज्यादा लागे तो उक्त प्रकार शूँ वैठ ने वाँचणी वा वाताँ में लागे, वा, गाणो शुणवा इत्यादि में यूँ राखणो। अणी शूँ पछे मन ने हीज वेठावणो वाकी रे'गा। अणीज वास्ते क्रम शूँ आठ अंग में स्थूल शूँ सूक्ष्म पे अधिकार करवा री आज्ञा है। ज्यूँ वाताँ में नरो ही समय थोड़ो दीखे ने साधन में थोड़ो नरोई दीखे।

यूँ ही वाताँ में नराई समय तक एक आसन शूँ बेठवो भी काम दीखेगा ने सहज में आसन सिद्ध व्हे जायगा। यूँ ही व्यवहार में अष्टाङ्ग योग सहज में सधे।

(८६)

एक एक रो कारण है अर्थात् जीव,वा, आधार है, परन्तु सब रो कारण जीव आधार श्री कृष्ण है। ज्यूँ पाणी में भाटो पड़वा शूँ तरंगाँ दौड़ती देख मनख केवे, तरंगा दौड़ री है। परन्तु वणी तरंग रो कारण दूसरी ने वीं रो तीसरी, यूँ ही सबरो कारण भाटो, ने भाटा ने पाणी में न्हाकवा रो कारण हाथ, ने हाथ में ताकत, ने ताकत जीव शूँ, ने जीव ईश्वर शूँ, सो ही "*यद्भयात् वाति वातोयं*" श्रुति है ने "*नित्योनित्यानां चेतन श्चेतनानां एको बहुना यो विदधाति कामान्*" तो मन री वृत्ति भी एक शूँ एक उत्पन्न ने एक शूँ एक नाश भी व्हे। यूँ सब रो कारण प्रकृति ने वींरो भी पुरुष 'अस्मिता' 'म्हूँ' हूँ। अणी वृत्ति शूँ जीव पणो चैतन में व्हियो अर्थात् वृत्याँ तो अनन्त है पण अणी रे साथे गुंथाय गुंथाय ने बंधन, मोक्ष रो काम करे है। साँख्य में यो होज क्रम समझायो गयो है।

(८७)

'मानव भूले समय को, समय न भूले ताय ।
राश सिवान सुधि ना करे, वह मा कहँ ले' जाय ॥'

साधन सिद्धि रो उपाय।

मन रोकणो यो मुख्य सिद्धान्त है। पर मन तो महा चञ्चल है। अणी ने चञ्चलता रो अभ्यास पड़ गयो है सो पाछो थिरता रो अभ्यास पटकणो ही साधन है। चोईस घन्टा में एक सेकण्ड मन ने रोको (एकाग्र करो) परभाते । पछे एक सेकण्ड सांझे भी। फेर एक सेकेण्ड दुपहराँ में भी। फेर पे'र में, फेर घन्टा पे, फेर मिनट मिनट पे, ने फेर सेकण्ड पे, यूँ क्रम क्रम शूँ सहज में मन वश में व्हे' जाय। आरंभ दृढ़ता शूँ करणो।

(८८)

एक कुत्तो मृत पशु ने खाय रियो हो, कणी महात्मा कियो यो 'मैं' खाय रियो है। तात्पर्य-मनुष्य लोही माँस मय देह ने हीज 'मैं मैं' करे है, जीं शूँ वी भी माँसादि ने मैं ही ज केता हा।

(८९)

प्र०—संसार ने "अज्ञान प्रभव" अज्ञान शूँ वण्यो थको क्यूँ कियो जाय ?

उ०—अणी रा पदार्थ रो ज्ञान नी व्हे' जीं शूँ। ज्यूँ घड़ो गारा रो पण गारो कणी रो? यूँ पतो नी चाले जी शूँ। पण ज्ञानियाँ रे तो ज्ञानमय है।

"अज्ञानेनावृतं ज्ञानम्"।
"ज्ञानेन तु तदज्ञानम्"।
"अनात्मबुद्धि शैथिल्यम्"।
"फलं ध्याना दिने दिने"।
"पश्यन्नपि न चेद् ध्यायेत्"।
"को परोऽस्मात्पशुर्वद"।
"एक द्वि त्रिक्षणे नैव विकल्पाख्य निरोधनम्"।
"क्रमेणाभ्यस्यत यत्नात् ब्रह्मानुभवकाङ्क्षिभिः।"

(९०)

एक महात्मा बारणे शूँ कुटी में आया। वणी वगत वणाँ रो शिष्य ध्यान कर रियो हो, सो अंधारा में महात्मा री वीं रे ठोकर लागी ने महात्मा कियो यो कुण है? जदी शिष्य कियो यो म्हूँ (मैं) हूँ। महात्मा समझ गया हाल अणी रो देहाध्यास नष्ट नी व्हियो, जीं शूँ ध्यान भी छूट गयो। एक दाण कुत्तो रोड़ी पे माँस रो

टुकड़ो खाय रियो हो, सो देख गुरू शिष्य ने कियो यो "मैं" 'म्हूँ' खाय रियो है। शिष्य कियो महाराज यो माँस है, जदी महात्मा कियो जणी वगत ठोकर लागी वो कुण हो ?

(९१)

वचन शक्ति (वाँचवारी तागत) तो व्हे' यगी' पण अर्थशक्ति नी है। ज्यूँ कोई गीताजी ने शुद्ध वाँचणो शीखले, परन्तु अर्थ नी समझे। यूँ ही पण्डित भी गीताजी ने वाँच वणी रो अर्थ करे पर्याय शब्द के'। पण अर्थ रो अर्थ (मतलब) नी समझे।

प्र०—जदी अर्थ रो पर्याय अर्थ कुण समझे ?

उ०—श्री भगवान होज हुक्म करे के—

"निर्मानमोहाजितसगदोषा पदमव्ययतंत्"।

के वी वणी पद ने प्राप्त व्हे'।

'शींदरा शूँ बँधणा ने, शींदरा शूँ मोक्ष।
शींदरा रो मानवी तो, देवे की ने दोष॥

होय रह्यो जिततित सदा, जमा खरच को काम।
वड़े मजे की वात है, वाकी निकसे राम॥

जमा खरच सव होत नित जित तित जहीं तहीं।
जावत्ता सत्ता लही, वाकी वही वही॥

(९२)

सहज प्राणायाम अर्थात् प्राणापान रे नाम रो खटको लगाय ने हरे'क वगत काम करता रे' णो भी परम उत्तम है। पुस्तक पाठ री वगत भी न्हे' शके है।

ज्ञान उडन्त लगाय के, मन्त्री मोह निपात।
योग अनोखी चाल मौं, मनको कर दे मात॥
कहा काठ को किस्त दे, किस्त काल की टार।
झूठी बाजी जीत के, मनख जनम मत हार॥

(९३)

ठगाय गया ठगाय रिहा ठगावेगा वी कुण ?।
ईश्वर ने भूल गया तो वृद्ध युवा ने बालक॥
सन्तन और असन्त में, इतनो अन्तर जान।
वह वाकी निन्दा करे वह वाको सनमान॥

सन्त न (असंत), और असंत (संत)

जगत विशेषण बहुत विध हैं, विशेष इक ईश।
हरिजन को सबही समय सो ही सब संग में दीश॥
"चन्द सूर तारादि में, जैसे एक उजास।
भू माही ह भल अभल, सकल वासना वास॥

सुरभि विटप दलगाहिक लसे सकल बहु भूमि ।
सब को निज आधार हैं, भू मा जैसे भूमि ॥
छांटे केश संवार कर, ज्यों हुशियार हजाम ।
त्यों यम क्रम क्रम सों हरे, जानिन परे तमाम ॥

(९४)

आत्मा सत्य है अणीज वास्ते आपाँ सत्य विना नी रे' शकाँ। असत्य है, यो भी सत्य प्रतीत व्हे' जदी मानाँ, निश्चय ने सत्य एक ही है।

(९५)

प्र०—माया कई ? ने ब्रह्म कई ?

उ०—जो आपाँ ने कई भान व्हेवे, वणी समय दूसरो भान नी व्हेवे। ज्यूँ कोई वस्तु देख रिया वणी वगत तो यो भान नी व्हे' क अमुक वस्तु देख रियो हूँ। सिर्फ दीखणो हीज रे' ने जीं वगत यूँ व्हे' म्हूँ देख रियो हूँ तो सिर्फ दीखणो बन्द व्हे'ने यो हीज रे'। भाव—एक समय में दो काम मन नी करे। "*एक समये चोभयानव धारणम्*" जदी मन नराई काम करे अर्थात् एक काम कर केवे

यो कोधो। वो काम तो ब्रह्म ने देख्यो माया अर्थात् "*इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्र मित्यभिधीयते।*

भाव व्हे' ने वगड़े सो तो माया, ने एका कार रे'वे सो ब्रह्म, इच्छा हुई शो तो ब्रह्म, ने इच्छा व्ही' ही असी वृत्ति माया। स्मरण माया करे है, ब्रह्म रो सर्वदा अर्थात् माया ब्रह्म ने याद करे। परब्रह्म माया री आड़ी देखे ही नी। ज्यूँ तदाकारता ब्रह्म ने वींरी याद माया अर्थात् ब्रह्म री आगत माया है। एक री फिरती माया अनेक है। एक, एक, एक, एक, सब एक ही है। पर वणीज एक री एक आगत व्ही जीं ने चार, वा, सौ, मुरजी व्हे' जो कहो हजार भी एक है अर्थात् दीखणो भासणो एक ही है, ने वणी एक ने याद राख फेर एक लेणो यूँ ही माया व्हे'ती गई, पर एकता नी गई। दो कोने ही आजतक नी दीख्या नी दीखे नी दीख रिया है।

(९६)

घणी ने निरन्तर री कोशीश शूँ भी नास्तिकाँ शूँ आत्मा रो खण्डन नी व्हियो ने आस्तिकाँ शूँ

मण्डन नी व्हियो। एक रस में ई कूँकर व्हे' शके।

(९७)

आत्मा दुःख सुख शूँ न्यारो है, ज्यूँ म्हने दुःख व्हे' रियो है, वणी वगत जो दूसरो भान नीं, जदी तो दुःख रो भी भान नी व्हियो वा तो मूर्छा है। जी में दुःख सुख रो भान नी रेवे ने जो म्हने अन्य रो भान है, तो म्हूँ दुःख शूँ न्यारो ही व्हियो। क्यूँ के वणी समय म्हने दुःख रो नी पण अन्य रो भान व्हियो। यूँ ही सुख भी समझ ले'णो आत्मा "*साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च*" है।

(९८)

अद्वैत मत रो मण्डन हीज शुद्ध अद्वैत व्हियो और यूँ ही शुद्ध विशिष्ट अद्वैत ही विशिष्टा द्वैत व्हियो। यूँ ही द्वैताद्वैत। भाव—अद्वैत ने सारा ही मान्यो है, परन्तु अद्वैत में द्वैत शब्द जो आयो है, वीं ने निकालवा री कोशीश अनेक प्रकार शूँ कीधी है। द्वैत ने भगवान शङ्कर "अ" यो अक्षर लगाय ने निकाल्यो, ने वणी "अ" के आगे *विशिष्ट* पद लगाय ने आचार्य श्री रामानुजजी

समझायो, ने वणीज "अ" रे वल्लभ प्रभु "शुद्ध" शब्द लगाय ने समझायो, जो अणाँ में सिद्धान्त रो विरोधक है, वो वाचक ज्ञानी मूर्ख है, वो एक भी आचार्य री वात नी समझ शक्यो। पर जो अणाँ रो समन्वय कर शके सो ही प्रभु श्री राम कृष्ण यथार्थ द्रष्टा है।

"ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या, जीवोब्रह्मैव नापरः"
'ब्रह्म सत्य मिथ्या जगत् जीव ब्रह्म नहीं ओर।
आध दुहा में सो कहो कही जु ग्रन्थ करोर॥'

प्र०—शिष्य—संसार झूठो क्यूँ है?

उ०—गुरु—थाणाँ मत में कूंकर है कई सत्य है? अवश्य ही सत्य है, तो ब्रह्म कई झूठो है।

शिष्य—महाराज! मैं अद्वैत मत रा खण्डन रा ग्रन्थ देख्या विशिष्टाद्वैत ने शुद्धाद्वैत,। वणाँ में शङ्कर रा अणी सिद्धान्त री खूब दुर्दशा कीधी है, ने शंकर ने नरक में न्हाकवावाळा किया है।

गुरु—हे प्रिय! वी आचार्य हा, वणाँ तो शंकर रा अभिप्राय ने विपरीत समझ्यो वणाँ ने ठीक समझावा री कोशीश कर ने पछे

मतान्ध मोहान्ध मनुष्याँ दुकान जमावा ताबे आपणी ओछी बुद्धि रो परिचय दे'ने, वणाँ महानुभावाँ रो भी बदनाम करावा री कोशीश कीधी। "*यदा यदा ही धर्मस्य*" भगवान आज्ञा करे है। कणीरे सिद्धान्त कणी तरे शूँ समझ में आवे। कणी रे कणी रीति शूँ, यो तो अधिकारी भेद है। परन्तु स्वार्थी लोग परमार्थ रो निर्णय करे जदी "*जल्पहिं कल्पित वचन अनेका*' श्री बुद्ध री बगत श्री शंकर रो मत कठे भाग गयो, ने शंकर री वगत री श्री रामानुज कठे धुश गया, जो पछे बौद्धायन भाष्य लाधो ने वणी वगत वल्लभ प्रभु कठे हा? हे भाई! संसार रो उद्धार कृत्य जणी वगत एक महात्मा करतो हो वणी वगत दूसरा री कई आवश्यकता नी ही। परन्तु वणाँरा ग्रन्थ शूँ हीज अनुभव शून्य वाचाळ जदी वणी मत ने चलावे जदी दूसरा महात्मा रा रूप में प्रभु पधारे या ही धर्म री ग्लानि ने यो ही अवतार।

शिष्य—तो अन्य महात्मा तो जगत ने सत्य ने शंकराचार्य झूठ किस तरे' कियो?

गुरु--हे प्रिय ! ब्रह्म ने तो सारां ही सत्य कियो हो । थूँ के' जगत भी सत्य है, तो ब्रह्म ने जगत एक ही व्हिया ।

शिष्य—हाँ प्रभु, एक ही व्हिया तो फेर झूठ क्यूँ कियो ?

गुरु—तो जगत-ब्रह्म-अक्षर-ॐ-ई सब शब्द पर्यायवाचक अर्थात् एक वस्तुबोधक (एक हीज वस्तुरा नाम) है। तो ब्रह्म ने शंकर प्रभु कियो के सत्य है, तो ठीक ही कियो, ने अबे फेर यूँ के'ता के जगत सत्य है, तो भी वारी वाही वात व्ही'। क्यूँके ब्रह्म, सत्य है, कृष्ण सत्य है, चैतन्य सत्य है, यूँ ही एकार्थ व्हेवा शूँ जगत सत्य है, या भी पुनरुक्ति ही व्हेती। जीं शूँ कियो ब्रह्म शूँ भिन्न जगत मानणो यो मिथ्या है, सो प्रभु तो सरलता शूँ ही समझाया। परन्तु ज्यूँ समझ में आवे यूँ ही समझणो आपणी दुर्बुद्धि रो वर्णां पे आरोप क्यूँ करणो।

(९९)

बन्ध वपरीत ज्ञान रो नाम है, सो दो प्रकार

रो है। संसारी रो तो 'नी' है जीं ने ग्रहण री कोशीश, 'है' जीं ने त्याग री कोशीश ने मुमुक्षु के'। 'है' जीं रे ग्रहण री कोशीश "नी" है, जीं रे त्याग री कोशीश।

(१००)

प्र०—कर्म, उपासना, ज्ञान याँ में मुख्य कई ?
उ०—जो ठीक समझ में आय जाय, जो करणी आय जाय, जणी पे स्वाभाविक रुचि व्हे' सो ही मुख्य। अर्थात् ई तीन ही एक वस्तुरा नाम है, ने एक ही है। न्यारा प्रतीत व्हे' या ही खामी है।

(१०१)

प्रकृति पुरुष रो विचार।

एक बड़ा बंगला में पच्चीस जणा भेळा व्हे'ने दारू पीवा रो विचार कीधो। जदी एक आदमी वणाँ ने मनवार कर पावतो रियो। वणाँ वीं ने भी पीवा री कही, तो वणी कियो पीलूँगा। थेँ तो पियो, पछे नगो आवा दे'ने एक कमरा में चिक री आड़ में जाय बेठो। जदी चोईश ही खूब-मस्त व्हे' ने जी जी चेष्टा कर-याँ कीधा, वी

सब देखतो रियो। सो ही पुरुष ने वो चौईश ही प्रकृति। जो शारा ही पीवता तो ज्यो व्हियो वींरी खबर कीने रे'तो।

"साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च"।

जदी साक्षी कणी रो कई जड़ रो? नी, जड़ तो कई नी है, आप रो ही आप साक्षी है। मन रो सायकी मन। आप छानी चोरी नी। अर्थात् जो कुछ है, एक है, आत्मा है, चैतन्य है अवाच्य है, प्रत्यक्ष है, नित्य है।

प्र०—"सर्वं ब्रह्म मयं जगत्।" कूँकर व्हे'। अर्थात् अश्यो ज्ञानी कदी व्हे'गा के सब ही ब्रह्ममय दीखेगा?

उ०—शास्त्र में जो आज्ञा है, वा, है सो ही ज है, नी है ने व्हे', अशो नी है, यो तो सब ब्रह्ममय ही है। दृष्टा, दर्शन, दृश्य, ई तीन ही एक ही वस्तु है। जदी आपाँ भाटा ने देखाँ वणी वगत भाटा शूँ आपाँ न्यारा नी हाँ, ने न्यारा हाँ तो भाटो नी दीखे न्यारा हाँ, यूँ दीखे तात्पर्य "द्युतिसारूप्यमितरत्र" "एक समय चोभयानवधारणम्।" ई शूँ एक ही

वस्तु सावत व्हे' अनेक नी, अयकसमनेएक में कणी जगा' रे'।

प्र०—जदी आपाँ कणी वस्तु ने देखाँ तो पछे वीं ने पाछी यांद् कराँ जदी वा दूजी व्ही' के नी?

उ०—नी। क्यूँ के आपाँ वणी वगत याद में तदाकार व्हे' रिया हा सो वा तो याद् व्ही', वस्तु नी व्ही'।

प्र०—तो याद् भी कई एक चीज है?

उ०—बस, एक ही चीज है मुरजी व्हे' जो को'। एक ही रे'गा, दो नी व्हे' शके।

(१०२)

कणी की' के ब्रह्म रो वर्णन करो, जदो कणी अनुभवो की' के ब्रह्म के'णी भी नी आवे, ने अणी विना रे'णी भी नी आवे।

प्र०—मन और जगा' जाय जदी वणी विना रियो के नी?

उ०—नी। क्यूँके और वो हीज ने—

"सर्वं वदोति शासनात्।"

"द्वितियाद्वयं;" सीतायते चन्द्रिकेव माध्यलातन्पुरीषिपु।

वैष्णवी यस्य वै भक्तिर्मानसे साहि वैष्णवः ।

—श्री कृष्ण भक्ति रसामृत

इंने पराभक्ति परम प्रेम भी के' है अर्थात् ईश्वर पणो नजदीक है, के अणी जस्यो कई भी कदी नजदीक कोई व्हियो हीनी, नी जो व्हे' शके। नजदीक रे भी नजदीक परम नजदीक कई के'णी नी आवे, अतरो नजदीक फेर नजदीक। यों एक एक अक्षर पोलाँ सो एक एक अक्षर रे भी नजदीक "ने," माँय, ने "न," ने "अ,"रे भी नजदीक "न" रा अणा विभाग रे भी एक एक रे नजीक। जणी वगत जो विचार वृत्ति व्ही' वणी रे ही नजदीक परमात्मा है। परमात्मा री प्राप्ति वई मुद्रा री प्राप्ति वा रत्नाँरी प्राप्ति अर्थात् वाह्य वस्तु री प्राप्ति ज्यूँ है? परमात्मा री प्राप्ति कठे नी है "कहहुँ सो कहाँ जहाँ प्रभु नांही" श्री मानस आज्ञा करे है। कोई केवे अपवित्र वस्तु में भी प्राप्ति है, वींने पे'ली आप खुद में कई नी है? अणी प्रश्न रे उपरान्त यो प्रश्न करणो चावे, ज्यूँ वर्तमान ही में भूत, ने भविष्य है, अर्थात् वर्तमान है जी शूँ वणीज वर्तमान रो नाम भूत, भविष्य है। क्यूँके वर्तमान निकाळ ने भूत

भविष्य री भावना करणी शशश्रृंग है, अर्थात् असम्भव है। ज्यूँही वो खुद ने निकाळ ने अपवित्र री भावना करणो चावे सो भो असम्भव है। तात्पर्य समझणो चावे, वींने समझावे, सो तो बुद्धिमान है, ने जो खुद ही इनकार करे वणी ऊँधा घड़ा पे पाणी क्यूँ कुड़ाणो। परन्तु जिज्ञासु रे वास्ते यो उत्तर है' के प्रभु री प्राप्ति नी है। क्यूँके अप्राप्त री प्राप्ति व्हियाँ करे है, प्राप्त री प्राप्ति के'वा शूँ अप्राप्त व्हे' जदी।

प्र०—जिज्ञासु ने अणी प्रकार करणो पड़े के शास्त्र ने गुरु रो कई काम है, तो।

उ०—अणी रो यो उत्तर है के ज्यूँ धनुप री डोरी खेंचने छूटे जीं शूँ तीर छेटी जाय, ने निशाण ने वींधे। यूँ ही प्रत्यञ्चा ज्यूँ मनरी खेंच ताँण करवा शूँ "शरवत्तन्मयो भवेत्" वणी में लय व्हे' जाय। जदी डोरी भा खेंच ने छूट ने पे'ली री जगा' पे ही आय ठे'रे, ने धनुप भो झुक ने पे'ली ज्यूँ ही व्हे' जाय। परन्तु अणी खेंच ताँण शूँ कार्य री सिद्धि व्हे' जाय अर्थात् आत्मा में लय व्हे' जाय। आत्मा में आत्मा होज लय

व्हे' यो के'णो मात्र है। दृज्यूँ जो सदा ही है, वीं में करणो कई है ही ज नी। अब जिज्ञासु ने यूँ विचार व्हे' के यूँ वा अश्यो आत्मा है, जदी फेर पे'ला संस्कार पे वो आय गयो अर्थात् स्थूल वस्तु री नाईं आत्मा ने भी जाणवा री इच्छा व्ही'। परन्तु प्रत्येक वृत्ति पे आत्मा नित्य विराजमान है। ज्यूँ उपरोक्त श्लोक में है के अनेक छोटी म्होटी तरंगाँ पे चन्द्रिका चान्दणी खेले है, चावे जशी ने चावे जतरी तरँगाँ उठो बेठो वा ठेर जाओ। परन्तु चान्दणी तो वणाँ पे यूँ री यूँ ही वणी रे'गा। अथवा कालिय-मर्दन रे समय भगवान शौ ही फणाँ पे नृत्य कीधो, ज्यूँ ही महा मोह रूपी काली नाग रो भी वो मर्दन सहज ही में ठोकराँ लगाय लगाय ने कर रियो हो। जणी फण ने उठायो के श्रीकृष्ण जाणे पे'ली ही वणी पे कूद ने पधार गिया। काली भी फुरती में पाछनी राखी। परन्तु नटराज राज रे आगे वा फुरती बड़ी दीर्घ सूत्रता ज्यूँ दीखवा लागी। काली तो सूवतो हो ज्यूँ अज्ञानी

मनुष्य अर्थात् महा मोह, ने वणी री नागरयाँ (वृत्त्याँ) भी वीं ने नी जगाय शकी। जदी स्वयं श्रीकृष्ण चैतन्य री ठोकर लागवा शूँ क्रोधयुक्त जाग्यो अर्थात् रजोगुण री प्राप्ति व्हीं'। परन्तु प्रभु तो वीं फण रो प्रहार करवा री कीधो जठा पे'ली हो वणी पे सवार व्हे' गया। वणी रे तो सौ फण हा दूसराँ शूँ काटवा रो विचार कीधो जठा पे'ली वणी पे ही जाय ठोकर लगाई। यूँ ही प्रत्येक वृत्तिरूपी फणाँ पे नृत्य आरम्भ कर दीधो। सो जद काली दीन व्हे'गयो अर्थात् सतोगुण प्राप्त व्हे'गयो', जदी वणी आत्म निवेदन कर्यो और परम भक्त व्हे' रमणिक द्वीप में मस्तक में चरण चिन्ह ने सत्ता स्वरूप ने धार मृत्यु रा भय शूँ मुक्त व्हियो, जो नित्य ही शेष नाग री शेज पे पोढ़े, वणाँ रो कई सामान्य साँप तिरस्कार कर शके जो "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" है वणी शूँ न्यारो कोई निज सत्ता देखाय शके ?

प्र०—जदी म्हने परमेश्वर रो भान क्यूँ नी व्हे' ?

उ०—क्यूँ नी व्हे,' व्हे' रहीज रियो है, फेर किस

तरे' व्हे' । कई भाटा लोढ़ी ज्यूँ करणो है?
भान नी व्हे' तो कुण के' कै भान नी व्हे' ।
भान नी व्हे' । यो हीज तो भान व्हे' है ।

प्र०—भान नी व्हे' अश्यो भान क्यूँ व्हे' । भान व्हे' अश्यो भान क्यूँ नी व्हे' ?

उ०—ई तो दो ही एक सरीखा है । व्हे'णो ने नी व्हे'णो ई दो ही भान रा है, अर्थात् भान नी व्हे'णो ईं रो भी भान है के भान नी व्हे' । अर्थात् यो तो भान है, के भान नी व्हे' ने जद यो भान है जदी फेर क्यूँ के'णो के भान नी व्हे,' यूँ केवो वा यूँ के के भान नी व्हे' परन्तु भान व्हियो, हीज वो नी रे साथे रियो, यो 'है' रे साथे रियो परन्तु रियो अवश्य । गियो नी, ने जो सब रे साथे रियो सो ही आत्मा है यथा—

समं सर्वेषुभूतेषु तिष्ठतं परमेश्वरम्
विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति ।

तात्पर्य यो है के प्रत्येक विचार पे भगवान है । लारे ही लागा थका है । अर्धनारीश्वर है । विचार वणी शूँ उठे ने ठे'रे ने लय व्हे' । "*जन्माद्यस्य यतः,*" मतलब—विचार भगवान विना नी'रे शके । जदी

प्रत्येक विचार रे साथे ही भगवान है। विचार ने भगवान शूँ न्यारौ नी करणो। ज्यूँ पाणी रस शूँ न्यारो नो व्हे' शके। अबे प्रभु रा दर्शण रो विचार व्हियो, वणी में हीज प्रभु है प्रभु विना कूँकर रे'। तात्पर्य–हरेक वृत्ति रे साथे प्रभु है सो वीं ने देखवा रो विचार व्हियो, वीं में तो प्रभु है हीज। जदी अन्यत्र कठे दीखे, अणी वास्ते अदृश्य के'वे है। परन्तु देखे सो अगर दूसरो व्हे' तो वींने दीख शके पर आत्मा तो जो देखणो चावे सो ही है। आत्मा ने देखणो साक्षात्कार करणो, यूँ उपदेश शुण मनुष्य अतरो वस्तु ज्यूँ साक्षात् करणो चावे परन्तु साक्षात् करणो चावे सो हीज तो आत्मा है, जो वृत्ति रे साथे रो साथे है, वीं ने अलग कूँकर कीधो जाय।

'अहंकार के शीश पे धरो याहि को हाथ।
सहज भस्म व्हे' जायगो, भस्मासुर की भांत॥'

(१०३)

गुरुजी म्हारे अगमा तीरथ जाणो
सत्त नाम चढ़वा री सीढ़ी, नहिं पोथी नहिं पानो।
नैन कमल में निरखे लेवा सुरता नुरत निशानो।

इए घट में घड़ियाळावाजे जोवे कहानो ।
मन नहँ मरिया फेरन्ती माळा नहीं धूप नहीं ध्याना ।
ऐसो है यह (कोई, खेल अगम को भट की न भरमाणी ॥
स्याह सफेदी वस्तर पेरे ऐसो उसको वानो ।
अर्जुण दास जीवण के शरणो जोगी पुरुष है तानो ॥

(१०४)

परमात्मा (ब्रह्म) हीज चैतन्य है, अन्य कुल जड़ है । ज्यूँ वो शरीर में लोही ने फेरे, ने बन्द करे, केश वधावे नख वधावे यूँ ही वो मन बुद्धि अहंकार आदि ने भी घटावे वधावे । यूँ ही वणी शूँ समग्र लोक मर्यादा में है । शरीर में दो तरे' रा काम मान्या है, एक तो अण जाण्यां, ने एक जाण्यां । जाण्या ज्यूँ बोलणो विचारणो, आदि, ने अण जाण्याँ ज्यूँ अन्न रो पचणो, केश नख रो वधणो आदि । सो कर्म ने अकर्म भी ई हीज है । कर्म जणारो अहङ्कार व्हे' ने अकर्म जणारो अहङ्कार नी व्हे' । अब कर्म में अकर्म देखणो ज्यूँ नख रोम री वृद्धि कोई कर रियो है । यूँ ही बुद्धि अहन्ता री प्रवृत्ति भी वो ही कर रियो है । जो बुद्धि अहंता री प्रवृत्ति कर रियो है वो ही नख

रोम रुधिर श्वास री भी प्रवृत्ति कर रियो है।

"कर्मण्यकर्म यः पश्यदकर्मणि च कर्म यः।"

जो एक शरीर में मन बुद्धि री ने रुधिर प्राणादि री प्रवृत्ति आदि कर रियो है, वो ही सर्वत्र सर्व कर रियो है। अबे या निश्चय व्हे'गो के, अहं कोई कर्त्ता नो है, यो तो कणीक रो कार्य है, कर्ता तो वो है, जणी शूँ अहं आदि व्हिया। ज्यूँ गारा शूँ घड़ो, कूलको, नल, कल आदि।

—श्री विवेकानन्दजी महाराज

(१०५)

कर्म शूँ नैष्कर्म्य री प्राप्ति।

ज्यूँ कर्म नी करणो आळस ने प्रमाद है, यूँ ही सकाम कर्म अर्थात् कर्म में उळझणो भी प्रमाद ही है। ज्यूँ कोई कई-कई कर्म करतो व्हे' तो भी वीं ने वणी शूँ उन्नत कर्म री कोशीश करने बढ़ावता रे'णो चावे, ने कर्म शूँ नैष्कर्म्य प्राप्त करणो चावे, ने जणी रो अधिकार अधिक व्हे' वीं ने सूधो त्याग ही उचित है, यो श्री गीताजी रो त्याग रो ने कर्म रो अभिप्राय है।

॥ श्री ॥

परमार्थ—विचार

सातमों भाग

पुत्रवती युवती जग सोई ।
रघुपति भगत जासु सुत होई ॥
नतरु बाँझ भलि बादि बियानी ।
राम विमुख सुत ते हित हानी ॥

—श्रीमानस

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्यु पापयोनयः ।
स्त्रियो वैश्या स्तथा शूद्रा स्तेऽपि यान्ति परागतिम् ॥१॥

—श्रीगीताजी

(१)

ॐ यो एकाक्षर ब्रह्म है, ईं रो कई मतलब व्हियो ? जो नाश नी व्हे' वो अक्षर वाजे, ने एक हीज जो रे' वो एक वाजे, अणी हिसाब शूँ ॐ

यो नाश भी नी व्हे' ने एक हीज है। बोलवा में आवे सो तो वैखरी है, पण वींरी भी कारण एक कोई बोली व्हे'णी चावे। यूँ अन्तिम कारण हीज ३ॐ है। जो स्वप्न में हाथी घोड़ा वगेरा दीखे, वी सब एक हीज वस्तु रा है, ने वो ही एकाक्षर है ३ॐ।

(२)

प्र०—आत्मा अविनाशी है, तो शरीर छूट्यां केड़े वणींज शरीर शूँ वाहीज चेष्टा क्यूँ नी करे? बड़ा बड़ा महात्मा भी शरीर छोड़ने वणी शूँ कई चेष्टा नी कर शक्या?

उ०—सम्पूर्ण चेष्टा आत्मा री हीज है। वशी री वशी चेष्टा क्यूँ नी व्हे' यो काम आत्मा रो नी है। हाँ यावत् चेष्टा आत्मा शूँ व्हे' है और अणी'ज प्रश्न शूँ या वात साबित व्हे' के अशी'ज चेष्टा करे वो आत्मा व्हे'णो चावे। यो यूँ व्हे'वा शूँ आत्मा एक देशी व्हे' जाय।

प्र०—यशी'ज नी तो भी मर्‌याँ केड़े कई चेष्टा भी तो नी व्हे' है?

उ०—शरीर रो विकृत व्हे'णो या भी वणो री ही चेष्टा है। अग्नि में बळणो वा सुशाला शूँ वखरता थका परमाणु ने रोक राखणा वगेरा सब चेष्टा आत्मा री होज है। ज्यूँ शरीर में श्वास, प्रश्वास, केश, नख, रो वधणो वगेरा आत्मा री हीज चेष्टा है। यूँ हीज कुल चेष्टा आत्मा री है ज्यूँ नख कट्या थका वा कवूतर रा छोड्या थका पंख ऊँचा नीचा वा से'लीरा कांटा निश्चेष्ट पड़्या रेवा शूँ वी वी जीव कवूतर वगेरा मरे नी यूँ सर्व स्वरूप आत्मा भी एक पंख रूपी कळो आपाँ चावाँ जशी चेष्टा नी करे तो आत्मा रो नाश नी व्हे'।

प्र०—जदी कई वीं ने खबर है, के म्हूँ अवे दूसरा मनुष्याँ रे द्वारा स्मशान में ले जायो जावु हूँ?

उ०—या म्हूँ वृत्ति है, वा भी आत्मा री एक चेष्टा है। या वृत्ति यूँ हीज व्हे' जदी आत्मा है। दूज्यूँ नी वो दुराग्रह है। ज्यूँ कोई बुद्धिमान हाकम वेंडो व्हे' जाय। जदी कोई के'वे के यो तो वशी बुद्धिमत्ता री वाताँ करे जदी वो है। दूज्यूँ तो मर गयो परन्तु वो मर्‌यो

नी है। अबे वो अन्य प्रकार री चेष्टा कर रियो है। पे'ली अन्य प्रकार री है वो हीज है–ॐ।

'श्रीकृष्ण चित् वस्तु है, तो हम क्या हैं ? हम भी चित् हैं। यदि अहं ब्रह्म कहें तो क्या दोष है सो तो कुछ भी नहीं हुआ तो चतुर्भुजादि क्यों हैं। जैसे गिरराज को धारण किया यों ही अनन्त ब्रह्माण्ड को धारण कर रक्खा है।'

—महात्मारो उपदेश।

(३)

आदमी जणी वात ने गफलत री हालत में निश्चय करे ने वणी रो पछे विचार नी करे तो हमेशा गफलत में ही रे'। यूँ ही राज दरबार में भी लिखा-पढ़ी में के' के में बिना होश हवाश में यो मंजूर कीधो तो दुनियां री जी वातां अवार आपां दुराग्रह शूँ नी छोड़ी वी तो बाळक-पणाँ में अर्थात् मूर्खताई री हाळत में निश्चय कीधी थकी है। कई अणाँ पे पक्षपात छोड़ने एक दाण विचार नी करणो चावे।

(४)

आपणाँ कीधा।

दो तरे' का काम प्रायः दीखे है। एक तो आपणाँ कीधा ने एक जो आपणाँ विना कीधा। तो सूर्योदय आदि सब ही है। ने कीधा वी वाजे जी शरीर शूँ वा मनशूँ कराँ। अणी में भी शरीर में भी कतरा ही काम अस्या है, के जी आपां रे विना कीधाँ ही व्हे'। ज्यूँ लोही रो फरणो, छाती रो धड़कणो, आदि। कतरा ही अस्या के आपाँ रा कीधा व्हे' ज्यूँ हाथ पग हलावणो आदि। कणी बात रो करणो नी करणो यूँ आपाँ रे आधीन व्हियो। अणी में भी शरीर में माता रा गर्भ में पोषण करणो जो काम व्हियो यो आपणे कीधो व्हियो, या माता रे तो फेर जन्मणो ने अस्थि हाथ पग आँख आदि कणी वणाया वी भी आपणा कीधा बिना ही व्हिया तो माथो भी यूँ ही विना कीधां व्हियो।

(५)

ज्ञान सर्वोपरियो है, के ज्ञान में स्थिर व्हे'णो सो कुण ज्ञान स्थिर नी है। परन्तु वदतो व्याघात ज्यूं व्हे' रियो है सर्वत्र।

(६)

जणी ने करणो पड़े वो अनित्य है। ज्यूँ

संसार ने विना कीधा स्वतः व्हे' रियो है, सो ही नित्य सिर्फ यो ही वाक्य व्हे'णो है।

(७)

बुद्धिरो दुराग्रह।

घणा दिनाँ रा अभ्यास रो नाम ही आग्रह व्हे' सके है। वणी में विचार युक्त पक्षपात रहित अभ्यास रो नाम है सत्याग्रह, ने विना विचार रा अभ्यास रो नाम है दुराग्रह, मत मतान्तर में प्रायः दुराग्रह दीखवारो कारण यो है, के विना विचार्याँ वणाँरा ग्रन्थाँ ने वांचणा, ने वणाँरो विचार आपणी लौकिक दुराग्रही बुद्धि शूँ करणो। ज्यूँ भगवान श्री रामानुजाचार्य आज्ञा कीधी के जीव शूँ ईश्वर अन्य है। तो दुराग्रही बुद्धि यूँ निश्चय करे, के ज्यूँ अतरी इतर वस्तु है, यूँ ही ईश्वर व्हे' गा। श्री शंकर भगवान आज्ञा करी, जीव ईश्वर शूँ अन्य नी है, वठे यूँ विचार्यो के म्हूं ही ज जो यो हूं सो ईश्वर हूं। परन्तु ई दोही विचार दुराग्रही बुद्धि रा है। फेर कही, ईश्वर में जीव है, तो यूं समझ्या, के आकाश में ज्यूं पदार्थ है यूं है। फेर कही, जीव में ईश्वर है, जाएया

घड़ा में पाणी व्हे' ज्यूं है। अणाँ होज विपरीत निश्चयाँ रो श्री भगवान ईश्वरावतार अभ्रान्ताचार्य खण्डन कर वास्तविक वस्तु आड़ी सङ्केत कीधो वीं ने कोईक भाग्यशाली सत्याग्रही समझ ले' है। वणीरे भावे सब ही एक ही बात के' रिया है। ने जणी रे भावे खुद ही अनेक बात करे, वणी री बात तो न्यारी है।

(८)

ज्यू' बाळक पाछ पग्याँ चाले ज्यू' दुनियाँ (आपाँ) मशाणाँ री आडी पाछ पग्याँ चाल रियाँ हां अर्थात् दुनियां री आड़ी मुख ने मृत्यु री आड़ी गति।

(९)

एक राजा रे का'णोशुणवा रो घणो शोक हो। वणी कियो ज्या कन्या अशी' काणी के' के जणी रो अन्त हो नी व्हे' वणी ने म्हूँ परणूँ। यूँ वणी नरी ही कन्या परणी पण वणाँरी का'णी पूरी व्हे' ती, ने मार न्हाक तो। जदी प्रधान री लड़की बड़ी बुद्धिमती ही, वा परणी ने वणी कही एक गुफा में एक कानी शूँ नरी टीड़ियां भराय जाय ने एक कानी निकळ जाय ने पाछी भराय ने निकले, ने

पाछी भराय ने निकळे यूँ कियां ही गई। राजा चैतन्य, आपां सब कन्या। कर्म भोग, का'णी के' णो। संकल्प विकल्प, समाप्ति। मरण, प्रधान= प्रकृति री कन्या शूँ बुद्धि, वणी। कही नवी वात नी है, वो रो वो ही भरावणो ने निकळणो पूरो ही नी व्हे' सो वणी रो मरणो मिट गयो। नवी नवी जाणणो मिट्यो।

(१०)

आत्म प्राप्तिरी कोशीश नी करे सो तो पशु है ही ज, पण आत्म प्राप्ति री कोशीश करे वो भी तो समझणो (ज्ञानी) तो नी है।

(११)

प्र०—मनख ने अशान्ति क्यूँ व्हे' है ?

उ०—आत्मा है, जी शूँ,

प्र०—तो शान्ति क्यूँ व्हे' है ?

उ०—आत्मा है, जी शूँ।

(१२)

प्र०—तू ही के'णो तो दूसरा ने व्हे' है ?

उ०—घणो छाने खूब छाने के'वा पे जो शुणे सो दूसरो ने नजदीक।

—की की।

(१३)

मनख सब काम, सुख रे वास्ते करे है, खास कर ने अपणी तारीफ रे वास्ते और वणी'ज वास्ते तारीफ़ रा काम ने मनखआछा गणे है। पछे भले ही वो शास्त्र शूँ विरुद्ध व्हो' पर मामूली आदमी वाँ ने छोड़ नी शके। कुछ वत्ता आदमी शास्त्र री परवा करे पण लोगाँ री नी ने सब शूँ ऊँचा केवल आत्म-सुख री परवा आगे कणी री ही परवा नी राखे। वोहीज जीवन मुक्त वाजे वणाँरा आछा काम संसार ने देखावा ने नी, पण स्वाभाविक ही व्हे' है। बड़ा आदम्याँ रे नखला जीरी तारीफ करे सो ही करवा लाग जाय। मद्य अन्याय आदि दुर्व्यसनाँ ने भी आछा गणे, पर प्रत्यय ईंरो ही नाम है।

(दूजां रा के'वा पर विश्वास)

॥ श्री हरिः ॥

अनुभव-प्रकाश

॥ ॐ तत्सत् ॥

अनुभव-प्रकाश

१—परमात्माने जी, नी हे रे (ढूंढे) वी तो मूर्ख है हीज, पण हेरे, वा भी समझणा तो कोय नी।

२—हेर्या शूँ हीज हरि लाधे, पण लाध्याँ पे'ली भी गम्या तो नी हा।

३—सूरज नारायण रे पगां लागवारे वास्ते मुरजी व्हे' तो नीचा पड़ो, मुरजी व्हे' उभा व्हो मुरजी व्हे' कई मती करो, ने मुरजी व्हे' जोई करो वणीरा तो पगां में हीज हाँ।

४—भगवान रो आसरो लेणो तो जदी, के वो छोड्यो व्हे' वा छूटतो व्हे'। परमेश्वर ने याद राखणो जतरो दोरो (कठिन) है, वणी पच्चे भी वींने, भूल जाणो बत्तो दोरो है।

५—परमात्मा ने म्हँ हात शूँ हात मिलाय ने टे'ल रिया हाँ पण दोही दोयां ने हेरता फिररिया हाँ। वी लाध जावे तो म्हँ. छुप जावूं, ने म्हँ लाध जाऊँ तो वी छुप जावे। पण हात शूँ हात नी

छूटे। अस्यो नवो ख्याल खेल रिया हां। हे नाथ, थूँ हीज म्हने देख, म्हूँ थने देखवारी करूँ ने हीज थूँ छुपे है।

६—म्हें थने जागता थकाने सुवाय दीधो, ने थें म्हने सूता थका ने जगाय दीधो।

७—हे प्राणाधार! वणावटी प्रेम तोम्हारे दाय-नी लागो, ई थूँ स्वाभाविक ही रे'वा दे'।

८—एक मनख म्हने केवा लागो के थूं प्राण-नाथ रा म्हने दर्शण कराव और जदी म्हें थने कियो के वो मूर्ख यूं के वे है, तो थें कियो के वो तो म्हूँ हीज हो। जदी तो लाज शूँ म्हारी पती बोलणी ही नी आयो।

९—कोई कहे के थूँ संसार ने कूंकर देखे है, तो म्हूँ केवूं के प्यारा री आँख में बैठो बैठो देखूँ हूँ।

१०—ले आव, आपां आँख मिचावणी खेलाँ। अबे म्हूँ छुपूँ थूँ हेरज्ये, यो कई सुभाव साथे साथे आय रियो है, छुपवा क्यूँ नी देवे। वो, लो जठे छुपूँ वठे ही देख रियो है। ले अब म्हारीज आँखा मीचलूँ तो यो नखेरो नवो बोलवा लाग गियो, ले' कान मूंदूं तो यो लो' ऊँचाय ने खोळा में हीज

बैठाय लीधो, थारे शूँ मरने भी नी छुप शकूँ। पे'ली तो के'णो आँख मिचावणी खेलो, ने पछेयूं या कईं आँख मिचावणी बाजे के आँख खुलावणी।

११—एक आदमी के' रियो हो के ब्रह्मज्ञान कईं व्हे' है? ने दूजो के' रियो हो के भ्रमज्ञान कईं व्हे' है? म्हने खबर नी पड़ी के यो वणाँरी बोली रो फेर हो के समझ रो।

१२—ले'अबे थूँ छुप, म्हूँ थने हेरूँ; यो कईं सुभाव थारा में श्यान है, के नी, छुपवारी कियो के चोड़े व्हेवारी। वाहवा सामो म्हने हीज म्हने क्यूँ छुपावे है।

१३—अबे म्हूँ छुपने जावूँ ही कठे, जी शूँ ले' आव, आपां प्रेम शूँ मिलां, ने अबे या आँख मिचावणी या खुलावणी छोड़ दे।

१४—ले' आव अबे आपां कवित्त केवां। म्हूं बोलूं जींरो थूं अर्थ कर, ने थूं बोले जीरो म्हूं अर्थ करूं।

फेर, वो रो वो सुभाव वचे वचे बोलवा लाग-गियो म्हने तो बोलवा ही नी देवे, ने आप ही आप बोले ने आप ही आप अर्थ करवा लाग गियो।

१५—ले' म्हूं थारी स्तुति करूं, फेर वो हीज

सुभाव, थूं हीज थारी स्तुति करवा लाग गियो, यो थारो बड़ा पणो है, के श्रोछा पणो। व्हा, यो पण म्हने नी केवा दीधो।

१६—ले' आव, आपां वाड़ी देखाँ, फेर वोरो वो सुभाव, म्हंने तो देखवा ही नी देवे, ने आप हीज देखवा लाग जाय।

अणीरो श्रोलंबोपण नी देवा दे' ने आप हीज बोल जावे। लिखने दे' दूंतो लिखवाहो नी दे'ने आप हीज लिखवा लाग जाय।

१७—हे' बिहारी थने कतराक गोप्यां ने उघाड़ी देख वारो दोष लगावे, पण थारे मुंडा आगे ढांक्यो कूंण रियो है। थारे मुंडा आगे तो सारा ही उघाड़ा है हीज।

१८—लुगाई लुगाई री लाज नी करे, ने पति शूं तो लाज कर ही कई शके, पण हे पुरुषोत्तम (पति) थारे शूं ज्या लाज नी करे वाही सांची पतिव्रता है, ने थारे शूं लाज करे सो ही कुलटा कुलच्छणी है।

१९—मनख केवे के आकाश विनां थांभे ठेर रियो है, पण वणां ने या खबर नी के, वो, ने यो आकाश एक ही थांभा पे ठेर रिया है।

२०—झूंठ बोलणो खोटो है, तो थूं झूंठ क्यूं बोलरियो है, ने जो थूं सांच बोले तो फेर झूठ बोलवा वाळो कुण है ? अणी छळ रो भी पार है कई !

२१—आज एक आदमी एक सिद्ध महात्मारी संगति रे वास्ते दोड़्यो जायरियो हो, ने एक सिद्ध महात्मा वीं ने दौड़ायाँ ले' जाय रिया हा। वठे जावा पे दोही सिद्ध सिद्ध तो एक व्हे' गिया ने बापड़ो वो वचे ही पिलाय गियो। (अहंकार ?)

२२—ऊँचो नीचो नी देखणो, सूधो देखणो। ज्यूं बन्दूकरी पंखी देखतीं वगत वीं ने भी नी देखणी तो आपणे हीज बन्दूक लाग जावे, ने विना ही घाव कियाँ प्राण निकळ जावे।

२३—देखाँ आपाँ दोही रूठाँ। थूं म्हारे शूं बोले मती, म्हूं थारे शुं नी बोलूं। दोही साथे ही साथे मुळक्या, ने वीलो' दोही साथे ही साथे बोल गिया। आगे पाछे कोई नी रिया, दोही पेड़ा साथे ही रुक्या ने साथे ही गुड़्या।

२४—देखां, आपां आंखां मिलावां, यो कई थें तो म्हारी आंख में आँख घाल दीधी, म्हूं तो थारीज आंख शूं देख रियो हूं। ने म्हारी आंख भी थारी व्हे' गी'। वाहवा आंख शूं चोरने पकड़े

ने आँखरा चोरने कूंकर कोई पकड़ शके। हे लम्पट! साथे रो साथे क्यूं लागो रे' है, के, क तो आगे निकळजा, ने कोक पाछे रे' जा, पण थूं वांसो कायरो छोड़े। थूं तो रत्ती भर भी अठी उठी नी व्हेवे।

२५—आज थारा सब पोल खोल दूँगा। हां, या कई बात, यो कई सुभाव, दूसरा री बातां तो खूब सुणणो, ने आपरी बात आवे ने मूंडा आड़ो हाथ दे' देणो। पण यूं कीधां कई आत छुपी थोड़ी रे' शके है। जाणे सो तो जाण ही जायगा। थारे मूंडा आड़ो हाथ देवा शूँ ही 'पड़ांख (मालूम) पड़गी' औरां रा इंदाज शूँ आपणे कई मनो मन कई मुळके है, अरयो कई आनंद आयो। थोड़ो म्हांने भी तो खबर पड़े।

२६—थूं आंख क्यूं नी टमकारे है? कई जदीज लोग थने महादेव के' है?

२७—मनख केवे मरतो वगत रामरो नाम ले' णो। पण राम रो नाम लेवे तो जीवतो ही वणी वगत मर जावे। जदीज केवे, राम राम रो मरा मरा व्हे' जावे है। ने मरा मरा रो राम राम व्हे' जावे है थारी माया थूं जाणे।

२८—काच में तो म्हने म्हारो मूंड़ो नीज दीखे म्हूँ तो आंख रा कांच में म्हारो मूंड़ो कई म्हने आखा ने ही देखूंगा, के दिखूंगा, के देखावूंगा, के बोलूंगा, के चुप रे' जावूंगा ? म्हूं काच हूँ के थूं काच है ? म्हारी कल्ली उतार देगा तो पछे थारो मूड़ो कणी में दीखेगा, थूं आस है, के म्हूँ आस हूँ ? म्हारी ठंडाई मिटाय दे'गा तो थारी बोली कठे सुणेगा ? आपां दोही दर्पण हां बस अबे चलकापे चलको पडवा दे।

२९—हे अन्तर जामी ! मनख थने जोर जोर शूँ हेला पाडे, सो वी, यूं जाणता दीखे है, के थूं ऊंचो शुणतो व्हे'गा। पण या खबर कोय नी, के थूं ऊंचो नी पण नीचो शुणे है।

३०—हे अनोखा गघेल्या ! (रें'ठ हांकवा वाळा) यो तीन तरे' री रें'ठ हांकणो थने कणी शिखायो। के कदी तो अरयो हांके के खाली माळ फिरे, ने घेंड़ा रीती हीज रियां जाय, ने कदी अरयो हांके रीती भरी व्हे'ती जाय, ने कदी अरयो हांके के घेड़ां रीती व्हे' ही नी, ने खेती हरी व्हे'ती रे' ने घेड़ां व्हे' ती रेवे।

३१—आपां खूंणी सूं खूंणी ठकोर बैठां हां, ने फेर यो परस्पर पत्र व्यवहार क्यूं।

३२—कई ई कागद है के काच ? हे अनोखा देश रा वासी, थारी भाषा म्हने भी भणाव, के जीमें विना बोल्या बोले, विना आंख वांचे, ने विनां कागद लिखे, ने विना ही जीभ वातां करे, नें घरवाळा में घर रेवे। अस्या देश रा हाल शूं म्हने वाकब कर क्यूँ के दूजो कोई या भाषा नी जाणे है।

३३—हे काचभवन रा निवासी! थें तो त्रिभुवन ने काच भवन कर राख्यो है, जदी'ज कियो है, के:—

मुकर मुकर सब वस्तु भई, नयन अयन किय लाल।
दृग पसार जित जित अली, तित तित लख गोपाल॥

थारे दोहा में कणी ठीक हीज लिख्यो है के:—

कहन सुनन की है नहीं, लिखी पढ़ी नहिं जात।
तुम्हरे मन सों जानियो, मेरे मन की बात॥

— —

॥ श्री हरिः ॥

हृदय-रहस्य

❀ ॐ ❀

हृदय-रहस्य

जिसमें

सर्व मत सम्मत वेदान्त वेद्य अर्थात् ज्ञानयोग (राज-राजेश्वर योग) के मुख्य लक्ष्य का वर्णन किया गया है। जिस प्रकार आत्म-लाभ का मुख्य द्वार होने में मनुष्य शरीर की अन्य शरीरों की अपेक्षा प्रशंसा वेद में कही है, उसी प्रकार अन्य द्वारों की अपेक्षा हृद (हृदय) की भी मुख्यता आत्म-लाभ के लिए कही गई है। जैसे आत्म-प्राप्ति के बिना मनुष्य शरीर व्यर्थ अन्य शरीरों के ही समान है, वैसे ही हृदय स्थान भी अन्य द्वारों के ही समान है । मनुष्य-शरीर का फल हृदयस्थ आत्मा को जानना ही है, यथा (मनुष्याधिकारित्वात्) मनुष्य ही हृदयस्थ आत्मा को जानने का अधिकारी है, ऐसा व्यास सूत्र में विस्तृत कथन है।

॥ ३ॐ ॥

समर्पण

दयानिधान ! परमपूज्य चरण कमलों में यह हृदय रहस्य की पुष्पांजली लेकर उपस्थित हूँ, 'परन्तु किस साहस से अंगीकार करने की प्रार्थना करूं । जो सुदामा के तंदुल और शबरी के बेर की उपमा दूं, तो उनके समान भक्ति-भाव का इस मलिन में पूरा अभाव है, परन्तु कदाचित कुछ-कुछ यहूँ तो वही आपके दयालु स्वभाव का भरोसा है, उसी के आधार से विनय है कि हृदय में से प्रेरणा करके जो लिखाया गया है, वही लिख कर उन्हीं आप के अर्पण करता हूँ । इस हृदय-रहस्य में मेरा कुछ भी नहीं है। मेरा इसमें कुछ ढूंढूं तो सिवाय प्रमाद विपर्यय ज्ञान के और नहीं मिलता है । फिर मैं इसे आपके अर्पण करने का प्रयत्न जो करूं तो आपके दर्शन किस प्रकार पाऊं। क्योंकि (यावत् प्रयत्नलेशोस्ति तावत्तत्वोदयः कुतः) जब तक प्रयत्न का लेश भी है तब तक तत्व का उदय कहां से होवे । इससे आप ही गृहण कीजिये और इसके साथ-साथ अपनी प्रकाश रूप कृपादृष्टि से मेरे अहंता अज्ञान अंधकार को भी निज प्रकाशमय कर दीजिये ।

कृपा दृष्टि का आकांक्षी अनुचर
चतुरसिंह

॥ ॐ ॥

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः

हृदय रहस्य

शिष्य— हे कृपालो[१] ! आपकी दया से हृदय की इतनी महिमा जान कर मुझे बहुत आनन्द हुवा । सत् शास्त्रों में यद्यपि यह प्रकरण अनेक जगह आता है, परन्तु गुरु-कृपा बिना जाना ही अनजाना रह जाता है, हुवा भी अनहुवा हो जाता है; इसलिए वेद में आज्ञा है कि गुरु से ही ज्ञान होता है (आचार्यवान्पुरुषो वेद) । फिर श्री गीताजी में भी आज्ञा है कि (उपदेक्ष्यंति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः) "तुझे तत्वदर्शी ज्ञानी ज्ञान का उपदेश करेंगे"। मेरे सुकृतों की कहाँ तक प्रशंसा करूँ कि आपके समान आचार्य मिले । यदि ऐसा अवसर मिलने पर भी जो शिष्य अपना

---

१ दयालो कहने से यह अभिप्राय है कि माता के और पुत्र के बीच में भी कुछ अन्तर (दूर) रहता है, परन्तु गुरु तो इतने दयालु हैं कि उनके बिना मैं रह ही नहीं सकता अर्थात् मेरे और गुरु के बीच में दूसरा कुछ नहीं है, इतने निकट हैं (सुहृदं सर्व भूताना)।

संदेह न मिटा लेवे तो उसके समान और कोई अभागा भी नहीं है।

हे प्रभो ! वह हृदय क्या वस्तु है और कहाँ है ?

गुरु—यह परम रहस्य तू पूछ रहा है सो यदि अनधिकारी को कहने योग्य नहीं तो अधिकारी से छिपाने योग्य भी यह नहीं है। हे प्रिय ! चैतन्य का ही नाम हृदय है और इस चैतन्य की प्राप्ति जिस स्थान में होवे उस स्थान का भी नाम हृदय है। जैसे आग का ही नाम अग्नि (वन्हि) है और जब वही आग काष्ठ में प्रज्वलित दिखती है, तब उस काष्ठ को भी आग ही कह कर पुकारते हैं। इसी प्रकार जहां चैतन्य की प्राप्ति होती है, उसे भी हृदय ही कहते हैं। उपनिषद् में हृदय, मन, विज्ञान, प्रज्ञान आदि पर्याय एक ही चैतन्य के नाम कहे गये हैं। इस प्रकार से यह चैतन्य हृदय सर्वव्यापक है, परन्तु जहाँ इसका विशेष रूप से ज्ञान होता है, वही सूक्ष्म हृदय कहा जाता है और वह सूक्ष्म हृदय यह है इसी में तू चैतन्य स्वरूप विराजमान रहता है।

शिष्य—महाराज ! इस सूक्ष्म हृदय का

तो आपकी अनुग्रह से मुझे साक्षात्कार हो गया। अब उस चैतन्य हृदय की प्राप्ति इसमें किस प्रकार होती है अर्थात् उक्त चैतन्य हृदय का भी मुझे इसमें साक्षात्कार करा दीजिये, क्योंकि आपने आज्ञा की है कि सूक्ष्म हृदय में चैतन्य का ज्ञान प्राप्त होता है। परन्तु मुझे तो वह चैतन्य इसके भीतर दिखाई नहीं देता ?

गुरु—हे सौम्य ! जिससे तुझे यह सूक्ष्म हृदय दिख रहा है, वह क्या इस सूक्ष्म हृदय से कहीं अन्य कोई जड़ वस्तु है ? यही चैतन्य का यही साक्षात्कार है। अथवा यों समझ कि जैसे काष्ठ में आग का साक्षात्कार होता है, उसी प्रकार इस स्थान में ही चैतन्य का साक्षात्कार हो रहा है। जैसे काष्ठ ही आग है, ऐसा नहीं कहा जाता, वैसे ही यह स्थान चैतन्य है, यों भी नहीं कह सकते। जैसे सब काष्ठ में आग व्यापक होकर भी प्रज्वलित काष्ठ में ही विशेष रूप से प्राप्त होती है, वैसे ही सर्वव्यापक चैतन्य भी इसी स्थान में विशेष रूप से प्रतीत होता है। इसी कारण इस हृदय की अनंत संत और ग्रन्थ प्रशंसा करते हैं, नहीं तो जितने अवयव इस शरीर के हैं सब ही नाशवान हैं।

परन्तु जैसे पार उतारने के कारण ही नौका की आवश्यकता रहती है, उसी प्रकार चैतन्य ज्ञान के लिए इस हृदय स्थान को जानने की आवश्यकता है। जो कोई पार तो नहीं जावे और नौका ही में रहा करे तो सम्भव है कि जब नौका गले तो वह भी डूब जावे। इसी प्रकार हृदय स्थान की केवल प्रशंसा सुन कर जान लेवे और चैतन्य की उपेक्षा (बेपरवाही) कर देवे, उसे हृदय स्थान का ज्ञान प्रमाद के कारण उपयोगी नहीं हो सकता। हे प्रिय! बुझा हुआ अंगार किसी काम का नहीं रहता, उसी प्रकार यह हृदय-स्थान तो मृतक के भी रहता है, परन्तु इससे क्या प्रयोजन है ? यह तो तुझे धन मिलने के लिए मंदिर के तुल्य कहा है। जैसे एक धनाढ्य सेठ के मरने पर उसके लड़कों को एक बही में लिखा हुआ मिला कि "मैंने अपना कुल द्रव्य प्राचीन चंद्रशेखर (शिव) के मंदिर के शिखर में गाड़ा है, सो पौष शुक्ला द्वितीया के दिन तृतीय पहर में खोद कर निकाल लेना।" जब लड़के उक्त शिखर को गिराने लगे तो लोगों में उनकी बहुत निन्दा हुई और राजाज्ञा से उसका यह प्रबन्ध हो गया कि उसे कोई गिरा

न सके। जब बहुत दिन उन्हें दारिद्रय का कष्ट उठाते हो गये तब उनमें से एक लड़के ने कहा- "हमारे पिता मूर्ख थे जो ऐसे स्थान में रखकर अपने सर्वस्व को खो दिया"। एक ने कहा—"यह बही उन्होंने किसी नशे की प्रबलता में लिख दी है। क्योंकि जब कोई शिखर को खोद ही नहीं सकता तो उन्होंने किस प्रकार धन रक्खा होवेगा ?" किसी ने कहा "यह बही उन्होंने नहीं लिखी, परन्तु किसो गुमास्ते मुनोम ने धन चुरा कर लिख दी है।" परन्तु एक लड़का जो बुद्धिमान पिता में श्रद्धा रखता था, उसने अपने पिता के मित्र से यह सम्पूर्ण बात कह सुनाई और पूछा कि इसका रहस्य क्या है ? तब उस वृद्ध पुरुष ने उस लड़के को बुद्धिमान् और उस धन को पाने का अधिकारी समझ कर कहा:—"हे सुशील ! तेरे पिता ने अनेक कष्टों से संचित द्रव्य को इसी-लिये घर में प्रकट नहीं रक्खा कि ये लड़के जो दुष्ट होवेंगे तो व्यर्थ ही खराब कर देंगे, परन्तु योग्य अधिकारी को जो यह द्रव्य नहीं मिलेगा तो भी मेरा श्रम यों ही रहा। इसलिए उन्होंने उक्त बही लिखी है सो तुझे सब प्रकार अधिकारो

समझ कर यह द्रव्य बताता हूँ। सुन, वही में पौष शुक्ला द्वितीया के दिन तृतीय प्रहर लिखा है। आज वही दिन है और दोपहर भी हो गया है, अब तीसरा प्रहर आरहा है। इसमें यों विचारना चाहिये कि जब शिखर ही में धन है तो यह समय नियत करने की क्या आवश्यकता थी? फिर प्राचीन शिव के मंदिर के विशेषण से भी यही ज्ञात होता है कि प्राचीन शिखर में गाड़ा सो भी नहीं हो सकता। इसलिए उन्होंने उक्त मंदिर के शिखर की छाया में धन गाड़ा है, जो कि उक्त दिन तेरे ही आंगन में आती है। सो तू दूसरे लोग नहीं जाने वैसे निकाल लेना।" यह बात उसको दृढ़ होगई और अपने आंगन में समझ कर उक्त शिखर की छाया में खोद यथेष्ट धन निकाल लिया और अपने बड़े भाइयों को भी आवश्यकतानुसार देता रहा।

इसका भावार्थ यह है कि (धनाढ्य सेठ—प्राचीन महर्षि) (धन-चैतन्य ब्रह्म) (लड़के-सब ही मानव) (वही—सत् शास्त्र) (चंद्रशेखर शिव का मंदिर—मनुष्य जन्म) (पौष शुक्ला द्वितीया का तृतीय प्रहर-सतोगुण) (खोदकर—अभ्यास कर, विचार कर)

(गिराने लगे—व्यर्थ हठधर्मी करने लगे) (निंदा हुई—अभिमान हुवा कि हम ऐसे तपस्वी हैं) (राजाज्ञा से प्रबन्ध—प्रारब्ध से आयुष्य की नियति) (दारिद्रय का दुःख—अनात्मज्ञता) (पिता के विषय में विचार—अनेक वेद विरुद्ध दुराग्रही मनुष्यों के कुतर्क)(बुद्धिमान लड़का—सत्य का शोधक मुमुक्षु) (पिता का मित्र-वर्तमान सद्गुरु)(खराब करना-विश्वास नहीं करना)(दुपहर—रजोगुण) (छाया—हृदय में जो प्रतीत होती है) (तेरा ही आंगन—तेरा ही इस शरीर का हृदय-स्थान) (दूसरे लोग नहीं जानें—दंभ रहित गुप्त साधन) (भाइयों को आवश्यकतानुसार—जिज्ञासानुसार) (तेरे ही आंगन में आती है। ईश्वरानुग्रह) इति ।

इसी प्रकार तू भी अपने चैतन्य धन को अपने ही हृदय-स्थान में प्राप्त करले ।

शिष्य—दयानिधान ! मुझे इस आपके उपदेश से चैतन्य का कुछ-कुछ ज्ञान हुआ है। परन्तु, जब चैतन्य की प्राप्ति के ही लिए स्थूलारुंधती न्याय से हृदय-स्थान जानने की आवश्यकता है, तो कृपा करके चैतन्य का ठीक ज्ञान होने के लिए ही फिर मुझे कुछ आज्ञा करिये।क्योंकि हृदय स्थान को तो

आपकी कृपा से यथार्थ समझ लिया कि चैतन्य का जहां साक्षात्कार हो जावे वही यह हृदय है। अब चैतन्य इसमें किस प्रकार प्राप्त होता है सोही मुझे अपना समझ कर आज्ञा करिये ?

गुरु—हे प्रिय ! अब तुझे चैतन्य का साक्षात् उपदेश करता हूँ, तू सावधान होकर श्रवण कर।

चैतन्य ब्रह्म तेरा ही स्वरूप है, जिसमें तुझे यह सूक्ष्म हृदय-स्थान दीख रहा है, वही चैतन्य तेरा आत्मा है। यह सूक्ष्म हृदय-स्थान में रह कर जो हृदय-स्थान को ही देख रहा है।

प्रश्न—महाराज ! इस हृदय का ज्ञान तो मन से हो रहा है सो क्या मन ही आत्मा है ?

उत्तर—मन को ज्ञान-शक्ति नहीं है। ज्ञान स्वरूप आत्मा का है। इसी से आत्मा को द्रष्टा कहा जाता है। जैसे आँख, पदार्थ की द्रष्टा है और पदार्थ दृश्य है, मन आँख का द्रष्टा है तो आँख भी दृश्य ही है, बुद्धि मन की द्रष्टा है तो मन दृश्य है। यों ही सर्व दृश्य हैं अर्थात् ज्यों इतने जड़ पदार्थ हैं। यों ही मन, बुद्धि भी जड़ और दृश्य हैं। ज्यों इतने पदार्थों का ज्ञान होता है, यों हो मन का भी आत्मा से ज्ञान होता है। इस कारण ज्ञान का भी ज्ञान

आत्मा—सत्, चित्, आनंद स्वरूप है। मन बुद्धि आदि एक ही द्रव्य के अनेक नाम समझाने के लिए कल्पना किये गये हैं, अर्थात् इन सब का जो आधार, जीव का भी जो जीव, वही आत्मा है उससे जानने की इच्छा भी उसी के आधार से है अर्थात् "मैं हूँ" यह भी भान जिसके आश्रय से है, वही निर्विकल्प, अकथ, सर्वदा प्राप्त अर्थात् नित्य आत्मा है। जो देखने से भी नहीं दिखता और बिन देखे भी कहीं नहीं जाता, सहज सदा प्राप्त है, वही चैतन्य हृदय है। यही ज्ञान-नेत्र है और इसी सूक्ष्म हृदय में इसकी प्राप्ति है। जो दर्पण में तेरे नेत्र दिखाई दे रहे हैं और नेत्र में दर्पण दीख रहा है, परन्तु दर्पण और नेत्र दोनों जिसमें दीख रहे हैं वही चैतन्य हृदय है, अर्थात् दर्पण, नेत्र ये दोनों जड़ वस्तु जिसमें दीख रहे हैं, वही चैतन्य है।

हे प्रिय! दूर से एक प्रेमी अपने प्रिय मित्र को देखे और वह भी उसे देखे, तब परस्पर में जो प्रेम का अनुभव करता है वही चैतन्य है। यह बड़े बड़े पृथ्वी, पहाड़, वन, समुद्र आदि जिसमें प्रतीत होते हैं वही चैतन्य है। जिसमें बहुत दूर

के तारा मंडल दीख रहे हैं वही चैतन्य है अर्थात् समग्र जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति जिसमें प्रतीत होती हैं वही ज्ञान-स्वरूप है। हे सौम्य! जिसमें अज्ञान का भी ज्ञान होता है वही अविनाशी ज्ञान तू है। जो दर्पण में नेत्र दीखते हैं, उस दर्पण को भी छोड़ दे और नेत्र को भी छोड़ कर जो रहे वही चैतन्य है। हे विज्ञ! गुरु के उपदेश में संशय मोह, नहीं होते हैं, परन्तु शिष्य ही के संशय मोह, उसको गुरु वाक्य में प्रतीत होते हैं। क्योंकि स्थूल वृत्ति के कारण उसे वह सूक्ष्म विषय भी विपरीत भासता है। जब गुरु कहता है कि तेरे इस सूक्ष्म हृदय में चैतन्य आत्मा है, तब शिष्य उस चैतन्य को भी किसी स्थूल वस्तु की तरह देखना चाहता है। अपनी स्थूल वृत्ति के कारण आत्मा में ही हृदय स्थान को देखने लग जाता है। तब गुरु कहते हैं, हाँ यही आत्मा है, जिसमें तुझे यह सूक्ष्म हृदय प्रतीत होता है। तब सुज्ञ शिष्य तुरन्त चैतन्य स्वरूप को पहिचान लेता है। जैसे [1]चन्द्र को वृक्ष की टहनी

[1] जैसे वृक्ष की टहनी भी चन्द्र के प्रकाश ही से दीखती है और चन्द्रमा का साक्षात्कार भी अपने ही प्रकाश से होता है, परन्तु टहनी वहां निमित्त मात्र है। (चन्द्र=आत्मा। टहनी-हृदय)

पर दिखाया जाता है, उसमें बुद्धिमान तुरन्त चंद्र दर्शन कर लेता है, परन्तु मूर्ख टहनी को ही चंद्र समझने लग जाता है और उसी टहनी को देखा करता है। इसी प्रकार हृदय का ज्ञान गुरु चैतन्य प्राप्ति के लिए कराते हैं; और हृदय के ज्ञान के संग ही चैतन्य हृदय का ज्ञान भी मिला हुवा ही रहता है। क्योंकि हृदय-स्थान में से जो हृदय-स्थान को जान रहा है, वही ज्ञान-स्वरूप आत्मा है। जैसे बगीचे को सब कोई देखते हैं; पर उस समय पृथ्वी का ज्ञान किसी ही को रहता है और चंद्र, नक्षत्र को देखते समय आकाश का ज्ञान विरले को ही रहता है, वैसे ही साधक आधार को भूल हृदय-स्थान को ही देखते रह जाता है। परन्तु जिसमें वह दीख रहा है और जो उसमें है और जिसके जानने के लिए ही इस सूक्ष्म हृदय का उपदेश हुवा, उस ज्ञान-स्वरूप चैतन्य में विरले ही सुशिष्य तन्मय (लीन) होते हैं। हे भाई! इस सहज सर्वोत्तम अविनाशी चैतन्य आप की प्राप्ति में क्या श्रम है? केवल श्रद्धा की ही आवश्यकता है, सो तो नहीं प्राप्त होते और जो कठिन नीच क्षण-भंगुर जड़ अन्य है उसी के लिए मारे-

मारे फिरते हैं। अस्तु! फिर भी चैतन्य स्मृति के लिए मैं जो वचन कहता हूँ, उन्हें तू ध्यान लगा कर सुन । जितने सत् शास्त्र हैं, सब ही चैतन्य प्रतिपादक हैं और अनेक युक्तियें उनमें इसी को जानने के लिए कही है। जिस प्रकार रथ का पहिया मध्य की कील के आधार पर ही भ्रमण करता है, उसी प्रकार सम्पूर्ण शास्त्र इसी चैतन्य आधार पर कहे गये हैं। जो असत्शास्त्र इसी के आधार पर हैं तो भी उनका मुंह इसकी तरफ नहीं है और सत् शास्त्र इसी के सन्मुख हैं। परन्तु आत्मा तो एक स्थिर है और विचार कर देखने से रथ का पहिया भी इसी पर स्थित है। वह भी अन्यत्र कहीं नहीं जाता तो भी लोक में पहिये को चलता कहते हैं और कील को स्थिर कहते हैं। इसी प्रकार हृदय-स्थान को रथ-नाभी अर्थात् पहिये के बीच का छिद्र समझना चाहिये और चैतन्य को उक्त मध्य की कील समझना चाहिये। इसीलिये कहा गया है कि—लोह-दंड प्रमाणेन कृतदृष्टि समभ्यसेत् (लोह दंडवत् दृष्टि करि, गे चहुँ तारक माय)। इसका भाव यही है कि स्थिर चित्त

करना। जिस प्रकार लोह की शलाका नहीं हिलती उसी प्रकार दृष्टि का स्थिर होना ही चैतन्य ब्रह्म है।

शिष्य—हे करुणा-सिन्धो! मैं अपने अज्ञान से ही प्रश्न करता हूँ परन्तु आप अपनी दयालुता से विना ही उद्वेग प्रेम से उत्तर देते रहते हैं। परन्तु क्या किया जाय, विना पूछे जो मैं बैठा रहूँ तो संदेह भी मेरे चित्त में बैठा रहे, और "संशयात्मा विनश्यति" यह भगवद्वचन हैं। इसलिए मैं वारंवार जो आपको श्रम देता हूँ, क्षमा करें।

गुरु—हे विनीत! तू निःसंदेह यथाकाम प्रश्न कर, मैं तुझ से इस बात पर बहुत प्रसन्न हूँ।

शिष्य का निश्चय अब किस-किस पर है, मेरे कथन से इसको कितना निश्चय हुवा, और कितना बाकी है, मेरे कथन का क्या भाव (अर्थ) इसने समझा, जिससे इसको फिर भी इस प्रकार का सन्देह हुवा। अब किस प्रकार कहने से इसे यथार्थ बोध होवेगा और यह संदेह होने से ज्ञात होता है कि इतनी उन्नत भूमिका को तो यह पहुंच गया और इतना ही निश्चय होना अब शेष रहा है। जैसे भगवद्वचन है कि (बहूनां जन्मनामंते) "बहुत जन्म उपरान्त ज्ञानवान मुझे प्राप्त होता है, सब

ही वासुदेव है, ऐसा वह महात्मा अत्यंत दुर्लभ है।'

भावार्थः—ज्ञानवान तो सब ही हैं परन्तु मुझे बहुत जन्मों के अंत में कोई प्राप्त होता है। यहां दृढ़ निश्चय ही जन्म समझना चाहिये; जैसे किसी को मद्य ही सुखप्रद है, इससे अधिक और क्या है। ऐसा निश्चय हो रहा है यही उसका एक जन्म समझना चाहिये। परन्तु वैद्य से मद्य के अवगुण सुन कर जब उसे अनुभव भी कर लेता है और लोक में भी जब उसका विश्वास नहीं रहता, तब वही ज्ञानवान उस मद्य का त्याग कर देता है और उसे यह निश्चय हो जाता है कि वास्तव में मद्य ही मद्यः दुःखप्रद है। यही उसका प्रथम का देहान्त हुवा और दूसरा नया जन्म यह हुआ कि मांस तो हानिप्रद नहीं प्रत्युत लाभप्रद ही है। इसी प्रकार एक निश्चय का होना जन्म और उसका छूटना मृत्यु, फिर दूसरा निश्चय होना जन्म। इसी प्रकार निरन्तर (बहुत) अनंत जन्म हुआ करते हैं और वे जन्म ज्ञान से ही होते हैं। परन्तु जब बहुत जन्मों (निश्चयों) का अंत हो जाता है, वही मेरी प्राप्ति है अर्थात् बहुत निश्चयों के अंत में वही

ज्ञानवान मुझे अपने आप को प्राप्त हो जाता है। वह अंत निश्चयों का क्या है ? इस पर आज्ञा करते हैं कि सब ही चैतन्य वासुदेव है इति, यही मेरी प्राप्ति है। परन्तु वह महात्मा अति दुर्लभ है, जिसको कि इस प्रकार जन्मों का अंत प्राप्त होवे। यही बात श्री ईसा महात्मा ने निकोदोम नामी एक वृद्ध को आज्ञा की है कि "मैं तुझे सच कहता हूँ कि जो कोई फिरके न जन्मे—दूसरा जन्म ग्रहण नहीं करे अर्थात् अपने विपरीत निश्चय को त्याग कर सत्य का निश्चय न लेवे, वह ईश्वर का राज्य नहीं देख सकता है" इत्यादि। इसी प्रकार तेरे भी बहुत जन्मों का अंत अब आ गया है, ऐसा मुझे प्रतीत होता है। जब तू मेरे पास आया था, तब से अबतक तेरे अनेक जन्म हो चुके हैं। परन्तु अब तेरे कुछ थोड़े से ही जन्म बाकी हैं। सो उनका भी प्रश्नोत्तर द्वारा अंत हो जाएगा। यदि एक भी जन्म बाकी रह जाय, तो उसी में से फिर अनेक जन्म का घटीयंत्र बन जाता है। सो तू यथेच्छ प्रश्न कर, मैं सहर्ष उत्तर देऊंगा।

शिष्य—प्रभो ! दृष्टि चैतन्य किस प्रकार होती है ? चैतन्य तो द्रष्टा को कहते हैं ?

गुरु—हे सुज्ञ ! स्थिर दृष्टि से चैतन्य ही मैंने कहा है। चैतन्य की स्थिरता में जो स्फुरण वही दृष्टि नाम को पाता है। यथा (योगश्चित्तवृत्ति निरोधः) (तदाद्रष्टुः स्वरूपे ऽ वस्थानम्) चित्त वृति का निरोध (स्थिरत्व) ही योग है, तब द्रष्टा की अपने आप में स्थिति होती है।

शिष्य—वृत्ति और दृष्टि में क्या अन्तर है ?

गुरु—नेत्र से जो वृत्ति प्रतीत होवे उसे ही दृष्टि कहते हैं। ऐसा व्यवहार[1] है परन्तु मेरे कहने का अभिप्राय चैतन्य ही से है। तू इधर ही ध्यान दे कि दृष्टि ही चैतन्य है। परन्तु जब वह देखने का काम करे तो दृष्टि नाम पड़ता है। देखने का काम करने से द्रष्टा और दीखने से वही दृश्य नाम को अंगीकार करती है। ज्यों स्त्री पति के भाव से है, जन्म देने से वह पुत्र की माता है, जन्म लेने से वह माता की पुत्री है। इसी प्रकार वही एक वस्तु भाव के अनुसार अनेक प्रकार की प्रतीत होती

---

१ परन्तु व्यवहार में भी कहते हैं कृपा दृष्टि बनी रहे तो जो दूर से भी रह सके वही दृष्टि है। सूक्ष्म दृष्टि या वृत्ति इसी का नाम है। इसी का अंतर करना अभीष्ट है।

है। वास्तव में उस स्त्री को स्थूल प्रतीत होने पर भी (कुछ है) इसके बिना और क्या कह सकते हैं? ज्यों इसका (है) यही मुख्य नाम है। ऐसे ही वृत्ति भी तू है इसी भांति समझले। यही वृत्ति की स्थिरता ब्रह्म है। जैसे कहा है कि "अंतर्लक्ष्यं बहिर दृष्टिः" "ऊर्ध्वमूल" ऊर्द्ध दृष्टिरधो द्रष्टि" "अनुसंधान मात्रेण योगोयं सिद्धि 'दायकः।" भीतर ज्ञान अर्थात् सुरत, बहिर दृष्टि, बहिर नेत्र की दृष्टि (वृत्ति) ऊर्द्ध में दृष्टि भी वही अस्ति-ज्ञान बाहिर दृष्टि नेत्र की वृत्ति ऊर्ध्व मूल अधः शाखः से भी यही प्रयोजन है। यह योग अनुसंधान (सुरति स्मृति विचार मात्र से ही) सिद्धि (मोक्ष को) देने वाला है। फिर श्रुति है कि (परां चिखानी व्यतृणत्स्वयंभूः?) इन्द्रियें बहिर्मुख ही परमात्मा ने रचना करीं सो अंतर में नहीं देख सकती। परन्तु कोई ही धीर प्रत्यगात्मा को देखता है अमृत की इच्छा से देखने को उलट के इत्यादि बहुत बचन हैं।

शिष्य—महा प्रभो! मुझे बारंबार यही

१ दृष्टि का अर्थ सुरता है ऐसा संत बचन से ज्ञात होता है।

विचार हुआ करता है कि अंतर में कैसे और कहाँ देखूँ ? कोई कहता है त्रिकुटी में तो कोई नाभी आदि स्थान बताते हैं। परन्तु मुझे तो कुछ भी नहीं दीखता और यह भी संदेह होता है कि नाभि आदि स्थान में परमात्मा कैसे प्राप्त होता है ?

गुरु—हे प्रिय ! वृत्ति को सूक्ष्म करने के लिए ये पट्चक्र आदि कथन किये गये हैं परन्तु तुझे उच्च विचार युक्त समझ कर यह राजराजेश्वर योग ही उपदेश किया । यह योग वेदान्त वेद्य है। तेरे अभिप्राय को भी मैं समझ गया सो सुन। जब बाहर के स्थूल विषयों का इन्द्रियों को त्याग होता है परन्तु अंतर में वेही उन्हें दिखाई देते हैं। इसका नाम राज योगी, वृत्ति का अन्तरमुख होना नहीं कहते । राज योग में तो पूर्वोक्त ही *चैतन्याकार होना अन्तरमुख* और *पदार्थाकार होना ही बुहिर्मुख है ।* अर्थात् स्फुरण ही बहिर्मुख पदार्थ, अविद्या, अज्ञान, माया, मन, अहंकार, आदि नाम से कहा गया है।

१ यह भी एक क्रम सूक्ष्म वृत्ति करने का है कि नासिकाग्र और नेत्र के बीच जो आकाश उसे देखा करे। नासाग्र और नेत्र दोनों को त्याग दे ?

उसी स्फुरण को चैतन्य समझना और लय होना जैसे जल के स्फुरण ही तरंग, चक्र, बुद बुद, आदि को जल ही समझना अथवा घट को मृत्तिका समझना ही वृत्ति को अंतरमुख कहा जाता है अर्थात् वृत्ति को चैतन्य समझना ही यहां अंतर-मुख कहा है, न कि बाहर के पदार्थ न दीखे इसलिए आँख बंद करना कानों के छिद्र बन्द करना वा प्राण पीडन करना इत्यादि तो हठ योग है जो नीचे के अधिकार के वास्ते कहे गये हैं। परन्तु तुझे इससे क्या प्रयोजन है? तू अब उपरोक्त वचनों का ध्यान से श्रवण कर कि उनका ठीक अभिप्राय क्या है? 'अंतर्लक्ष्य बहिर्दृष्टिः' इसका यह अभिप्राय है कि बाहर जो पदार्थाकार दृष्टि हो रही है उस दृष्टि का लक्ष्य भीतर ही होना चाहिये। इससे यह अभिप्राय नहीं है कि शरीर में लक्ष्य होवे। शरीर में लक्ष्य होने से ही तो बंधन हुआ है फिर उसे ही दृष्टि करने की क्या आवश्य-कता? यहाँ अंतर का अर्थ वृत्ति ही में लक्ष्य है अर्थात् वृत्ति के ही भीतर वृत्ति को लय कर देना, जैसे कछुआ अपने ही में अपने को लय कर देवे। उसी प्रकार वृत्ति को अपने ही (वृत्ति में ही) लय

कर देना यही अंतर लक्ष्य का अर्थ है। अब कुछ अंतर और बहिर का अर्थ कहता हूँ जिससे यह विषय और भी स्पष्ट हो जावेगा। अंतर किसे कहना चाहिए? हे सुबुद्धे! व्यवहार के सब ही शब्दार्थ सापेक्ष हैं। तो भी स्थाली पुलाक न्याय से इसे ही तू समझ कि अंतर का अर्थ भीतर है। अब भीतर किस को कहना चाहिये? इस आकाश के भीतर चार तत्व हैं। उसमें भी क्रम से वायु, अग्नि जल के भीतर पृथ्वी है और यह पार्थिव शरीर जिस जगह पर स्थित है वह स्थान भी एक खंड के एक शहर के एक घर के भीतर है। अब इसमें भी वृत्ति सब के भीतर है उसी वृत्ति को अंतर लक्ष्य कहा कि भीतर की तरफ करना तो अब विचारने का विषय है कि वृत्ति किस भीतर की वस्तु में लगे इसका स्पष्ट अर्थ राजयोगी ही कर सकते हैं कि वृत्ति का चैतन्याकार होना ही अंतर लक्ष्य शब्द का भावार्थ है, न कि शरीर में किसी ओर लगाना। क्योंकि वृत्ति की अपेक्षा (वृत्ति से) शरीर बाहिर कहा जाता है भीतर नहीं अर्थात् *वृत्ति का वृत्ति में लय ही राजयोग है।* वृत्ति से आगे

अंतर वो ही आत्मा है जिसके लिये वेद भी 'नेति नेति' कहते हैं। यहां तक वाणी, मन, वृत्ति की पहुंच है कि *वृत्ति में वृत्ति का लय होना ही परमधाम मोक्ष है।*

इसी उद्देश्य से सब ही कथन है। यम, नियम, सब ही यथेष्ट व्यवहार के अंतर और क्रम से एकान्त स्थान आसन आदि भी अंतर से अन्तर है। फिर इसी जगह आकर सबको विश्राम करना पड़ता है। यह परम योग तुझे भक्ति श्रद्धादि युक्त समझ कर ही कहा गया है। इसी प्रकार 'ऊंचा मूल नीची शाखा, ऊर्ध्व दृष्टि अधो दृष्टि और आवृत चक्षु' से भी वृत्ति का वृत्ति में ही ठहरना अभीष्ट है। इसी से आत्म लाभ है (अंतरादंतरं ज्ञेयं नारिकेल फलाम्बुवत्) इसी क्रम से भूत, भूत शुद्धि, पंच कोष आदि परमार्थ क्रम रखे हैं। कपिल गीता में भी अधिकारानुसार प्रणव पंचक के पांच प्रकार में पंच मही गम्य स्थान है, सिवाय वृत्ति के आश्रय

१ यथा—योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना ॥ श्रद्धा वान् लभतेयो माँ समेयुक्ततमोमतः ॥१॥ मुझ में वृत्ति को लय कर यह अंतरासनों का भाव ज्ञात होता है ॥

कर देना यही अंतर लक्ष्य का अर्थ है। अब कुछ अंतर और बहिर का अर्थ कहता हूँ जिससे यह विषय और भी स्पष्ट हो जावेगा। अंतर किसे कहना चाहिए? हे सुबुद्धे! व्यवहार के सब ही शब्दार्थ सापेक्ष हैं। तो भी स्थाली पुलाक न्याय से इसे ही तू समझ कि अंतर का अर्थ भीतर है। अब भीतर किस को कहना चाहिये? इस आकाश के भीतर चार तत्व हैं। उसमें भी क्रम से वायु, अग्नि जल के भीतर पृथ्वी है और यह पार्थिव शरीर जिस जगह पर स्थित है वह स्थान भी एक खंड के एक शहर के एक घर के भीतर है। अब इसमें भी वृत्ति सब के भीतर है उसी वृत्ति को अंतर लक्ष्य कहा कि भीतर की तरफ करना तो अब विचारने का विषय है कि वृत्ति किस भीतर की वस्तु में लगे इसका स्पष्ट अर्थ राजयोगी ही कर सकते हैं कि वृत्ति का चैतन्याकार होना ही अंतर लक्ष्य शब्द का भावार्थ है, न कि शरीर में किसी ओर लगाना। क्योंकि वृत्ति की अपेक्षा (वृत्ति से) शरीर बाहिर कहा जाता है भीतर नहीं अर्थात् *वृत्ति का वृत्ति में लय ही राजयोग है।* वृत्ति से आगे

अंतर वो ही आत्मा[1] है जिस के लिये वेद भी 'नेति नेति' कहते हैं। यहां तक वाणी, मन, वृत्ति की पहुंच है कि *वृत्ति में वृत्ति का लय होना ही परमधाम मोक्ष है।* इसी उद्देश्य से सब ही कथन है। यम, नियम, सब ही यथेष्ट व्यवहार के अंतर और क्रम से एकान्त स्थान आसन आदि भी अंतर से अन्तर है। फिर इसी जगह आकर सबको विश्राम करना पड़ता है। यह परम योग तुझे भक्ति श्रद्धादि युक्त समझ कर ही कहा गया है। इसी प्रकार 'ऊंचा मूल नीची शाखा, ऊर्ध्व दृष्टि अधो दृष्टि और आवृत चक्षु' से भी वृत्ति का वृत्ति में ही ठहरना अभीष्ट है। इसी से आत्म लाभ है (अंतरादंतरं ज्ञेयं नारिकेल फलाम्बुवत्) इसी क्रम से भूत, भूत शुद्धि, पंच कोष आदि परमार्थ क्रम रखे हैं। कपिल गीता में भी अधिकारानुसार प्रणव पंचक के पांच प्रकार में पंच मही गम्य स्थान है, सिवाय वृत्ति के आश्रय

---

१ यथा—योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना ॥ श्रद्धावान् लभतेयो मॉं समेयुक्ततमोमतः ॥१॥ मुझ में वृत्ति को लय कर यह अंतरासनों का भाव ज्ञात होता है ॥

कुछ कहा नहीं जाता और प्रकृति का लय जहाँ होवे वहाँ आत्मा है। यथा (चल चित्तं भवेच्छक्तिः स्थिरचित्तं भवेच्छिवः) (चल चित्त शक्ति और स्थिर चित्त शिव होता है) यहाँ चल चित्त में स्थिर चित्त होना ही अंतर लक्ष्य और चल चित्त ही वर्हिदृष्टि है अर्थात् चल चित्त से स्थिर चित्त का अनुसंधान करना ही अंतर लक्ष्य वर्हिदृष्टि का अर्थ होवेगा। चल चित्त है सो क्या है, कि यही चैतन्य वृत्ति ही चित्त है ऐसा विचार सो भी चल चित्त अर्थात् वर्हिदृष्टि हुआ और इसी विचार से विचार का विचार करना बंद होकर स्थिर हो जाना ही अन्तर लक्ष्य हुआ। चेतन्याकार वृत्ति का करना अंतर लक्ष्य वर्हिदृष्टि हुआ, चैतन्य ही वृत्ति के भीतर लक्ष्य है और उसका (वृत्ति का) उधर करने का अभ्यास ही बहीर्दृष्टि है अर्थात् चिदाकार वृत्ति को करना ही उक्त मंत्रों का अर्थ है— इस उपरोक्त कथन को ही अनेक महात्माओं ने आज्ञा किया है। यथा (अंतर लक्ष्य विहीनस्य वर्हिलक्ष्यं निरर्थकम्) (अंतर लक्ष्य रहित के बाहिर का लक्ष्य व्यर्थ है) (चक्षुर्दृष्टे साक्षिभागोप्यवलोकनतत्परं प्रकाशते स्वयं ज्योतिर्निरस्त

तत्र पश्यतु) (चक्षु की जो दृष्टि उसका साक्षी भाग जो देखने वाला द्रष्टा है जो स्वयं प्रकाश स्वरूप है उस ही को मनुष्य वहां देखे) इस प्रकार का कपिल गीता में यह अच्छी तरह कहा गया है। फिर कुछ संतों के वचन सुन बुन्नाशाह अपनी सी हरफो में आज्ञा करते हैं कि:"चे चानणा सर्व जिहान दातू, तेरे आसरे होइ विवहार सारा। "होइ सभन की आखमो देखदा है तुझे सूझता चानणा और अंधारा" अर्थ—सब जिहान का तूही चानणा (प्रकाश) है तेरे ही आसरे सब व्यवहार हो रहा है। सब की आँख में होकर तू ही देखता है। अंधकार और प्रकाश तुझे ही दीखता है।

फिर हरिदासजी आज्ञा करते हैं:—"सकली सकलां चे जीवन योगियाँ चे ध्येय धन। नयना चा निज नयन, प्रत्यक्षा कारज,, अर्थात् सब वही होकर सब का जीवन है, योगियों का ध्येय धन है और नेत्र का निज नेत्र है और प्रत्यक्षाकार है। फिर कहा है कि जो हृदयस्थ आतमा राम है उसका वाणी से क्या नाम कहूं, वहां अहंता का क्या काम है?

फिर कहा है कि (रूपं दृश्यं लोचनं दृग् दृग् दृश्यं दृगातु मान से दृश्याधीः साक्षयो वृतिः दृगे वनतु दृश्यते । कि रूप दिखता है, आँख उसकी दृष्टा है,

आँख दिखती है मन उसका देखने वाला है। मन दिखता है बुद्धि से, बुद्धि वृत्तियों से दिखती है परन्तु देखने वाला नहीं दिखता है यदि नहीं दिखता है तो होवेगा ही नहीं। इस का उत्तर यह है कि देखने वाला है, उसको देखने वाला कोई दूसरा होवे तो वह दीखे परन्तु उसको देखने वाला और कोई है नहीं और जो है सो सब दिखने वाला है। दृष्टा एक ही है। फिर ज्ञानेश्वर महाराज आज्ञा करते हैं कि:—"दीठी आपणी मुरडे ते दीठी पण ही मोडे, परी नाही नोंहे फुडे ते जाणे चिते"॥ इत्यादि कीदृष्टि जब अपनी (दृष्टि की) तरफ फिर कर देखती है। तो उसका दृष्टित्व ही नष्ट हो जाता है, परन्तु वह

(१)"न दृष्टुर्लोपो भवति"–भाव-देखने वाले को दृष्टि का लोप नहीं होता जब और नहीं दीखता तो अपने आपको ही देखता है। दृष्टा की दृष्टि का लोप नहीं होता। जानने वाले को किससे जाने आत्मा को देखना चाहिये, सुनना चाहिये। इन श्रुति वाक्यों का यह अभिप्राय है कि आत्मा को देखने वाला और कोई नहीं है ज्यों आँख को आँख ही देख सकती है अन्य नहीं।

है हा नहीं ऐसा नहीं हो सकता। क्योंकि वह स्वयं ज्ञान रूप है जैसे अति काला आदमी अंधेरे में खड़ा रहे तो वह दूसरे को भी नहीं दीखता और अपने आपको भी वह नहीं दीखता, तो भी उसे मैं हूँ ऐसा ज्ञान रहता ही है अर्थात् उसे यों भान नहीं होता कि मैं नहीं हूँ। ऐसा ही भान रहता है इत्यादि अनेक प्रमाण हैं। हे प्रिय! जिससे नेत्र भी साधक को देखते हैं वही नेत्र किस प्रकार से कहा जाय। जब साधक आपही अपने नेत्र को देखता है, वही देखने वाला, दृष्य-नेत्र नहीं हो सकता है। इसलिए तूँ स्थूल धारण का परित्याग करदे और अपने आप में स्थित हो जाय। श्रीज्ञानेश्वर महाराज आज्ञा करते हैं कि:—"दर्पणे वीण डोला आपणे भेटिव साहेला इत्यादि कि बिना ही दर्पण के जो अपनी ही आँख से अपने को ही मिल जाता है, देखता है, वही आत्मा है। हे सौम्य? यह हृदय स्थान और आत्मा मनुष्य मात्र को प्रत्यक्ष है तो भी साधन तथा गुरु कृपा बिना अप्राप्त ही सा रह जाता है। जब मनुष्य परस्पर मिले तब प्रथम हृदय ही प्राप्त होता है। अथवा यह परम उत्तम उपदेश तुझे हृदयस्थ आत्म

प्राप्ति के अर्थ करता हूँ सो तूँ ध्यान सहित श्रवण कर कि जब तूँ दर्पण में एक एक करके सब अङ्ग को देखे तो और जहाँ आकर देखना रुक जाय वही आत्मा है। जैसे कुलीन स्त्री को अपने पति का नाम पूछने पर वह चुप हो जाती है। इसी प्रकार जहाँ तेरी वृत्ति अपने आपही में लय हो जावे यही परमात्मा देव मायापति भगवान् हैं। यही बात संक्षेप में इस दोहे में आगई है:—

"दृष्टा दृष्य विलोरिके, दृष्टी देख गुमान।
रामही दृष्टा दृष्टि को, सो तू लेहि पिछान॥"

शिष्य—हे सगुण ब्रह्म योगीश! यह परम उपदेश सुन कर मुझे परमानंद होता है, अब थोड़े संदेह रह गये, उनका भी संक्षेप से उत्तर दीजिये दक्षिण वाम भेद हृदय स्थान में क्यों कहा गया?

गुरु—चित्त की एकाग्रता के लिए यह मुख्य मार्ग है। यही उत्तरायण के नाम से प्रसिद्ध है और वाम दक्षिणायन के नाम से कहा गया है जिससे पुनरावृत्ति कही गई है। परन्तु उपरोक्त केवल चैतन्याकारता वृत्ति का करना, इनक्रम गति और पुनरावृत्ति को त्याग कर तत्क्षण ब्रह्माकार हो जाता है। दोनों को एक ही समझ कर केवल

चैतन्याकार होना ही तुझे ऊपर कहा है। दोनों एक किस प्रकार हैं ? इस पर श्री ज्ञानेश्वर महाराज के वचन श्रवण योग्य हैं यथाः—

ति दों हों फुली एकी वृत्ति"

इत्यादि अर्थः—जैसे "अः" ये "अ" के आगे दो बिन्दी दिखती हैं तो भी उच्चारण एक ही होता है, दो गुलाब के पुष्पों में सुगन्ध एक ही होती है, दो दीपक का प्रकाश एक होता है और दो होठों का एक ही शब्द होता है। जैसे दोनों आँखों की दृष्टि एक ही होती है वैसे ही ज्ञान दृष्टि से वह एक ही है।

शिष्य—महाराज ! आत्म लाभ के लिए हृदय स्थान को ही मुख्यता क्यों है ?

गुरु—राजा की प्राप्ति के लिए राजद्वार चंद्र दर्शन के लिए वृक्षाग्र और शरीर की स्थिति जानने के लिए दक्षिण हस्त की नाड़ी की जैसे मुख्यता है, वैसे ही।

शिष्य—राज दर्शन के लिए भी महल में अनेक ड्योढ़ियां होती हैं, चंद्रदर्शन के लिए भी बादल, महल, पर्वत आदि हैं और शरीर की स्थिति

नेत्र, छाती आदि से भी ज्ञात होता है। त्यों हृदय से ही आत्मा लाभ कैसे ?

गुरु—आत्म-लाभ अनेक प्रकार से कहा गया है। छांदोग्य में चार द्वार बताये हैं। परन्तु मुख्यता इसी हृदय स्थान की यों कहीं है, कि यहां ज्ञान की प्राप्ति साक्षात् है अन्यत्र परंपरा से है। ज्यों शब्द का आघात होने से उसकी लहरें कान में आकर जब टक्कर खाती हैं तब शब्द ज्ञान होता है। यों हृदय स्थान में परंपरा ज्ञान नहीं है परन्तु साक्षात् ज्ञान है। यह तो प्रत्यक्ष ही है (कंटकाग्रं कृतंकेन) कपिल गीता में कहा है कि कंटक के अग्र को तीक्ष्ण किसने किया। सिंह में पराक्रम, मयूर में नृत्य किसने किया। आप ही से है। यों ही आत्मस्थान यह हृदय स्वभाविक है इसी लिए प्रगट रक्खा गया है और मनुष्य की स्वभाविक ही प्रथम दृष्टि इधर हो जाती है। परन्तु अज्ञानी यह बात नहीं समझते। लोकोक्ति है कि "जुगत-मुगत" सो यही जुगत से इसी जगह (मुगत)

१ जैसे सब शरीर तुल्य होने पर भी आत्म लाभ के लिए मनुष्य शरीर ही मुख्य माना गया है त्योंही सब द्वारों में आत्म लाभ के लिए श्रुति में इस की मुख्यता कही है।

(मुक्ति) मिल जाती है। परन्तु तूं इस स्थान ही में मत दृढ़ हो। स्थान तो स्थूल है। इतनी प्रशंसा इसकी परब्रह्म के विराजने का आसन होने से कही गई है।

शिष्य—इस सूक्ष्म हृदय में अनेक ब्रह्म किस प्रकार हैं?

गुरु—हे सौम्य—जिस प्रकार झीने झरोखे से सूर्य का प्रकाश भी झीना (सूक्ष्म) ज्ञात होता है, उसी प्रकार इतने बड़े शरीर में सूक्ष्म हृदय जितना छोटा है उसी प्रकार जिस आत्मा का सूक्ष्म हृदय ही शरीर है वह कितना बारीक होगा, परन्तु महान् घन अंधकार में जब थोड़ा सा भी झरोखे से प्रकाश आता है तब उस अंधकार से दबता नहीं प्रत्युत विशेष शोभायमान होता है। उसी प्रकार अनन्त ज्ञान-स्वरूप ब्रह्म हृदय से ज्ञान-स्वरूप होकर अखिल ब्रह्माण्ड को प्रत्यक्ष कराता है। जो कोई इस प्रकाश का अवलँबन कर अंधेरे रूपी अज्ञान से निकल जावे वह प्रकाश हो प्रकाश अनन्त प्रकाश मय हो जाता है। हे प्रिय! इसी ज्ञान-स्वरूप ब्रह्म को प्रजा पति ने सुरपति के लिए कहा। परन्तु स्थूलवृत्ति से वे नहीं समझ सके। तब

घट शराव में इसी का साक्षात्कार कराया। परन्तु ता भी जब स्थूल ही को ब्रह्म समझा। तब प्रजापति ने उन्हें विभूषित होकर घट शराव में देखने को कहा इससे यही अभीप्राय है कि शरीर के विकार सुरूप-कुरूप जिससे जाने जाते हैं वही ज्ञान-स्वरूप साक्षी सच्चिदानन्द आत्मा है। फिर भी स्थूलवृत्ति के कारण उन्हें ज्ञान न हुआ तो क्रम से स्वप्न द्रष्टा कह कर सुषुप्ति को द्रष्टा कहा फिर वही पुर्वोक्त ज्ञान स्वरूप अपना आप कह कर समझाया इस लिए तूँ भी स्थूलता छोड़ अपने को ही प्रत्यक्ष कर।

शिष्य—उसका क्या नाम है और कैसा रूप है ?

गुरु—उसके नाम रूप कुछ नहीं होकर भी नाम रूप का वही आधार है। यह अपने उपासक को अनेक रूप और नाम से दर्शन होता है। उसके नाम रूप को वही कह सकता है। दूसरा नहीं परन्तु जो आत्मा से कोई पूछे कि आपका क्या नाम है ? तो वे यही उत्तर देवें कि लोक में मुझे अहं नाम से ही मैं प्रसिद्ध करता हूँ। जैसे मनुष्य नाम का वाची मनुष्य है उसी तरह अहं (मैं) नाम का अर्थ मैं ही हूँ।

शिष्य—महाराज! हृदय स्थान का कथन श्री मद्भगवतगीता में तो नहीं है।

हे सौम्य गीताजी में इसको बहुत सा कहा है (सर्व-द्वाराणि संयम्य) गुरु आदिक परन्तु मूरख यह रहस्य नहीं समझते और रहस्य कहना वेदाज्ञा नहीं है। ये सेन ही संकेत कर दिया है। समझने में गुरु कृपा से हीआता है। और मुख्य आत्मा का तो यथार्थ वर्णन है ही। जब अर्जुन को उक्त ज्ञान विस्मरण हो गया तब अनु-गीता में क्रम से कुछ यह वर्णन किया है परन्तु इस में और गीता में एक ही बात है। यह कपिल गीता में भी लिखा है कि श्री कृष्ण ने अर्जुन को यही तत्व उपदेश किया। इसलिए बिना डाली के चंद्र को ही देखने से वह चंद्र दूसरा नहीं होता। प्रयोजन उक्त चैतन्य आत्मा से ही है। जो अहं शब्द का जीव है अर्थात् "अहं" कि जिसने कुछ भी जगह बाकी न छोड़ी अर्थात् "अहं" को मिटाकर आपही रह गया जैसे लवण को व्याप्त होकर जल ही रह जाता है। तू सहज विचार यही रख कि मैं प्रभु का हूँ परन्तु मुझसे मेरा कुछ भी नहीं है सब उसी का है।

शिष्य—यह तो आप सर्वत्र आज्ञा करते हैं फिर अहं मैं ही क्यों ?

गुरु—सब वृत्ति चंचल है और वृत्ति स्थिर न होने से स्थिर जल में चंद्र बिम्बवत् साक्षात्कार हो जाता है । जब तू दृढता से यह साधन करेगा तो तुझे अपने ही में सब प्रत्यक्ष दीखने लगेंगे, अथवा अभी जो कुछ दीख रहा है, सुन रहा है, विचार रहा है निश्चय कर रहा वह भी तेरे ही में नहीं तो किसमें दीखते हैं ।

शिष्य—हे उदार प्रभो ! आपकी कृपा से ऐसे सरल उत्तम उपदेश को आज प्राप्त होकर मेरा मनुष्य जन्म सफल हुवा । अहो जिसके लिए महस्त्रों कष्ट उठाने पर भी नहीं प्राप्त होता वही केवल (अनुसंधानमात्रेण योगोयं सिद्धि दायकः) विचार करते ही प्राप्त हो जाता है । हे प्रभो!! मैं धन्य हूँ कि ऐसे गुरु मुझे प्राप्त हुए ।

कवित्त

कोऊ गुरुताई ले महा ही सिद्ध राजा बने,
कोऊ पंडिताई ते बड़ाई दरसा वे है ।
कोऊ सब दीसत सो कहै जगदीशरूप,
कोऊ खट चक्कर में चक्कर ही खावे हैं ।

कोऊ जप जाग जोग दान व्रत नेम कहे,
कोऊ इन्हीं को लागि वाम पंथ जावे है।
कोर कृपा ताकनते पुण्य परिपाकन ते,
लाखन में कोऊ ईश आँख न दिखावे हैं।

॥ इति सर्वमत संमत वेदान्त वेद्य हृदय रहस्य समाप्तम् ॥

श्रीगुरु चरण कमलार्पणमस्तु

शुद्धाशुद्धि-पत्र

पानारी	ओल में	है	चावे
१	२०	ततो ततो	ततस्ततो
२	८	आन्दकारी	आनन्दकारी
३	५	ब्रह्मचारी उत्तम	उत्तम ब्रह्मचारी
४	५	इकतरी	इकतारी
,,	१७	पीया	पीपा
१२	२	त्रिभुवान	त्रिभुवन
१३	४	कणिका	कणिका रो
१५	१०	ब्राह्मण	ब्रह्मांड
१५	२०	पद्वारो	पद्वारी
१९	६	व्है	है तो दुःख नी व्है'
२०	८	नी	०
२२	९	लोम	लोभ
२५	२	है ।	है, ने नीं थांचूं यो भी
		कृष्ण चिन्ह	श्री कृष्ण है ।
२७	१५		कृष्ण चन्द्र
२८	१८	कन	तक
२९	७	नादत युष्मदृम	नादन युष्मदंमयः
३१	३	माने	लाने
,,	४	शयन	सपन
३२	१५	गमन	गम्य

३२	१६	शास्त्र	शास्त्र
"	१९	योगरो तुक	योगरो कौतुक
३४	४	जहीं	वही
३८	२१	ग्रूँजों	जाँग्रूँ
३९	१२	स्तद्वृत्तयः	स्तद्वृत्तयः
४४	४	म	मैं
४५	१५	आया	आपाँ
४८	१२	वन्दा	वन्दो
५३	११	वित्तयपा	वित्तपा
५९	१०	गणणों	गणणा
६२	९	रिज,	रिजम
६४	७	ग्हीं'	हीज
७०	४	निरवयव	निरवयव
७१	१८	पणि	पण
७४	२०	जाहि	जोही
७५	२०	सपनेहु	सपनेहु
७७	१०	रा	गो
८०	७	हृदयेन	हृदयेन
"	११	न्यार	न्यारा
८१	१९	प्रकृत	प्राकृत
८४	२०	मा	नी
८७	८	मगव्य	मनव्य
८८	९	यहारा	यहारो
८९	१५	ईश्वरेच्छा	ईश्वरेच्छा
९०	१३	सच्चिदानन्द, पग	सच्चिदानंद पने
९५	३	आगम	आतप

९७	१९	लोक इमं	लोकमिमं
९९	१८	शोक	शोख
”	१९	शोक	शोख
१००	२	शोक	शोख
१०४	९	अन्तर बहिः	अन्तर्बहिः
१०५	१३	महरसा	मदरसा
१०८	३	तन	मन
”	९९	त्याज्वो स च्	त्याज्यःश्च
”	२०	आय	आप
”	२०	बद्धि	बुद्धि
१०९	१३	वासना (ठे'राव) नी	वास ना (ठे' राव,नी)
१११	१०	साख्य	सांख्य
११२	१४	यँ	यूँ
१३१	१	है	व्हे'
१४४	१९	शरीर	शरीर
१४५	१६	ऊँघ्या	ऊँघ्या
१४९	१९	क्यों	क्यूँ
१५४	९	रणो गुणी	रजोगुणी
१५७	१८	विचा	विचारणो
१८७	१९	प्रणाम	प्रमाण
१९१	९	प्रवणो	प्रणवो
१९२	२	नी	ही
१९९	१९	ना व्हियो सा	नी व्हियो सो
२०३	१२	मेल	मे' ल
२०३	२१	निश्चय	निश्चय
२०५	१९	तारथ	तीरथ

२०९	१२	विचार——र्	विचार है, ईश्वर्
२१३	३	कैस	कैसे
२१६	३	पे	पे
२२१	९	न	ने
२२२	५	वैठाँ	वैठाँ
२४२	९	तीन हुँ	तिनहूँ
२४५	१९	रज	राजा
२४६	१६	हा	ही
,,	१७	भाववो	भाव थो
२४७	२०	व्यतितरेक	व्यतिरेक
२४९	४	हा	ही
२५५	८	सवपु	सर्वपु
२५६	१०	क्यो	कियो
२५८	८	मर्नसो	मंनसो
२५९	७	गुणवा	गुणवा
,,	१७	महा	बाह्य
२६८	१७	शुक	शुक
२६९	१२	रोवे	व्हेवे
२७२	१०	हलि	हाली
२७५	५	आपने	आयने
२८८	७	वनगी	बनेगी
२९२	१६	विसुद्य	विमुह्य
,,	१८	कल्य	कल्प
२९४	६	जदा	जद
२९५	४	आर	और
२९८	१	रसाह	रसोदह

३०२	२१	मखां	मूखां
३११	६	दव	देवे
,,	९	ह	है
,,	१२	तन	तने
,,	१३	सुरजा	सुरजी
,,	१४	म ह	माहे
,,	१५	म	में
	१६	मौन	भौन
३१२	१	नट	नटे
,,	११	कृष्णापण	कृष्णार्पण
३१२	१७	सु—	सुख
३१९	१७	राज म जो भत	राजमें जो भतरा
३२५	८	पशु	प्रभु
३३६	७	ज्यों ज्यों	जो जो
३४५	१५	प्रतिवादन	प्रतिपादन
३४७	५	शंसति	शंससि
,,	१२	क्लेशोऽधिकतम	क्लेशोधिकतर
३४९	१६	पूवक	पूर्वक
३६३	१२	अभ्याभ	अभ्यास
३६७	३	सुमुक्ष	मुमुक्षु
३८२	११	सुमुक्ष	मुमुक्षु
३९३	१३	ने	में
,,	,,	पाय	उपाय
३९४	२१	स्थर	स्थिर
३९९	१४	चाणियम्	चाप्रियम्
,,	१६	कहदा	कहदो

३९९	१९	साध	साधे
४०३	१०	चिरानन्द	निरानन्द
४०६	९	सर्वस्व	सर्वस्य
४११	१३	गह	गहि
४१५	१३	इष्टे विपरा	......
,,	१५	ह	है
४१७	४	जस	जैसे
४१८	१२	जाण	जाणे
४२२	१७	भृत	मृत
४२३	१०	ध्याना	ध्यात्वा
,,	१४	कमेणा	क्रमेणा
,,	२१	ह	है
४२६	१६		म्हैं
४३१	६	शिष्य	शिष्य
४३३	२२	धारणाम	धारणम्
४३४	३	अयकसमनैएक	एकमें
४३६	८	कुडाणो	कुड़णो
४३८	२०	सवं	सर्व
४३९	१८	निष्टतं	तिष्टंत
४४३	१०	व्यापाश्रिन्य	व्यपाश्रित्य
४५१	२	अपणी	आपणी

अनुभव-प्रकाश

१	४	वा	थी
४	१२	ढांक्यो	ढंक्यो

हृदय-रहस्य

समर्पण में	१३	दशन	दर्शन
१२	१०	सूम	सूक्ष्म
१३	७	हृदय	हृदय
,,	१३	,,	,,
२५	५	बुला	बुल्ला
२७	१	हा	ही
३२	२	शराव	शराव
,,	१५	होता है	देता है